रिपोर्टर

निमाई भट्टाचार्य/ **रिपोर्टर**



पुस्तक पढ़ने के मेरे अभिभावक
श्री शचीन्द्र नाथ मुखोपाध्याय
और भाभी जी को !

—निमाई

रिपोर्टर

उन्नीस सौ तोस में गांधी जी की पुकार पर सारे देश में कानून भंग का आन्दोलन छिड़ गया। वज्रमुष्टि जाति ने अंग्रेजों को भारत छोड़ने की तैयारी करने का संकेत किया। गांधी जी के इस निमंत्रण को अंग्रेज सरकार ने स्वीकार कर लिया था। 'एटिकेट' और 'मैनर्स' के बादशाह अंग्रेजों ने खाली हाथ ही निमंत्रण की रक्षा नहीं की थी, हिन्दुस्तानियों को बुलेट दिया था; बहुतों की मेजबानी करने के लिए जेल के सींखचों में बन्द कर दिया था। उस दिन की बात आज किस्सा-कहानी जैसी लगती है, हिन्दुस्तान के बाशिन्दे इसे भूलते जा रहे हैं।

सुनने में आया है, इस आन्दोलन के समय बन्दविला ग्राम ने स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी थी। चरखे से शोभित तिरंगा झण्डा फहराकर इस पूर्व बंगाल के नगण्य गांव में राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की गयी थी। उस ग्राम केन्द्रिक राष्ट्रीय सरकार ने राजस्व की वसूली से लेकर डाक-डिकट तक बेचना शुरू कर दिया था। कुछ दिनों तक वन्दे मातरम् ध्वनि से मुखरित उस आनन्दमय क्षुद्र ग्राम ने दिल्ली मसनद तक को अंगूठा दिखा दिया था। लेकिन ऐसा कुछ दिनों के लिए ही हुआ। ···अचानक एक दिन सूरज उगते न उगते बन्दविला के चारों ओर अंग्रेज सेना और देशी पुलिस आ धमकी। आजादी के दीवाने मुट्ठी-भर निहत्ये गांव के औरत-मर्द बच्चों पर लाठी और बुलेट से आक्रमण किया गया। उन्मत्त सैनिकों ने पुआल के घरों में आग लगा दी। प्रभात-काल में

सूरज के रक्तिम प्रकाश को मलिन बनाकर उस आग की विनाशकारी लपलपाती जिह्वा ने आधे गाँव को अपने आलिंगन में भर लिया। इतना ही नहीं, भोजन के बाद जिस तरह भोजन-दक्षिणा दी जाती है उस तरह वन्दविला में वास करने वाली युवती और प्रौढ़ाओं के भाग्य में कुछ और ही वदा था। अतिथियों के लाड़-प्यार के कारण वहुतों के शरीर से रक्त का फव्वारा चलने लगा था; हमारी निष्पाप-निष्कलंक मातृ-जाति के शोणित से वन्दविला की काली माटी लाल हो गयी थी।

कई घण्टों के वाद यह खेल समाप्त हुआ। लेकिन दुवारा जब वन्दे मातरम् ध्वनि सुनाई पड़ी तो सूर्य माथे पर आ चुका था। जगन्नाथ डाक्टर छुरी-कैंची से नेपुदा के कंधे से वुलेट वाहर निकाल कर जव पट्टी वाँधने लगे तो सूर्य पश्चिम की ओर तनिक झुक चुका था।

कांग्रेस ऑफ़िस के वरामदे पर बैठ कर नेपुदा उसके वाद की कहानी कहने के पूर्व फफक-फफक कर रो पड़ा। फटे कुरते से आँखों के आँसू पोंछते हुए कहा था, "दुनिया में अपना आदमी कहने के लिए सिर्फ़ मेरी माँ ही थी। माँ मुझे रख कर सोलह या सत्रह साल की उम्र में विधवा हुई थीं। लेकिन जव मुझे होश आया तो घर आने पर देखा, माँ सफ़ेद विना किनारे की साड़ी उतार लाल छपी साड़ी पहने, वरामदे पर लेटी है। वाद में समझ में आया कि माँ की सफ़ेद विना किनारी की साड़ी किस तरह लाल हो गयी थी।

मुझे यह समझ में नहीं आया कि सफ़ेद विना किनारे की साड़ी के वाद लाल सफ़ेद साड़ी पहनने से नेपुदा के लिए दुख करने की कौन-सी वात है। मैंने अचकचा कर उसके चेहरे की ओर देखा। शायद मेरी दृष्टि से ही मेरे मन का प्रश्न झाँक गया। नेपुदा ने मुझे गले से लगा कर कहा, "वच्चू, अभी तुम छोटे हो। वड़े हो जाओगे तव मेरा दुख तुम्हारी समझ में आयेगा।"

इसके वाद नेपुदा का पैतृक मकान कांग्रेस ऑफ़िस और ससुराल जेलखाना हो गया। पैतृक मकान में काम का कोई ओर-छोर नहीं था,

किसी दिन दो मुट्ठी अनाज नसीब होता था और किसी दिन नहीं होता था। मगर ससुराल मे दामाद के आहार-विहार, यहाँ तक कि प्रहार में भी कोई त्रुटि नहीं की जाती थी।

नेपुदा कभी लीडर नहीं रहे। किसी सभा-समिति में उन्हें भाषण देते नहीं देखा था। लेकिन नेपुदा न होते तो कांग्रेस की कोई मीटिंग ही नहीं होती थी। छिपकली की तेज़ निगाह से बचकर कांग्रेस कमेटी की गोपनीय मिटिंग होगी तो इसका इन्तजाम कौन करेगा? नेपुदा। पुलिस की नाक के सामने कोतवाली के मैदान में १४४ धारा का उल्लंघन कर स्वाधीनता दिवस की मीटिंग होगी, इसकी व्यवस्था कौन करेगा तो नेपुदा। गुप्त संस्था के कार्यकर्त्ताओं के हाथ में कुछ रुपया-पैसा पहुँचाना है तो यह काम भी नेपुदा को करना है। नेपुदा कांग्रेस ऑफिस के सर्व-सर्वा नहीं थे मगर कांग्रेस के हर काम में मुस्तैद जरूर रहते थे। इसके अलावा उस समय आज की तरह कांग्रेस ऑफिस में देश प्रेमिकों की भरमार भी नहीं थी।

लगभग पाँच हज़ार छात्रों से साथ हड़ताल करने के बाद मैंने जब देश-सेवा की शुरुआत की, उसी समय पहले-पहल नेपुदा के संपर्क में आया। नेपुदा आठ-दस स्कूल के लड़के-बच्चों की हड़ताल कराकर सब का जुलूस एक साथ लिए म्युनिसिपैलिटी के मैदान में आता था। अपने स्कूल के आशिसदा, विमलदा, टाउन स्कूल के कनकदा और मोडर्न स्कूल के मुखमयदा जैसे उस्तादों को नेपुदा की बात पर उठते-बैठते देख-कर मेरे होश गुम हो जाते थे। मेरे कैशोर मन के अपरिपक्व मन ने नेपुदा के ऊँचे दर्जे के नेता के रूप में कल्पना कर ली थी। बड़े-बड़े नेताओं को नेपुदा को गले से लगाकर प्यार करते जब देखता तो मैं आश्चर्य चकित हो जाता था।

उम्र बढ़ने पर मेरी समझ में यह बात आयी कि नेपुदा लीडर नहीं, स्वयं सेवक है। उसे बस काम मिलना चाहिए—देश का काम, कांग्रेस का काम। उस काम के साथ मँहगाई के भत्ते की बढ़ोतरी या टैक्सी के

सूरज के रक्तिम प्रकाश को मलिन बनाकर उस आग की विनाश-
कारी लपलपाती जिह्वा ने आधे गाँव को अपने आलिंगन में भर लिया।
इतना ही नहीं, भोजन के बाद जिस तरह भोजन-दक्षिणा दी जाती है
उस तरह वन्दविला में वास करने वाली युवती और प्रौढ़ाओं के भाग्य
में कुछ और ही वदा था। अतिथियों के लाड़-प्यार के कारण बहुतों के
शरीर से रक्त का फव्वारा चलने लगा था; हमारी निष्पाप-निष्कलं
मातृ-जाति के शोणित से वन्दविला की काली माटी लाल हो गयी थी

कई घण्टों के बाद यह खेल समाप्त हुआ। लेकिन दुबारा जब व
मातरम् ध्वनि सुनाई पड़ी तो सूर्य माथे पर आ चुका था। जगन्नाथ
डाक्टर छुरी-कैंची से नेपुदा के कंधे से बुलेट बाहर निकाल कर जब
पट्टी बाँधने लगे तो सूर्य पश्चिम की ओर तनिक झुक चुका था।

कांग्रेस ऑफ़िस के वरामदे पर वैठ कर नेपुदा उसके बाद की कहानी
कहने के पूर्व फफक-फफक कर रो पड़ा। फटे कुरते से आँखों के आँसू
पोंछते हुए कहा था, "दुनिया में अपना आदमी कहने के लिए सिर्फ़ मेरी
माँ ही थी। माँ मुझे रख कर सोलह या सत्रह साल की उम्र में विधव
–ई थीं। लेकिन जव मुझे होश आया तो घर आने पर देखा, माँ सफ़े
ना किनारे की साड़ी उतार लाल छपी साड़ी पहने, बरामदे पर ले
। वाद में समझ में आया कि माँ की सफ़ेद बिना किनारी की सा
कस तरह लाल हो गयी थी।

मुझे यह समझ में नहीं आया कि सफ़ेद बिना किनारे की साड़ी
वाद लाल सफ़ेद साड़ी पहनने से नेपुदा के लिए दुख करने की कौन
वात है। मैंने अचकचा कर उसके चेहरे की ओर देखा। शायद
दृष्टि से ही मेरे मन का प्रश्न झाँक गया। नेपुदा ने मुझे गले से
कर कहा, "वच्चू, अभी तुम छोटे हो। बड़े हो जाओगे तव मेरा
तुम्हारी समझ में आयेगा।"

इसके बाद नेपुदा का पैतृक मकान कांग्रेस ऑफ़िस और स
जेलखाना हो गया। पैतृक मकान में काम का कोई ओर-छोर न

किसी दिन दो मुट्ठी अनाज नसीब होता था और किसी दिन नहीं होता था। मगर ससुराल में दामाद के आहार-विहार, यहाँ तक कि प्रहार में भी कोई त्रुटि नहीं की जाती थी।

नेपुदा कभी लीडर नहीं रहे। किसी सभा-समिति में उन्हें भाषण देते नहीं देखा था। लेकिन नेपुदा न होते तो कांग्रेस की कोई मीटिंग हो नहीं होती थी। छिपकली की तेज़ निगाह से बचकर कांग्रेस कमेटी की गोपनीय मिटिंग होगी तो इसका इन्तजाम कौन करेगा? नेपुदा। पुलिस की नाक के सामने कोतवाली के मैदान में १४४ धारा का उल्लंघन कर स्वाधीनता दिवस की मीटिंग होगी, इसकी व्यवस्था कौन करेगा तो नेपुदा। गुप्त संस्था के कार्यकर्त्ताओं के हाथ में कुछ रुपया-पैसा पहुँचाना है तो यह काम भी नेपुदा को करना है। नेपुदा कांग्रेस ऑफिस के सर्व-सर्वा नहीं थे मगर कांग्रेस के हर काम में मुस्तैद जरूर रहते थे। इसके अलावा उस समय आज की तरह कांग्रेस ऑफिस में देश प्रेमिकों की भरमार भी नहीं थी।

लगभग पांच हजार छात्रों के साथ हड़ताल करने के बाद मैंने जब देश-सेवा की शुरुआत की, उसी समय पहले-पहल नेपुदा के संपर्क में आया। नेपुदा आठ-दस स्कूल के लड़के-बच्चों को हड़ताल कराकर सब का जुलूस एक साथ लिए म्युनिसिपैलिटी के मैदान में आता था। अपने स्कूल के आशिसदा, विमलदा, टाउन स्कूल के कनकदा और मोडर्न स्कूल के सुखमयदा जैसे उस्तादों को नेपुदा की बात पर उठते-बैठते देख-कर मेरे होश गुम हो जाते थे। मेरे कैशोर मन के अपरिपक्व मन ने नेपुदा के ऊँचे दर्जे के नेता के रूप में कल्पना कर ली थी। बड़े-बड़े नेताओं को नेपुदा को गले से लगाकर प्यार करते जब देखता तो मैं आश्चर्य चकित हो जाता था।

उम्र बढ़ने पर मेरी समझ में यह बात आयी कि नेपुदा लीडर नहीं, स्वयं सेवक है। उसे बस काम मिलना चाहिए—देश का काम, कांग्रेस का काम। उस काम के साथ मंहगाई के भत्ते की बढ़ोत्तरी या टैक्सी के

परमिट का प्रश्न जुड़ा नहीं था। थी तो केवल देश-माता की जंजीर तोड़ने की अदम्य कामना। मध्यवित्त घर में पैदा होने के वावजूद नेपुदा की उस कठोर साधना से मैं उस कच्ची उम्र में अवाक् हो जाता था। गरमी के दिनों में नेपुदा के वदन पर खादी का फटा कुरता और पाजामा रहता था। माघ की सरदियों में जवाहर वण्डी, ब्रेकफास्ट, लंच या डिनर के तौर पर दिन ढलने पर एक ही साथ एक हाँड़ी खिचड़ी पकायी जाती थी। खिचड़ी पक कर तैयार हो कि इसके पहले ही नेपुदा केले का पत्ता विछाकर वैठ जाता था। उसके वाद दो-चार मिनटों में ही उस महार्घ खिचड़ी को खाकर नेपुदा उठकर खड़ा हो जाता था। कच्ची उम्र रहने के वावजूद मेरी समझ में आ जाता कि उस खिचड़ी से नेपुदा का पेट नहीं भरा है, मगर ऐसा होने पर भी वह चेहरे पर हँसी लेकर उठ कर खड़ा हो जाता था। मैं हैरत में आकर सोचने लगता था। सोचता, जाने किस मंत्र के वल नेपुदा जैसे लोग फटी-पुरानी खादी के नीचे इतनी कामनाओं को छिपाकर रख लेते हैं! और आज? आज साफ़-सुथरे खद्दर के नीचे कितना वैभव छिपा हुआ है! खैर, यह वात रहे।

जो लोग कांग्रेस के लीडर थे उनसे मुझे कोई सहारा नहीं मिलता था। इसलिए स्कूल की हड़ताल और नेपुदा की मुसाहवी से ही मैं संतुष्ट रहता था। वदले में नेपुदा भी मुझे प्यार करता था। जब कुछ साल इसी तरह वीत गये तो समझ में आया कि मैं नेपुदा से प्रेम करने लगा हूँ। मुझे यह अहसास होने लगा कि मैं नेपुदा के आत्म-त्याग पर मुग्ध हो गया हूँ, उसकी निःस्वार्थ देश-सेवा के कारण मैं उसे श्रद्धा की दृष्टि से देखने लगा हूँ। सवके अनजाने ही हमारे वीच प्रीति का एक संपर्क स्थापित हो गया है। उसके वाद?

उसके वाद इतिहास ने आँधी की तरह एक नया मोड़ लिया। वयालीस के आन्दोलन, तैंतालीस के मन्वन्तर और छियालीस के दंगे के वाद वंगाल का दो हिस्सों में विभाजन हो गया। आइ० सी० एस० अन्नदा शंकर ने लिखा: "तेल की शीशी टूटने पर लोग जिस तरह बच्चों

पर झल्ला उठते हैं, उसी तरह बूढे बच्चों ने बंगाल को तोड़कर विभाजित कर दिया।" लाखों आदमी की तरह मैं भी इस धमाके से छिटक कर दूर फिक गया। बीते जीवन पर एक काला ड्रापसिन गिर पड़ा। सब कुछ खो गया और बदले में मिला सिर्फ संघर्ष कर जीवन जीने की तीव्र अनुभूति।

लगभग डेढ़ साल बाद की बात है। सवेरे ट्यूशन करके लौट रहा था तो टु ए बस में नेपुदा से मुलाकात हो गयी। होश-हवास खोकर हम दोनों आनन्द से चिल्ला उठे। बस में ठसाठस भरे लोग पेशानी पर बल लाकर हमारी ओर देखने लगे। दो-चार आदमी संभवतः हमें पूर्व बंगाल के रहने वाले सोचकर मुसकरा उठे थे।

ठनठने कालीतल्ला में उतर नेपुदा को अपने खंडहरनुमा डेरे पर ले आया। नेपुदा के सम्मान में खोका की दुकान से तेल के पकौड़े और दो चुक्कड़ चाय मँगवायी। पकौड़े खाने और चाय पीने के बाद धोती के छोर से हाथ पोंछते-पोंछते मैं नेपुदा को आत्म-जीवनी का तत्कालीन प्रचलित अध्याय भी बता गया। बहुत दिनों के बाद एक परम आत्मीय शुभैषी को पाकर तोशक के नीचे से एक सुप्रसिद्ध मासिक पत्रिका निकालकर गर्व के साथ अपनी साहित्य-सेवा का एक ज्वलन्त प्रमाण मैंने नेपुदा को दिखाया।

पलंग पर गोलाकार बंधे तोशक पर निढाल पड़ा नेपुदा एकाएक उठकर बैठ गया। नीले धागे की कड़वी-मीठी बीड़ी से मुख का एक जोरदार कश लेते हुए नेपुदा बोला, "बच्चू, अपनी रचना पढ़ जाओ।"

सांस रोककर मैं अपनी रचना पढ़ गया। नेपुदा की स्नेहिल आँखें मेरे किसी उद्यम की निन्दा नहीं करेंगी, यह बात मुझे मालूम थी। फिर भी उसकी प्रशंसा सुनकर मेरा मन खुशियों से झूम उठा। बहुत दिनों के बाद, बहुतेरे संघर्षों के बीच से गुजरकर जीवित रहने के आनंद का मुझे वास्तविक स्वाद प्राप्त हुआ।

अंग्रेजी में कहावत है, मिसफॉरचुन नेवर कम्स एलोन। मुझे

ाग्य भी कभी अकेला नहीं आता। अगर इसमें सच्चाई नहीं है
र नेपुदा से मेरी मुलाकात ही क्यों होती और अगर होती भी तो
से दैनिक संवाद, के संपादक से परिचय करा देने का वचन ही
ता ? नेपुदा ने मुझसे कहा था, 'दैनिक संवाद' के संपादक हरि-
न बाबू उसके खास मित्र हैं और एक लंबे अरसे तक राजनीतिक
कर्मी रहे हैं। इस बात पर विश्वास नहीं करूँ, ऐसा कोई कारण नहीं
रहा था। लेकिन मन ही मन अविश्वास हो रहा था, वह क्या मुझे
बने का सुयोग प्रदान करेंगे ?

खोका की दुकान में और एक चुक्कड़ स्पेशल डब्ल हाफ़ पीकर उस
न नेपुदा वहाँ से चला गया। जाने के समय गली के नुक्कड़ पर
ड़ा होकर कह गया, "अगले बुधवार को तीसरे पहर घर पर रहना,
हरिसाधन के पास ले चलूँगा।"

बहुत दिन पहले 'डेविड कोपरफ़िल्ड' पढ़ाने के समय हेड मास्टर
सत्य बाबू अक्सर रवीन्द्रनाथ की एक पंक्ति कहा करते थे। आज मुझे
एकाएक वह पंक्ति याद आ गयी—दुख की बरसात में जैसे ही आँखों के
आँसू का बहना शुरू हुआ, वक्षस्थल के दरवाज़े पर तभी मित्र का रथ
आकर रुका।

मैंने खड़े-खड़े देखा, नेपुदा कार्नवालिस स्ट्रीट की भीड़ में खो गया।
मैं खाली हाथ घर लौट आया। जगते हुए सपना देखा····रोटरी मशीन
से अखबार छप रहा है। जिस तरह जाग्रत देवता के चरणों पर अन-
गिनत लोग माथा टेकते हैं, उसी तरह रोटरी मशीन के चरणों के नीचे
हज़ारों अख़बार लोट रहे हैं। हवाई जहाज़, रेलगाड़ी और मोटर से वह
अख़बार देश-देशान्तर जा रहा है, हॉकर साइकिल पर अख़बार का ढेर
लिए राह-बाट, शहर-नगर में चीत्कार कर रहे हैं और लाखों लोग उस
अख़बार का सुप्रभात में स्वागत कर रहे हैं। और ? और उस अखबार
के हर पन्ने पर मेरा····।

सपना टूट गया। सोचा, ऐसा कहीं होता है ? मैं क्या नशे में था ?

हो सकता है, नशे में ही था। होश आने पर महसूस किया, सपने की भी कोई न कोई सीमा होनी चाहिए। मास्टर-प्रोफेसरों से खासी जान-पहचान रहने के बावजूद स्कूल कॉलेज के मैगजीन में एक पंक्ति छपवाने में हालत खराब हो जाती है। और यह तो अखबार है। स्कूल-कॉलेज के मैगजीन में रचना प्रकाशित होने के दो महीने पहले नोटिस निकलता है। उन रचनाओं पर अनुभवी प्रोफेसर और कुशल मास्टरों के सेंसर बोर्ड की लगभग तीन महीने तक कैंची चलती रहती है। उसके बाद और तीन महीने तक प्रेस के गर्भ में पड़े रहने के बाद धूम-धड़ाके के साथ मैगजीन प्रकाशित होता है। ठीक उसी तरह जिस तरह कि लंबे अरसे तक पूजा-पाठ, व्रत-पालन और गण्डा-तावीज धारण करने और दरिद्र नारायण की सेवा करने के बाद संतानहीन पैसे वाले के घर में पहली संतान का आविर्भाव होता है। और अखबार? वह मानो अस्पताल का लेबर-रूम है। नये शिशु के जन्म के लिए प्रतीक्षा करने की ज़रूरत नहीं पड़ती। हर रोज़ सवेरे उसका जन्म होता है, तीसरे पहर उसका बुढ़ापा आ जाता है और रात के अँधेरे में विदा के लग्न में चुपके से उसकी मौत आ धमकती है। जन्म के साथ-साथ ही वह बालिग हो जाता है। चौबीस घण्टे के सीमित जीवन में एकमात्र अख़-बार ही लाखों लोगों के स्नेह का भागीदार होता है, धनियों के महल से लेकर बस्ती के जमे हुए अँधेरे के जीवन में उसका एक जैसा ही स्वागत होता है। लोग-बाग एक जैसी ही आवश्यकता महसूस करते हैं। वह बेरोक-टोक हर जगह पहुँच जाता है समाज-संस्कार के तमाम अच्छे-बुरे का मिलन-मंदिर समाचार-पत्र का कार्यालय है। कलकत्ते के चित-पुर, दिल्ली की चाँदनी और बंबई के चौपाटी की तरह अख़बार के गणदेवता के तमाम वैचित्र्य का नित्य दिन उत्सव होता रहता है। नेपुदा मुझे उस उत्सव का एक फेरी वाला बना लेगा? यह क्या संभव है?

दो-चार दिन के वाद ही मुझे अहसास हुआ कि मैं थोड़ा-वहुत चंचल हो गया हूँ। किसी एक संभावना मोह और प्रत्याशा से मेरे मरे मन में उत्साह की वाढ़ आ गयी है। वह वहुत कुछ प्रेम-विवाह के पूर्व की जैसी स्थिति थी। या फिर हजारों दरख्वास्त भेजने और इंटरव्यू देने के वाद जैसे अचानक एक्सप्रेस डेलिवरी से नियुक्ति-पत्र प्राप्त हो जाये। जिस दुनिया की ज़िन्दगी के प्रति मुझमें नफरत का भाव जग गया था वही दुनिया सुहावनी लगने लगी। धरती को जननी कहकर मैंने प्रणाम किया। लगा, कलकत्ते की इस दूषित वायु को वीच-वीच में वसन्त स्पर्श कर जाता है। जिस कर्नवालिस स्ट्रीट, कॉलेज स्ट्रीट, हैरिसन रोड के लाखों व्यक्तियों को पहले मैं अनदेखा करना चाहता था, उन्हें प्यार करने लगा। मैंने महसूस किया, किसी दिन इस सेंट्रल कलकत्ता के जनारण्य में बंगालियों की मनीषा के अग्रदूत एकाकार हो गये थे, आज भी शायद उसी तरह कोई आदमी इस भीड़ में एकाकार हो गया है। ये लोग मेरे लिए प्रणम्य हैं। खुशियों में आकर मैंने पूरे कलकत्ते को छान डाला—टाला से टालीगंज तक की परिक्रमा पूरी कर ली। दोपहर-भर चिड़ियाखाने की घास पर लेटकर मूँगफली चिवाता रहा। शाम की धुँधली रोशनी में, गोधूलि के पुण्य पवित्र लग्न में, लेक के किनारे टहलता रहा। लगा, मेरे अनन्त जीवन की अभिसारिका मेरे आसपास चेहरे पर हँसी ले चोटी हिलाती हुई कह रही है—वच्चू, आगे वढ़ते जाओ। मन की मौज में आकर लेक के पानी में ढेला फेंका, वैठकर गुनगुनाते हुए गीत भी गाया।

ठनठनिया में उतरकर डेरे के दरवाज़े पर जाकर ताला खोलने गया तो देखा ताला नदारद है। लगा, मैं भरसक ग़लत मकान में चला आया हूँ या फिर एटलान्टिक को पूरी तरह पार किये वगैर वारमुरा में आकर न्यूयार्क के फ़िफ्थ एवेन्यू की खोज कर रहा हूँ। मैं वापस जा रहा था। अचानक एक औरताना आवाज़ सुनकर पीछे की ओर मुड़ा। दो-चार सेकण्डों के वाद वह आवाज़ मेरे कान के निकट ही गूँज उठी।

लेकिन ठीक-ठीक समझ नहीं सका। बात उसी समय समझ में आयी जब मेरे श्रवणयंत्र को एक जोड़ा कोमल हाथों ने जोरों से खींचा। पीछे मुड़कर देखा, हम लोगों की छोटी-सी गृहस्थी की एकमात्र लेडी माउन्ट बेटेन, मेरी भाभी जी, मौजूद हैं।

"उफ्, जान निकल रहा है, कान छोड़ दो, भाभी।"

माँ काली की जात है न! उन लोगों पर मीठी बात का असर नहीं होता। रोने-धोने पर भी कोई नतीजा नहीं निकला। तब हाँ, आजीवन कारावास की सज़ा के बदले दस बरसों की सश्रम कारावास की सज़ा मिली। यानी दोनों कानों की जगह एक कान पकड़ भाभी जी मुझे खींचती हुई ले आयी और भैया के बिछावन पर बिठा दिया। उसके बाद सरयू बाला की तरह नाटकीय मुद्रा में गंभीर स्वर में बोली, "बच्चू, तुम क्या नशे में हो कि दरवाजे तक आकर लौटे जा रहे थे?"

मैंने भी छवि विश्वास की मुद्रा में जवाब दिया, "दैट्स नोट ए मैटर, माइ डियर गर्ल। तुम शकुन्तला की तरह पति के घर लौट आयी हो, इसका मुझे पता कैसे चलता?"

हम दोनों हँस पड़े। भाभी ने मेरा कान छोड़ दिया। लेकिन मेरी मुसकराहट देखकर भाभी को सन्देह हुआ। मेरे कान में फुसफुसाकर बोली, "भाई बच्चू, किसके साथ···?"

"तुम्हारी बहन के साथ···"

भाभी जी जब रोने-गिड़गिड़ाने लगी तो मुझे सच्ची बात बतानी पड़ी मगर उसे विश्वास नहीं हुआ। सामने से चोटी को पीछे की ओर फेंकती हुई बोली, "तुम्हारे जैसा शरारती आदमी अखबार में घुसेगा तो मैं अखबार पढ़ना ही बन्द कर दूंगी।"

सुबह-शाम ट्यूशन और उसके बीच भाभी से झगड़ा-टंटा, मार-पीट करने के बावजूद लगा कि दिन जैसे आगे बढ़ने का नाम नहीं ले रहा है। कॉलिज-स्ट्रीट के हॉकर्सों के पास खड़ा हो [illegible]

दो-चार दिन के वाद ही मुझे अहसास हुआ कि मैं थोड़ा-वहुत चंचल हो गया हूँ। किसी एक संभावना मोह और प्रत्याशा से मेरे मरे मन में उत्साह की वाढ़ आ गयी है। वह वहुत कुछ प्रेम-विवाह के पूर्व की जैसी स्थिति थी। या फिर हज़ारों दरख्वास्त भेजने और इंटरव्यू देने के वाद जैसे अचानक एक्सप्रेस डेलिवरी से नियुक्ति-पत्र प्राप्त हो जाये। जिस दुनिया की जिन्दगी के प्रति मुझमें नफरत का भाव जग गया था वही दुनिया सुहावनी लगने लगी। धरती को जननी कहकर मैंने प्रणाम किया। लगा, कलकत्ते की इस दूषित वायु को वीच-वीच में वसन्त स्पर्श कर जाता है। जिस कर्नवालिस स्ट्रीट, कॉलेज स्ट्रीट, हैरिसन रोड के लाखों व्यक्तियों को पहले मैं अनदेखा करना चाहता था, उन्हें प्यार करने लगा। मैंने महसूस किया, किसी दिन इस सेंट्रल कलकत्ता के जनारण्य में वंगालियों की मनीषा के अग्रदूत एकाकार हो गये थे, आज भी शायद उसी तरह कोई आदमी इस भीड़ में एकाकार हो गया है। ये लोग मेरे लिए प्रणम्य हैं। खुशियों में आकर मैंने पूरे कलकत्ते को छान डाला—टाला से टालीगंज तक की परिक्रमा पूरी कर ली। दोपहर-भर चिड़ियाखाने की घास पर लेटकर मूँगफली चिवाता रहा। शाम की धुंधली रोशनी में, गोधूलि के पुण्य पवित्र लग्न में, लेक के किनारे टहलता रहा। लगा, मेरे अनन्त जीवन की अभिसारिका मेरे आसपास चेहरे पर हँसी ले चोटी हिलाती हुई कह रही है—बच्चू, आगे वढ़ते जाओ। मन की मौज में आकर लेक के पानी में ढेला फेंका, बैठकर गुनगुनाते हुए गीत भी गाया।

ठनठनिया में उतरकर डेरे के दरवाज़े पर जाकर ताला खोलने गया तो देखा ताला नदारद है। लगा, मैं भरसक ग़लत मकान में चला आया हूँ या फिर एटलान्टिक को पूरी तरह पार किये वगैर वारमुरा में आकर न्यूयार्क के फ़िफ्थ एवेन्यू की खोज कर रहा हूँ। मैं वापस जा रहा था। अचानक एक औरताना आवाज़ सुनकर पीछे की ओर मुड़ा। दो-चार सेकण्डों के वाद वह आवाज़ मेरे कान के निकट ही गूँज उठी।

लेकिन ठीक-ठीक समझ नहीं सका। बात उसी समय समझ में आयी जब मेरे श्रवणयंत्र को एक जोड़ा कोमल हाथों ने जोरों से खींचा। पीछे मुड़कर देखा, हम लोगों की छोटी-सी गृहस्थी को एकमात्र लेडी माउन्ट बेटेन, मेरी भाभी जी, मौजूद हैं।

"उफ्, जान निकल रहा है, कान छोड़ दो, भाभी।"

मां काली की जात है न! उन लोगों पर मीठी बात का असर नहीं होता। रोने-धोने पर भी कोई नतीजा नहीं निकला। तब हाँ, आजीवन कारावास की सजा के बदले दस बरसों की सश्रम कारावास की सजा मिली। यानी दोनों कानों की जगह एक कान पकड़ भाभी जी मुझे खींचती हुई ले आयी और भैया के बिछावन पर बिठा दिया। उसके बाद सरयू बाला की तरह नाटकीय मुद्रा में गंभीर स्वर में बोली, "बच्चू, तुम क्या नशे में हो कि दरवाजे तक आकर लौटे जा रहे थे?"

मैंने भी छवि विश्वास की मुद्रा में जवाब दिया, "दैट्स नोट ए फैक्ट, माइ डियर गर्ल। तुम शकुन्तला की तरह पति के घर लौट आयी हो, इसका मुझे पता कैसे चलता?"

हम दोनों हँस पड़े। भाभी ने मेरा कान छोड़ दिया। लेकिन मेरी मुसकराहट देखकर भाभी को सन्देह हुआ। मेरे कान में फुसफुसाकर बोली, "भाई बच्चू, किसके साथ····?"

"तुम्हारी बहन के साथ·····"

भाभी जी जब रोने-गिड़गिड़ाने लगी तो मुझे सच्ची बात बतानी पड़ी मगर उसे विश्वास नहीं हुआ। सामने से चोटी को पीछे की ओर फेंकती हुई बोली, "तुम्हारे जैसा शरारती आदमी अखबार में घुसेगा तो मैं अखबार पढ़ना ही बन्द कर दूंगी।"

सुबह-शाम ट्यूशन और उसके बीच भाभी से झगड़ा-टंटा, मार-पीट करने के बावजूद लगा कि दिन जैसे आगे बढ़ने का नाम नहीं ले रहा है। कॉलेज-स्ट्रीट के हॉकरों के पास खड़ा हो दैनिक पत्र-पत्रिकाओं की

नुमाइश देखने लगा। अपनी सामर्थ्य के वाहर हर रोज़ ढेर सारा अखबार भी ख़रीदना शुरू कर दिया।

कुछ दिन ऐसे ही गुजर गये। उसके बाद हाथ में कोई काम न रहने पर 'दैनिक संवाद' के दफ़्तर के सामने चहल-क़दमी करना शुरू कर दिया। सवेरे भवानीपुर में छात्र को पढ़ाकर सीधे पार्क सर्कस के 'दैनिक संवाद' के कार्यालय के सामने चला जाता था। कार्यालय के आसपास चहल-क़दमी करता था। भविष्य का सपना लिए मन ही मन प्रसन्न होता था।

इसी तरह लुढ़कते-लुढ़कते किसी तरह बुधवार आया। सवेरा दोपहर में बदला, दोपहर तीसरे पहर में। उसके बाद शाम होने-होने का वक्त भी आ गया मगर नेपुदा का कोई पता नहीं चला। भाभी ने पहले मज़ाक करना शुरू किया, उसके बाद सांत्वना देने लगी मगर मेरे अशान्त मन में शान्ति नहीं आयी। गली में चप्पल-जूते की आवाज़ होते ही कान खड़े हो जाते थे, खिड़की से झाँक कर देखता, लेकिन नेपुदा दिखायी नहीं पड़ता था। मेरे मन के अँधेरे के साथ-साथ कलकत्ते के सीने पर भी साँझ का अंधेरा उतर आया। घर-घर में रोशनी जल उठी।

क्रोध, शोक, दुख के कारण अभिमान से आहत मन मुक्ति के लिए छटपटाने लगा। धोती-कुरता पहन कुल मिलाकर पैरों में चप्पल डालने जा ही रहा था कि तभी चिर चंचला भाभी ने उतरे हुए चेहरे से मेरी ओर चाय की प्याली बढ़ा दी। इनकार नहीं कर सका। अपने दुख से भाभी को दुखित होते देखकर मुझे आत्म-तृप्ति का अनुभव हुआ। चाय की प्याली हाथ में ले खाट पर बैठ गया, मेरे चेहरे पर संभवत: हँसी की लकीर भी उभर आयी। एकाएक कुंडी खटखटाने की आवाज़ सुनकर मैं और भाभी एक साथ ही 'कौन' कहकर अजीब ही तरह से चिल्ला उठे। हम दोनों दौड़ते हुए सिटकनी खोलने गये। सिटकनी खोलते ही नेपुदा अन्दर आया। नेपुदा को देखकर ऐसा लगा जैसे मेरे

सिर पर भूत का जो बोझा था, वह नीचे उतर गया। कमरे में आकर हम दोनों बैठे, भाभी अन्दर चली गयीं।

नेपुदा की व्यस्तता के कारण नाश्ता चाय के बाद ही हम दोनों फौरन उठकर खड़े हो गये। कॉलेज स्ट्रीट तक पैदल चलकर पार्क सर्कस की चलती ट्रामगाड़ी में कूद कर चढ़ गये। भीड़ में हमें बात-चीत का मौका नहीं मिला। मैं चुपचाप खड़ा रहा लेकिन मन में निकट-वर्त्ती भविष्य की आशंका की आँधी चलने लगी। कैसे स्यालदह, मौलाली, एन्टोली मार्केट वगैरह पार कर पार्क सर्कस पहुँचा, इसका पता नहीं चला। नेपुदा ने जब पुकारा तो देखा, ट्राम पार्क सर्कस के मैदान के निकट से होती हुई डिपो के अन्दर चली जा रही है। छलांग लगाकर नीचे उतर गया।

जब मैं 'दैनिक संवाद' के दफ़्तर में पहुँचा उस समय रात के आठ या सवा आठ बज चुके थे। लेकिन इतनी रात में इस दफ़्तर में बहुतेरे व्यक्तियों को देखकर मेरा अनभ्यस्त मन थोड़ा-बहुत आश्चर्य चकित हो गया। तंग गलियारे से आगे बढ़ते-बढ़ते देखा, दाहिने प्रेस और बायें 'दैनिक संवाद' केबिन में कंपोज और चाय बनाने का दौर चल रहा है। थोड़ी दूर और बढ़ने पर एक छोटा-सा बरामदा मिला। बरामदे के आखिरी छोर की एक टूटी सीढ़ी तयकर नेपुदा ऊपर चला गया। मैं चुपचाप उसके पीछे चलने लगा।

सीढ़ियाँ तयकर ऊपर पहुँचते ही सामने के कमरे के एक बोर्ड पर नजर पड़ी। लिखा था : श्री हरिसाधन मित्र—प्रधान संपादक। दर-वाज़ा खुला हुआ ही था। नेपुदा यद्यपि अन्दर चला गया लेकिन मैं बाहर ही खड़ा रहा। कमरे से बहुत से आदमी की बातचीत के टुकड़े मेरे कान में आ रहे थे। मैं मन ही मन सोच रहा था, जो हरिसाधन मित्र अनगिनत राष्ट्रीय समस्याओं पर युनिवर्सिटी इंस्टिट्यूट में भाषण देते हैं, सार्वजनिक दुर्गापूजा के उद्घाटन पर वेद-वेदान्त-दर्शन पर सारगर्भित भाषण देते हैं, रेडियो पर अन्तर्राष्ट्रीय समस्या पर

बोलते हैं, वही महापंडित इस साधारण परिवेश में वास करते हैं ! जाने, कितने ही विदग्ध व्यक्तियों का यहाँ आगमन होता होगा !

कई मिनट बाद नेपुदा बाहर निकला और मुझे बुलाकर अन्दर ले गया। नयी दुल्हन की तरह मैं सलज्ज डग भरता हुआ, सिकुड़ा-सिमटा सा कमरे के अन्दर गया। संपादक जी मंत्रि-मण्डल के साथ विराजमान थे। पुराने सेक्रेटियेट टेबल पर कई सौ अखबार पत्र-पत्रिका और चिट्ठियों का अंबार था। एक दवात, दो-तीन क़लम और प्रागैतिहासिक युग का एक कॉलिंग बेल भी देखा। इसके अलावा एक टेलीफोन था। मेज़ के बीच जो व्यक्ति बैठे थे, वही हरिसाधन बाबू हैं, यह समझने में कोई कठिनाई नहीं हुई। लंबा-चौड़ा दुहरे बदन का आदमी। रंग साँवला ही कहा जायेगा। पहरावा धोती-कुरता। कुरसी के हत्थे पर चादर पड़ी थी। आँखों की दृष्टि यद्यपि भाव-व्यंजक और सुदूर प्रसारी थी लेकिन उसमें विफलता और निराशा की छाप थी। बहुत कुछ मुफ़स्सिल के बंगला के लेक्चरर जैसा।""बहुत उम्मीद और सपना ले युनिवर्सिटी दाखिल होना। वसन्तोत्सव में इन्द्राणी चटर्जी के साथ ज्वाइन्ट प्रोग्राम। उसके बाद काफी-हाउस को जन-सभा में एक क्षण के लिए एकान्त में मिलना-जुलना, इडेन के किनारे पदावली की चर्चा। बीच-बीच में नोट आपस में अदलने-बदलने के बहाने काकुलिया रोड के डेरे पर भेंट-मुलाकात। सिक्थ इयर में पहुँच जाने पर एक साथ मैटिनी शो या महाजाति सदन के उत्सव का उपभोग। इसी बीच ट्राम की टिकट की पीठ पर माइकेल की तरह अतुकान्त छन्द में सॉनेट के एक बन्द की रचना करना—नो लाइफ़ विदाउट वाइफ़। या फिर युनिवर्सिटी जरनल में 'शेष की कविता' के निष्काम प्रेमतत्व को लेकर दार्शनिक आलोचना करना। उसके बाद जीवन-मरण के सहगल की तरह एकाएक बेहला का तार टूट जाना। क्लास से इन्द्राणी लापता हो जाती है। पंद्रह-बीस दिन के बाद छोटे लिफ़ाफ़े में निमंत्रण-पत्र मिलता है—आना ही है।—तुम लोगों की इन्द्राणी। इसके बाद बिगड़ी सेहत और अशान्त मन लेकर

परीक्षा देना और किसी तरह सेकेण्ड क्लास में पास कर रामपुर महाराजा हरिश्चन्द्र कॉलेज में लेक्चरर का पद प्राप्त करना।

नेपुदा ने कहा, "हरिसाधन बाबू, यह हम लोगों का बन्धु है। बहुत अच्छा लिखता है। इसीलिए यहाँ काम मे लगा देने के लिए तुम्हारे हाथों में सौंप रहा हूँ।"

मार्केनटाइल फ़र्म के बड़े साहब की तरह बिना कुछ बोले अखबार पढ़ते-पढ़ते घण्टी बजायी। अठारह-उन्नीस साल के एक नौजवान ने जैसे ही कमरे के अन्दर प्रवेश किया, हरिसाधन बाबू बोले, "तारापद को बुला ला।"

थोड़ी देर बाद ही एक मध्यवयस्क सज्जन ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। पहनावा पैंट-शर्ट। चेहरे से बुद्धिमत्ता टपक रही थी।

"तारापद, तुमने कहा था कि तुम्हारे रिपोर्टिंग सेक्शन में आदमी की कमी है। इसीलिए इसे तुम्हारे डिपार्टमेंट में दे रहा हूँ।" अँगूठे से हरिसाधन बाबू ने मेरी ओर इशारा किया।

तारापद बाबू ज़रा तिरछी हँसी हँसकर बोले, "इस तरह और कितने दिनों तक काम चलाइएगा? दो-चार अच्छे रिपोर्टर के बिना अब काम चलना नामुमकिन है।"

अब तारापद बाबू ने मेरी ओर गिद्धदृष्टि से देखा। पूछा, "इसके पहले किसी अख़बार में आपने काम किया है?"

"नहीं।"

लगा, सवाल और उसके जवाब का मर्म हरिसाधन बाबू की समझ में आ गया। बस, इतना ही कहा, "दो-चार महीने देख लो, उसके बाद जैसा होगा, किया जायेगा।"

तारापद बाबू ने मुझे अपने साथ चलने को कहा। मैंने एक बार नेपुदा और हरिसाधन बाबू की ओर देखा और फिर तारापद बाबू के पीछे-पीछे चल दिया।

तारापद बाबू दो मंज़िले के कमरे के अन्दर गये। दरवाजे पर लिखा

था : रिपोर्टर्स। समझ गया, यह स्टाफ़ रिपोर्टरों का कमरा है। यानी ये ही लोग तक़दीर के सिकन्दर की जमात के हैं जो प्राइम मिनिस्टर के साथ दौरे पर निकलते हैं, चीफ़ मिनिस्टरों के प्रेस-कान्फ्रेंस में प्रश्नों की झड़ी लगा देते हैं। ये ही लोग उत्तर बंगाल की बाढ़ का संवाद भेजते हैं, कांग्रेस की सफलता पर रिपोर्ट पेश करते हैं, राजनीतिक उस्तादों को क़लम की नोक से परेशान कर मारते हैं, चेम्बर ऑफ कोमर्स की निन्दा करते हैं, वैज्ञानिकों की खोज में ग़लती निकालते हैं। कला-प्रदर्शनी की तारीफ़ करते हैं। इतना ही नहीं, अप्रसिद्ध लोगों को ये लोग प्रसिद्ध और प्रसिद्ध को अप्रसिद्ध बना देते हैं। संपादक की टिप्पणी अखबार के भंतरी पन्ने पर एक कोने में छपी रहती है मगर स्टाफ़ रिपोर्टरों की रिपोर्ट पहले पृष्ठ पर मोटे-मोटे अक्षरों में छपी रहती है। अतः उन सौभाग्यशालियों के दल में शामिल होने की ख़ुशी से मैं रोमांचित हो उठा।

कमरे में और तीन-चार आदमी बैठे हुए थे। अपनी मेज़ की ओर बढ़ते हुए तारापद बाबू ने सभी लोगों की ओर मुखातिब होकर कहा, "येट अनदर डिसकवरी आफ हरिदा।"

तारापद बाबू के सहकर्मियों में से कोई-कोई मुसकरा दिया, किसी ने टिप्पणी की। मैंने सुनकर अनसुना और देखकर अनदेखा कर दिया। आदेशानुसार मैं तारापद बाबू की बगल की कुर्सी पर बैठ गया। उन्होंने दूसरे-दूसरे रिपोर्टरों से परिचय कराया, रिपोर्ट करने के बारे में थोड़ा-बहुत उपदेश दिया। उसके बाद मुझे दो-चार पी० टी० आई०, यू० पी० आई० की लोकल कापी का अनुवाद करने को दिया। मैंने अत्यन्त संकोच और सावधानी के साथ अनुवाद कर कापियाँ तारापद बाबू की ओर बढ़ा दी। सरसरी निगाह से देखकर उन्होंने बेयरा के हाथ कापियाँ भेज दी। मैंने और भी कई लोकल कापियों का अनुवाद किया। उन्हें भी भेज दिया गया।

इसके बाद तारापद बाबू की कृपा से मुझे एक गिलास चाय मिली।

कृतज्ञता से मैं द्रवित हो गया। रात दस बजे के बाद छुट्टी मिली। नमस्कार कर जब मैं चलने लगा तो तारापद बाबू ने दूसरे दिन शाम के समय आने को कहा।

जल्दी-जल्दी बाहर आ मैंने ट्राम पकड़ी। कॉलेज स्ट्रीट के मोड़ पर उतरने पर मन में हुआ कि चिल्लाकर सबको सूचित कर दूँ कि मैं रिपोर्टर हो गया हूँ। कॉलेज स्ट्रीट के मोड़ पर मैं भले ही चिल्लाया नहीं लेकिन घर के दरवाज़े की सीढ़ी पर आकर साँड़ की तरह चिल्लाकर भाभी को पुकारा। दरवाज़ा खोलते ही भरत नाट्यम नृत्य करता हुआ मैं अन्दर गया। भाभी को एक धक्का देकर हटा दिया और जूता-कपड़ा पहने ही बिस्तर पर निढाल पड़ गया।

रवीन्द्र की मुद्रा में आनन्द से गद्गद होकर कहा, "जानती हो, भाभी, दिन अभी-अभी आया है।"

भाभी ने मुसकराकर अंगूठा दिखाया। लेकिन मेरे उत्साह में तनिक भी कमी नहीं आयी। कहा, "देख लेना, अब मिनिस्टर के कंधे पर हाथ रखकर बातचीत करूँगा, एम० पी० और एम० एल० ए० लोग चैरिटी की टिकट और सिनेमा के पास के लिए भीड़ लगायेंगे। यही नहीं, तुम्हारी क़िस्मत में और भी बहुत-कुछ देखना लिखा है। लुत्फ़ा की तरह तुम्हारी बहन मेरे चरणों पर लोटेगी; कहेगी : प्राणनाथ....."

भाभी ने भी क्षीरोद प्रसाद विद्याविनोद का स्मरण किया। बोली, "सो तो हुआ सिराज, मगर अब तुम खाना खाकर मुझे मुक्ति दोगे ?"

"ज़रूर।"

दूसरे दिन सवेरे ही उठकर निकल पड़ा। बेनू चैटर्जी स्ट्रीट के मोड़ पर हॉकर से 'दैनिक संवाद' की एक प्रति खरीदी। पिछली रात लिखे हुए समाचार को छपे हरूफ़ों में देखने की अजीब उत्सुकता थी

कारण वहीं खड़ा होकर अखवार देखने लगा। कन्यादान की समस्या से ग्रस्त पिता जिस तरह सुविधानुसार सुपात्र की उम्मीद में पात्र-पात्री का कॉलम पढ़ता है, मैंने उससे भी अधिक उम्मीद और सपना लेकर अख़वार देखा। ज़्यादा वक़्त नहीं लगा। पहले पृष्ठ के नीचे की ओर छपी एक खवर पर निगाह गयी। शुरू में विश्वास नहीं हुआ; लेकिन वाद में अविश्वास करने का कोई कारण नहीं मिला। पन्ना उलटा। दूसरे पृष्ठ पर विज्ञापन था। तीसरे पृष्ठ पर सभा-समिति, विवरण, पाट के गोदाम के अग्निकाण्ड, स्यालदह की औरत पाकेटमार की गिरफ़्तारी के साथ-साथ अपनी लिखी हुई दो खवरें देखीं। अव मैं चुपचाप खड़ा नहीं रह सका। भाभी को अख़वार दिखाने के लिए मन वेचैन हो उठा।

विना घोड़े के, छत्रपति शिवाजी की तरह वहादुरी के साथ उछलता-कूदता घर के अंदर गया। देखा, भैया अस्पताल चला गया है; भाभी एक प्याली चाय और अख़वार ले फर्श पर वैठी है। विना कुछ वोले भाभी के हाथ से अख़वार छीन लिया।

"मन वड़ा ही उदास है। आज से ज़िन्दगी-भर के लिए तुम्हारा अख़वार पढ़ना वन्द हो गया क्योंकि आज से इस अपरिपक्व कुष्माण्डक का लेखन छपना शुरू हो गया है।"

जवाव न देकर भाभी ने अख़वार मेरे हाथ से छीन लिया। अहंकारवश मैं अपना जोश दवाकर नहीं रख सका। कहा, "रे मूर्ख नारी, पहले पृष्ठ के पाँचवें कॉलम की आखिरी खवर को ध्यान से देखो।"

फिर भी भाभी समझ नहीं सकी। तव लाचार होकर दिखा दिया कि आज वराहनगर, सिंथी, काशीपुर और दक्षिण लैंसडाउन रोड और देशप्रिय पार्क अंचलों में तीसरे पहर तीन से चार वजे तक विशुद्ध जल की आपूर्ति वन्द रहने की तरह जो महत्त्वपूर्ण समाचार प्रकाशित हुआ है वह इस वन्दे के द्वारा ही लिखा गया है।

एडिटर हो।' 'कृष्णकलि मैं उसको कहता'—यह पंक्ति मैंने रवीन्द्रनाथ के गीत में पढ़ी थी लेकिन उसका पहले-पहल परिचय लावण्य को देखकर मिला। इतना गहरा काला रंग इसके पहले देखा होऊँ, ऐसा याद नहीं आता। लावण्य यद्यपि काले रंग का था लेकिन उसका चेहरा खूबसूरत था और उसमें बेहद प्राण-शक्ति थी। उस प्राण-शक्ति ने मुझे पहले दिन ही आकर्षित कर लिया था। मैं जितने दिनों तक वहाँ आता-जाता रहा, लावण्य के प्रति आकर्षण उतना ही बढ़ता गया। बाद में जब मुझे मालूम हुआ कि सात बरसों से काम करते रहने के बावजूद लावण्य को बाइस रुपया वेतन मिलता है और उसे अकेले ही अंधे बाप, बूढ़ी माँ और तीन भाई-बहनों का भार ढोना पड़ता है तो मैं अवाक् हो गया कि किस तरह यह अशिक्षित युवक चेहरे पर हँसी ले जीवन की तमाम सच्चाइयों को स्वीकार रहा है। जब और कुछ दिन बीत गये तो पता चला कि लावण्य यद्यपि अशिक्षित है लेकिन बेवकूफ नहीं; दरिद्र है, लेकिन हीन नहीं। गीता में लिखा है—यत करोमि जगन्मात, तदेव तव पूज्यते। शेक्सपीयर ने कहा है—लाइफ इज बट एन वॉकिंग शैडो; लेकिन जिन लोगों ने दरभंगा बिल्डिंग के क्लास-रूम में आकर यह सब पढ़ा है, वे मन से इस सीख को ग्रहण नहीं कर सके हैं, जीवन के हर पग पर वे ठोकर खाते हैं और हाहाकार मचाने लगते हैं। और लावण्य? उसने गीता नहीं पढ़ी है, शेक्सपीयर का नाम नहीं सुना है, दर्शन-वेद-वेदान्त-उपनिषद का स्पर्श नहीं किया है, फिर भी जीवन को जितनी सहजता के साथ स्वीकार कर लिया है, किसी दूसरे को उस तरह चेहरे पर हँसी ले जीवन के सामने खड़े होते नहीं देखा है। आगे चलकर मुझे पता चला था, हमारे देश के पढ़े-लिखे लोग अभद्र होते हैं, हीन और नीच होते हैं। ये लोग कला-कौशल से भले आदमी का जीवन जीते हैं, गार्हस्थ्य जीवन के धर्म का पालन करते हैं, मेनुमेंट के तले भाषण देकर लोगों की जमात को जोश में लाकर पुलिस की लाठी, मिलिटरी की गोली के सामने बढ़ा देते हैं और स्वयं सिर्फ वक्तव्य देते हैं और लोगों

की निगाह से बचकर तमाम संभावित इन्द्रिय सुख का उपभोग करते हैं।

कई महीनों के अखबारों की फाइल सिर पर लादे कमरे में प्रवेश करते ही उसकी निगाह मुझ पर गयी और उसने चिल्लाकर मेरी उपस्थिति की घोषणा की। उस चिल्लाहट से मेरी छाती की धड़कन जैसे थम गयी। कई सेकेण्डों के दौरान ही लावण्य फिर चिल्ला उठा, "बाजी मात कर दिया, नया रिपोर्टर बच्चू बाबू आ गया।"

बाजी मात कर दी हो, इस पर विश्वास नहीं हुआ मगर इतना पता चल गया कि कोई क्षति नहीं पहुँचायी है। कमरे के तमाम लोगों ने मुड़कर मेरी ओर देखा। चीफ़ रिपोर्टर तारापद बाबू ने मुझे अपने पास बुलाया।

"विप्लव दा, यह बच्चू है—रिपोर्टर आफ द डे ऑल्ड," तारापद बाबू ने सामने के सज्जन से कहा।

इतने दिनों तक जिस क्रान्तिकारी विप्लव चैटर्जी की तस्वीर अख़बार के पन्नों पर देखता आ रहा हूँ, जिसका भाषण सुनकर छात्र-जीवन में उत्तेजना का अनुभव करता था, उसी सर्वजन्य-धन्य जन-नेता को अपने निकट पाकर स्वयं को धन्य समझा। श्रद्धा और भक्ति से मेरा सिर झुक गया, गौरव से सीना तन गया। इस महान् क्रान्तिकारी को अपने निकट पाकर संभवतः मेरे चेहरे पर एक चमक आ गयी थी।

सस्नेह मेरी पीठ पर एक धौल जमाकर विप्लवी वीर उठकर खड़े हो गये। बोले, "मेरा स्टेटमेंट तुमने बहुत अच्छे ढंग से पेश किया है।...अच्छी तरह मन लगाकर काम करो।"

कमरे से बाहर जाने के दौरान डॉक्टर विप्लव चैटर्जी पीछे की ओर मुड़े। "तारा, मेरे स्टेटमेंट का वेलकम करते हुए जो सब टेलिग्राम आये हैं, उनके बेसिस पर एक न्यूज तैयार कर देना। समझे न ?" जननेता ने विदा ली; कर्मचारियों का दल उनके पीछे-पीछे चलने लगा। मैं मुग्ध दृष्टि से दरवाजे की ओर देखता रहा।

ऽटर हो।' 'कृष्णकलि मैं उसको कहता'—यह पंक्ति मैंने रवीन्द्रनाथ
गीत में पढ़ी थी लेकिन उसका पहले-पहल परिचय लावण्य को देख-
र मिला। इतना गहरा काला रंग इसके पहले देखा होऊँ, ऐसा याद
हीं आता। लावण्य यद्यपि काले रंग का था लेकिन उसका चेहरा खूब-
सूरत था और उसमें बेहद प्राण-शक्ति थी। उस प्राण-शक्ति ने मुझे पहले
दिन ही आकर्षित कर लिया था। मैं जितने दिनों तक वहाँ आता-जाता
रहा, लावण्य के प्रति आकर्षण उतना ही बढ़ता गया। बाद में जब मुझे
मालूम हुआ कि सात बरसों से काम करते रहने के बावजूद लावण्य को
बाईस रुपया वेतन मिलता है और उसे अकेले ही अंधे बाप, बूढ़ी माँ और
तीन भाई-बहनों का भार ढोना पड़ता है तो मैं अवाक् हो गया कि किस
तरह यह अशिक्षित युवक चेहरे पर हँसी ले जीवन की तमाम सच्चाइयों
को स्वीकार रहा है। जब और कुछ दिन बीत गये तो पता चला कि
लावण्य यद्यपि अशिक्षित है लेकिन बेवकूफ नहीं; दरिद्र है, लेकिन हीन
नहीं। गीता में लिखा है—यत करोमि जगन्मात, तदेव तव पूज्यते।
शेक्सपीयर ने कहा है—लाइफ इज बट एन वकिंग शैडो; लेकिन जिन
लोगों ने दरभंगा बिल्डिंग के क्लास-रूम में आकर यह सब पढ़ा है, वे
मन से इस सीख को ग्रहण नहीं कर सके हैं, जीवन के हर पग पर वे
ठोकर खाते हैं और हाहाकार मचाने लगते हैं। और लावण्य ? उसने
गीता नहीं पढ़ी है, शेक्सपीयर का नाम नहीं सुना है, दर्शन-वेद-वेदान्त
उपनिषद का स्पर्श नहीं किया है, फिर भी जीवन को जितनी सहज
के साथ स्वीकार कर लिया है, किसी दूसरे को उस तरह चेहरे पर हँ
ले जीवन के सामने खड़े होते नहीं देखा है। आगे चलकर मुझे
चला था, हमारे देश के पढ़े-लिखे लोग अभद्र होते हैं, हीन और
होते हैं। ये लोग कला-कौशल से भले आदमी का जीवन जी
गार्हस्थ्य जीवन के धर्म का पालन करते हैं, मेनुमेंट के तले भाषण
लोगों की जमात को जोश में लाकर पुलिस की लाठी, मिलिट
गोली के सामने बढ़ा देते हैं और स्वयं सिर्फ वक्तव्य देते हैं और

की निगाह से बचकर तमाम संभावित इन्द्रिय सुख का उपभोग करते हैं।

कई महीनों के अखबारों की फाइल सिर पर लादे कमरे में प्रवेश करते ही उसकी निगाह मुझ पर गयी और उसने चिल्लाकर मेरी उपस्थिति की घोषणा की। उस चिल्लाहट से मेरी छाती की धड़कन जैसे थम गयी। कई सेकेण्डों के दौरान ही लावण्य फिर चिल्ला उठा, "बाजी मात कर दिया, नया रिपोर्टर बच्चू बाबू आ गया।"

बाजी मात कर दी हो, इस पर विश्वास नहीं हुआ मगर इतना पता चल गया कि कोई क्षति नहीं पहुँचायी है। कमरे के तमाम लोगों ने मुड़कर मेरी ओर देखा। चीफ रिपोर्टर तारापद बाबू ने मुझे अपने पास बुलाया।

"विप्लव दा, यह बच्चू है—रिपोर्टर आफ़ टु डे ओल्ड," तारापद बाबू ने सामने के सज्जन से कहा।

इतने दिनों तक जिस क्रान्तिकारी विप्लव चैटर्जी की तस्वीर अखबार के पन्नों पर देखता आ रहा हूँ, जिसका भाषण सुनकर छात्र-जीवन में उत्तेजना का अनुभव करता था, उसी सर्वजन्य-धन्य जन-नेता को अपने निकट पाकर स्वयं को धन्य समझा। श्रद्धा और भक्ति से मेरा सिर झुक गया, गौरव से सीना तन गया। इस महान् क्रान्तिकारी को अपने निकट पाकर संभवतः मेरे चेहरे पर एक चमक आ गयी थी।

सस्नेह मेरी पीठ पर एक धौल जमाकर विप्लवी वीर उठकर खड़े हो गये। बोले, "मेरा स्टेटमेंट तुमने बहुत अच्छे ढंग से पेश किया है।...अच्छी तरह मन लगाकर काम करो।"

कमरे से बाहर जाने के दौरान डॉक्टर विप्लव चैटर्जी पीछे की ओर मुड़े। "तारा, मेरे स्टेटमेंट का वेलकम करते हुए जो सब टेलिग्राम आये हैं, उनके बेसिस पर एक न्यूज तैयार कर देना। समझे न?" जननेता ने विदा ली; कर्मचारियों का दल उनके पीछे-पीछे चलने लगा। मैं मुग्ध दृष्टि से दरवाजे की ओर देखता रहा।

डॉक्टर विप्लव चैटर्जी सिर्फ़ बंगाल के नहीं, पूरे हिन्दुस्तान के सर्वप्रिय श्रद्धेय राजनीतिक और श्रमिक नेता हैं। बाग बाज़ार के बम केस के मुजरिम के तौर पर इन्हें अँग्रेज़ों के कारावास में लगातार बारह साल बिताने पड़े हैं। अधेड़ होने पर जेल से निकल रातों-रात लाखों आदमी का नेतृत्व ग्रहण कर उन्होंने पूरे देश को चौंका दिया है। क्रान्तिकारी जीवन की पृष्ठभूमि पर लिखी गयी इनकी पुस्तक 'नोट ए बेड ऑफ रोजेज' को बंगाल के नौजवानों के बीच राजनीतिक बाइबिल के रूप में समादर प्राप्त हुआ है। आज देखकर लगा, उम्र अब भी चार के खाने में ही होगी। खड़ी नाक, प्रशस्त ललाट और चौड़ी छाती ने उनके क्रान्तिकारी जीवन की बहुत-सी कहानियों का स्मरण करा दिया।

डॉक्टर चैटर्जी से प्रशंसा प्राप्त करने के कारण दफ्तर में मेरा रुतबा थोड़ा-बहुत बढ़ गया। कई दिनों के दरमियान मैं रिपोर्टिंग सेक्शन का एक मान्य सदस्य हो गया। वेलिंगटन, त्रिडन, हाजरा और श्रद्धानन्द पार्क नोटबुक लेकर आना-जाना शुरू कर दिया। शुरू में बड़ी-बड़ी सभाओं में रिपोर्टरों की मेज़ पर बैठने में लज्जा का अनुभव होता था। दूर श्रोताओं की निगाह से बचकर नोट लिखता था। आहिस्ता-आहिस्ता लज्जा का भाव दूर हो गया, मैंने रिपोर्टरों की मेज़ पर बैठना शुरू कर दिया। हज़ारों-लाखों स्त्री-पुरुष उन जन-सभाओं में आते थे और पूरी जनता की भीड़ आश्चर्य और श्रद्धा से रिपोर्टरों की ओर ताकती रहती थी। मैं तिरछी निगाह से सब कुछ ध्यान से देखता था। ध्यान इस बात पर जाता कि मैं हाथ में नोट बुक थामे खड़ा हूँ और हज़ारों आदमी मेरी ओर ताक रहे हैं।

यही नहीं, प्रेस-कान्फ्रेन्स में भी आना-जाना शुरू कर दिया। संयोजकों के प्रतिनिधि होटल के दरवाज़े और रेस्तराँ की सीढ़ी पर स्वागत करते थे। सम्मान के साथ अन्दर ले जाते और वेजिटेबल सैण्डविच और समोसे का प्लेट बढ़ा देते थे। एक प्याली चाय खत्म होते न होते चाय की दूसरी प्याली मिल जाती थी। एकमात्र बरातियों को ऐसा

स्वागत-सत्कार मिलता है, लेकिन ऐसा सुयोग तो कभी-कभार ही मिलता है। रिपोर्टर होने के बाद प्रायः हर रोज़ चौरंगी-एसप्लेनेड के किसी न किसी होटल-रेस्तरां में बराती होकर जाने लगा।

आफिस के माहौल में भी बदलाव आ गया। मैं अब पहले की तरह चुपचाप दुल्हन सजकर चीफ रिपोर्टर की मेज़ पर नहीं बैठता था। कमरे के अन्दर जाते न जाते पुकार लगाता, "लावण्य, चाय।"

चीनी या दूध कम होता तो केबिन के बेयरा को डांट पिलाता, दो आने की क़ीमत का वेजिटेबिल चॉप थोड़ा ठण्डा रहता तो केबिन के मालिक बनमाली को पुकार कर दो-चार कड़वी बात सुना देता। लावण्य मेरी बात पर रद्दा जमाता था। जमींदार की हवेली के नायब की तरह वह बनमाली को और अधिक डांटता-फटकारता, "देखो बनमाली अगर कोई बच्चू बाबू को ख़राब चीज़ देगा तो मैं बाहर के केबिन से....."

बनमाली लावण्य की बात का मर्म समझता था। सारी गलती मानकर भविष्य में ग्रैण्ड, ग्रेट ईस्टर्न की तरह अच्छी खाने की सामग्री देने का वचन देकर वहाँ से विदा होता था।

नायब जिस तरह मेरी देख-रेख करता था, मैंने भी उसी तरह उसकी देख-रेख करना शुरू कर दिया। "जाओ लावण्य, मेरे नाम से केबिन में एक प्याली चाय ले लो।"

"पतितपावन, बच्चू बाबू के नाम पर मुझे एक प्याली चाय भेज दो....।" लावण्य विदा हो जाता तो तमाम अख़बारों की फाइलें उलट-पुलट कर देखता, डायरी खोलकर दूसरे दिन के एन्गेजमेन्ट की सूची देख लेता। उसके बाद सब एडिटर के कमरे में जाता। बिना कुछ बोले सीधे टेलीप्रिंटर के पास चला जाता। इस मशीन से टाइप की तरह खट-खट आवाज़ करता हुआ सारी दुनिया का समाचार आता रहता था। मँजे हुए संवाददाताओं की तरह मैं एक ही झलक में टेलीप्रिंटर के समाचार का दैनिक प्रवाह देख लेता था। उसके बाद गैली देखता। 'गैली' शब्द सुनकर शुरू में सोचा था, विश्व प्रसिद्ध वैज्ञानिक गैलेलियो का

भ्रंश है। लेकिन अब जान गया हूँ कि गैली से गैलेलियो का कोई
बंध नहीं। समाचार कंपोज होकर लोहे की जिन शलाखों में गुंथे जाते
उन्हें ही गैली कहा जाता है। इसके बाद दो-चार सब-एडिटरों की
मेज पर ताक-झांक लगाता, स्पोर्ट्स रिपोर्टरों से विजय मर्चेन्ट की बैटिंग
या शैलेन मन्ना के लांग किक की खबर जान लेता। इच्छा होती तो एक
बार प्रेस भी चला जाता। उसके बाद रात नौ या साढ़े नौ बजे और
तीसरे पहर तीन बजे प्रेस कान्फ्रेन्स की या साढ़े चार बजे वेलिंगटन की
जन-सभा की रिपोर्ट लिखने बैठ जाता। रात दस या सवा दस बजे डेरा
लौटने के समय पूछता, "तारा दा, कल क्या करना है?"

दूसरे दिन के निर्दिष्ट कार्य की जानकारी प्राप्त कर मैं पार्क सर्कस-
हावड़ा की ट्राम की पिछली बॉगी पर सवार हो जाता और कॉलिज
स्ट्रीट में उतर जाता। उसके बाद डेरे पर पैदल चला आता था।

अब मैं सवेरे-सवेरे जगकर अखबार देखने बेचू चैटर्जी स्ट्रीट के मोड़
पर नहीं जाता था, ऑफ़िस का प्यून घर पर ही कॉम्पलिमेन्टरी अखबार
दे जाता था। प्यून खिड़की से मेरे बिस्तर पर अखबार फेंक जाता था
उसी की आवाज या चोट से मेरी नींद टूट जाती। और मैं ऐसी मुद्रा
सरसरी निगाह से अखबार की सुर्खियाँ देख जाता जैसे तन्द्रा हो, मग
नींद नहीं; देह हो, लेकिन मन नहीं। अब 'दैनिक संवाद' का मेरे
पर अनादर नहीं किया जाता बल्कि उसे सम्मान की दृष्टि से दे
जाता था।

इसी तरह मेरी जिन्दगी आगे बढ़ रही थी, मन का आकाश रं
हो उठा था। लगभग छह महीने बाद एक शाम अचानक इस बा
पता चला कि मेरे रंगीन आकाश को धुँधला बनाकर इन्द्र धनु
साया है। अजस्र रंगों के समारोह से मैं बेचैन हो उठा।

तब सात बजने में पाँचेक मिनट बाक़ी थे। मिस्टर चौधरी के महल के सामने मोटर की कतार देखकर समझ गया कि मेहमानों का आगमन शुरू हो गया है। मोहिनी मिल्स की दस-चौआलीस धोती और अज्ञात मिल के मामूली पपलिन की कमीज पहन अन्दर जाने में संकोच का अनुभव हुआ। हाजरा पार्क की जन-सभा में पहले दिन रिपोर्टरों की मेज़ पर बैठने के लिए जाने पर जिस संकोच का अनुभव हुआ था, उससे बहुत ज्यादा संकोच ने आज मुझे घेर लिया। एक बार मन में हुआ कि लौट चलूं मगर हिम्मत नहीं हुई। 'इण्डिया इन वर्ल्ड एफेयर्स' के संबंध में राष्ट्र राजदूत मिस्टर फटफटिया भाषण देंगे। यह भाषण कल अख़बार में न छपेगा तो मेरा सर्वनाश हो जायेगा, यह बात मुझे मालूम थी। इसके अलावा तारा दा ने कहा था, सावधानी से रिपोर्ट करना।

वर्दीधारी दरवान और सेक्रेटरीनुमा लोगों की एक जमात ले जो व्यक्ति फाटक पर सबका स्वागत-सत्कार कर रहे हैं, वे चौधरी साहब हैं, यह समझने मे मुझे परेशानी नहीं हुई। गाड़ी आकर जैसे ही रुकती हैं, वर्दीधारी दरवान उसका दरवाजा खोलकर सलाम करता है और अभ्यागतों का दल बायें हाथ से बटन होल के गुलाब की कली को ठीक करता हुआ दाहिना हाथ आगे बढ़ा देता है। "गुड इवनिंग चाउधरी।"

"इवनिंग"""।" मिस्टर चौधरी संक्षेप में उत्तर देते हैं।

गेट के सामने पहुँचकर मैंने चौधरी साहब को जिज्ञासु नेत्रों से अपनी ओर देखते हुए पाकर कहा, "प्रेस।"

भौंहों पर बल लाकर उन्होंने कहा, "आइ सी। गेट इन माइ ब्यॉय।"

भाव ऐसा था जैसा आना ही होगा, न आओगे तो कहाँ जाओगे? इतने दिनों तक जहाँ-जहाँ गया हूँ बरातियों के जैसा स्वागत-सत्कार मिला है, इनमें से ज्यादातर लोगों ने स्वागत करने के समय समाचार-पत्र के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की है, व्यक्तिगत तौर पर रिपोर्टरों को उनके

आगमन के उपलक्ष्य में धन्यवाद दिया है। आज की शाम उसके ठीक विपरीत दूसरी ही तरह का अनुभव हुआ।

अन्दर जाने पर देखा, लॉन के एक किनारे सभा का आयोजन किया गया है। श्रोताओं का दल बेंत की कुरसी पर आसीन है। मिस्टर फटफटिया और मिस्टर चौधरी के लिए दूसरी ओर दो सोफ़े और एक छोटी तिपाई रखी हुई है। रिपोर्टरों के लिए अलग से कोई इन्तज़ाम नहीं किया गया था। मैं श्रोताओं के दल के बीच एक कुरसी खींचकर बैठ गया। एयरपोर्ट के रिवॉलविंग बिकन लाइट की तरह मैंने अपनी आंखें चारों तरफ़ घुमायीं। देखा, लॉन के एक छोर पर चौधरी साहब की विशाल इमारत है और उसके एक किनारे लंबी मेज़ के सामने सफेद झकमकाती वर्दी पहने बेयरा की एक जमात ढेर सारी बोतल और गिलास लिए पत्थर की मूरत की तरह धुंधली रोशनी में खड़ी है। मेरे चारों तरफ़ जो लोग बैठे थे उनमें औरत-मर्दों की संख्या बराबर ही होगी। ज्यादातर लोगों की उम्र चार या पांच के खाने में होगी, लेकिन उनकी वेश-भूषा, तौर-तरीके और चाकचिक्य से ऐसा लगा जैसे वे अनन्त यौवन के साधक-साधिकाएं हैं। लगा, ये लोग पैसे के बल पर जवानी को हाथ की मुट्ठी में रखे हुए हैं। मध्यवित्त घर में पैदा होकर औरतों को देखा है लेकिन उनके जिस्म के जिन कोमल भागों को इसके पहले देखने का सौभाग्य या दुर्भाग्य प्राप्त नहीं हुआ है, उन अंगों का खुला-छिपी आज पहले-पहल देखने को मिला।

इस बीच चौधरी साहब और मिस्टर फटफटिया आसन ग्रहण कर चुके हैं। मिस्टर चौधरी ने एक संक्षेप भाषण में कहा, द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद इतिहास में जिन नये अध्यायों की शुरुआत हुई है उसमें भारत एक नयी भूमिका निभा रहा है। भारत की इस ऐतिहासिक भूमिका को जिन लोगों ने सफल बनाया है उनके बीच मिस्टर फटफटिया का स्थान अद्वितीय है।

राष्ट्र के राजदूत फटफटिया ने दो पृष्ठों का टाइप किया हुआ

कागज पढ़कर विश्व इतिहास में भारत की भूमिका का विश्लेषण किया। एकाएक ऐसा लगा, नेहरू के 'डिसकवरी आफ इण्डिया' का सूची पत्र पढ़ गया। वहरहाल भाषण की एक टाइप की हुई प्रति मिलने पर मैं बहुत ही खुश हुआ। चारों तरफ़ हल्की तालियों की तड़तड़ाहट होने लगी, मिस्टर फटफटिया ने विनत मस्तक समवेत सज्जनों का अभिवादन स्वीकार किया।

"लेडीज एण्ड जेन्टल मैन', चौधरी साहब ने घोषणा की, "आइ विल नाउ रिक्वेस्ट यू ऑल टु मुव टु ड्रिंक्स।"

अबके ज़ोरों से तालियों की गड़गड़ाहट हुई। बेयरा की जो जमात अब तक पत्थर की मूरत की तरह खड़ी थी, एकाएक चलने-फिरने लगी। वे लोग रंग-बिरंगे ड्रिंक्स तरह-तरह के गिलास और जामों में बाँटने लगे। बेयरा की जमात के कुछ लोग भीड़ के बीच सोडावाटर और पानी का जग लेकर घूम-फिर रहे थे लेकिन किसी अभ्यागत या अभ्यागता को उन्हें छूते न देखकर मुझे बड़ा मज़ा आ रहा था। वह दृश्य बहुत-कुछ बड़े जंक्शन की रेलगाड़ी की पटरी के जैसा लग रहा था। चारों तरफ से ट्रेन आ-जा रही है, अचानक लगता है कि अब धक्का लगा कि अब लगा मगर ट्रेन खूबसूरती के साथ बगल की पटरी से विपरीत दिशा में निकल जाती है।

बेयरा मेरे पास भी ट्रे लेकर हाज़िर हुआ। मैंने एक गिलास सात्विक पेय पदार्थ यानी ऑरेंज स्क्वैश उठा लिया। बेयरा ने एक बार आँख उठाकर देखा; शायद सोचा, बगैर हाईकोर्ट देखे स्यालदह से सीधे यहाँ पहुँच गया हूँ।

स्क्वैश का गिलास हाथ में थामे चहलक़दमी के लिए निकलना चाहता ही था कि देखा, बेलबूटे की तरह निमंत्रित लोग चारों तरफ़ बिखर गये हैं। स्त्री-पुरुष सभी के हाथ में शराब है, करीब-करीब सभी के होठों में अत्यन्त सावधानी के साथ सिगरेट झूल रही है। इसके पहले देहाती औरतों को तंबाकू पीते देखा था, मगर औरतों का सिगरेट पीना

आगमन के उपलक्ष्य में धन्यवाद दिया है। आज की शाम उसके ठीक विपरीत दूसरी ही तरह का अनुभव हुआ।

अन्दर जाने पर देखा, लॉन के एक किनारे सभा का आयोजन किया गया है। श्रोताओं का दल बेंत की कुरसी पर आसीन है। मिस्टर फटफटिया और मिस्टर चौधरी के लिए दूसरी ओर दो सोफ़े और एक छोटी तिपाई रखी हुई है। रिपोर्टरों के लिए अलग से कोई इन्तज़ाम नहीं किया गया था। मैं श्रोताओं के दल के बीच एक कुरसी खींचकर बैठ गया। एयरपोर्ट के रिवॉलविंग विकन लाइट की तरह मैंने अपनी आँखें चारों तरफ़ घुमायीं। देखा, लॉन के एक छोर पर चौधरी साहब की विशाल इमारत है और उसके एक किनारे लंबी मेज़ के सामने सफेद झकमकाती वर्दी पहने बेयरा की एक जमात ढेर सारी बोतल और गिलास लिए पत्थर की मूरत की तरह धुंधली रोशनी में खड़ी है। मेरे चारों तरफ़ जो लोग बैठे थे उनमें औरत-मर्दों की संख्या बराबर ही होगी। ज़्यादातर लोगों की उम्र चार या पाँच के खाने में होगी, लेकिन उनकी वेश-भूषा, तौर-तरीके और चाकचिक्य से ऐसा लगा जैसे वे अनन्त यौवन के साधक-साधिकाएं हैं। लगा, ये लोग पैसे के बल पर जवानी को हाथ की मुट्ठी में रखे हुए हैं। मध्यवित्त घर में पैदा होकर औरतों को देखा है लेकिन उनके जिस्म के जिन कोमल भागों को इसके पहले देखने का सौभाग्य या दुर्भाग्य प्राप्त नहीं हुआ है, उन अंगों का नुक्त-छिपी आज पहले-पहल देखने को मिली।

इस बीच चौधरी साहब और मिस्टर फटफटिया आसन ग्रहण कर चुके हैं। मिस्टर चौधरी ने एक संक्षेप भाषण में कहा, द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद इतिहास में जिन नये अध्यायों की शुरुआत हुई है उसमें भारत एक नयी भूमिका निभा रहा है। भारत की इस ऐतिहासिक भूमिका को जिन लोगों ने सफल बनाया है उनके बीच मिस्टर फटफटिया का स्थान अद्वितीय है।

राष्ट्र के राजदूत फटफटिया ने दो पृष्ठों का टाइप किया हुआ

काग़ज पढ़कर विश्व इतिहास में भारत की भूमिका का विश्लेषण किया। एकाएक ऐसा लगा, नेहरू के 'डिसकवरी आफ इण्डिया' का सूची पत्र पढ़ गया। बहरहाल भाषण की एक टाइप की हुई प्रति मिलने पर मैं बहुत ही खुश हुआ। चारों तरफ़ हल्की तालियों की तड़तड़ाहट होने लगी, मिस्टर फटफटिया ने विनत मस्तक समवेत सज्जनों का अभिवादन स्वीकार किया।

"लेडीज एण्ड जेन्टल मैन", चौधरी साहब ने घोषणा की, "आइ विल नाउ रिक्वेस्ट यू ऑल टु मुव टु ड्रिंक्स।"

अबके ज़ोरों से तालियों की गड़गड़ाहट हुई। बेयरा की जो जमात अब तक पत्थर की मूरत की तरह खड़ी थी, एकाएक चलने-फिरने लगी। वे लोग रंग-बिरंगे ड्रिंक्स तरह-तरह के गिलास और जामों में बाँटने लगे। बेयरा की जमात के कुछ लोग भीड़ के बीच सोडावाटर और पानी का जग लेकर घूम-फिर रहे थे लेकिन किसी अभ्यागत या अभ्यागता को उन्हें छूते न देखकर मुझे बड़ा मजा आ रहा था। वह दृश्य बहुत-कुछ बड़े जंक्शन की रेलगाड़ी की पटरी के जैसा लग रहा था। चारों तरफ से ट्रेन आ-जा रही है, अचानक लगता है कि अब धक्का लगा कि अब लगा मगर ट्रेन खूबसूरती के साथ बगल की पटरी से विपरीत दिशा में निकल जाती है।

बेयरा मेरे पास भी ट्रे लेकर हाज़िर हुआ। मैंने एक गिलास सात्विक पेय पदार्थ यानी ऑरेंज स्क्वैश उठा लिया। बेयरा ने एक बार आँख उठाकर देखा; शायद सोचा, बग़ैर हाईकोर्ट देखे स्यालदह से सीधे यहाँ पहुँच गया हूँ।

स्क्वैश का गिलास हाथ में थामे चहलक़दमी के लिए निकलना चाहता ही था कि देखा, बेलबूटे की तरह निमंत्रित लोग चारों तरफ बिखर गये हैं। स्त्री-पुरुष सभी के हाथ में शराब है, करीब-करीब सभी के होंठों में अत्यन्त सावधानी के साथ सिगरेट झूल रही है। इसके पहले देहाती औरतों को तंबाकू पीते देखा था, मगर औरतों का सिगरेट पीना

यह पहले-पहल देखा। इसके अलावा इतने दिनों से सुनता आया था कि जो लोग शराब पीते हैं वे कमरे का दरवाज़ा बन्द कर बीवी को बिना जताये यह सब करते हैं। आज देखा, इतने दिनों से जो कुछ देखता-सुनता आ रहा था, वह सब झूठ है। सार्वजनिक दुर्गा पूजा की तरह स्त्री-रत्न को साक्षी बनाकर औरत-मर्दों का एक साथ शराब पीना ही आधुनिक सभ्यता की मर्मवाणी है।

एक कोने में पड़ी एक पिपिंग कुरसी पर जाकर बैठ गया। मेरी बग़ल में एक और व्यक्ति था, वह गिलास से आखिरी घूंट लेकर उठ गया। कई मिनट बाद ही एक अधेड़ व्यक्ति एक ऐंग्लो इंडियन युवती को खींचते हुए ले आया और मेरी बग़लवाली कुरसी पर बैठ गया। एक ही गिलास से दोनों ड्रिंक करने लगे। शरम से मैं न तो उठ पाता था और न ही बैठ पा रहा था। मुझे बेचैनी का अहसास होने लगा। मेट्रो लाइट हाउस में सिनेमा देखने के लिए जाने पर जो दृश्य हर वक़्त दिखायी नहीं पड़ता वैसा ही एक दृश्य मेरी बग़ल में अभिनीत हुआ। मेरे चेहरे पर लाली दौड़ गयी है, इसका मुझे अच्छी तरह पता चल गया।

बेयरा जैसे ही सामने पहुँचा, भले आदमी ने पुकारा, "बेयरा"।

ख़ानदानी गाहक सोचकर बेयरा ने भले आदमी के गिलास में ट्रे से दो गिलास शराब ढाल दी। इसके साथ छटांक-भर सोडावाटर लेने के लिए भले आदमी ने जैसे ही मुंह घुमाया कि मैं चौंक पड़ा। पांचेक दिन पहले इन्हीं के भाषण की मैंने रिपोर्टिंग की थी। यह सज्जन बंगाल के नामी शिक्षाविद हैं। इनकी लिखी पुस्तक बंगाल के लाखों छात्र-छात्राएँ स्कूल में पढ़ते हैं। मैंने भी इनकी पुस्तक पढ़ी है। लेकिन आज यह दृश्य देखकर घृणा से मेरा मन विषाक्त हो उठा।

बस मैं देर किये बग़ैर दफ़्तर चला आया। रिपोर्ट लिखते-लिखते तारा दा से पूछा, "अच्छा, यह तो बताइये, डॉक्टर सामन्त शराब पीते हैं? औरतों के साथ...."

मेरी ज़बान से बात छीनकर तारा दा ने जवाब दिया, "यह तुम नहीं जानते थे ?"

नेपुदा के साथ पहले-पहल जिस दिन इस दफ़्तर में आया था तब से अब तक लगभग एक साल का अरसा बीत चुका है। इस बीच मैं बहुत चक्कर लगा चुका हूँ। प्रधान संपादक हरिसाधन मित्तिर अब मेरे केवल हरि दा ही नहीं रह गये हैं बल्कि ज़रूरत पड़ने पर उनसे बहस-मुबाहसा भी कर लेता हूँ अखबार के रिपोर्टरों के अतिरिक्त बाक़ी लोगों को अब मैं आदमी के तौर पर गिनता ही नहीं। ठीक-ठीक स्वीकार न करने के बावजूद मैं रिपोर्टर का धर्म पालन कर घमण्डी हो गया हूँ—सबसे श्रेष्ठ रिपोर्टर होता है, उससे बड़ा कोई नहीं, यह भाव मुझमें पैदा हो गया है।

सिर्फ़ बाहरी लोगों को ही नहीं, अपने सहकर्मियों को भी मैंने कृपा-दृष्टि से देखना शुरू कर दिया है। उपसंपादकों को अनुवादक समझने लगा हूँ, स्पोर्ट्स रिपोर्टरों को मैदान का रिपोर्टर; सहसंपादक को कॉलेज का लेक्चरर और प्रूफ़ रीडरों को किरानी। नये रिपोर्टर के रूप में एक साल के दौरान मेरी प्रगति की ख्याति अच्छी ही कही जायेगी।

इतने दिनों के बाद हिसाब-किताब करने के बाद मैंने एक नये मुद्दे की खोज की। एक साल के दरमियान मुझे 'दैनिक संवाद' से एक भी पैसा नहीं मिला है, यह बात मेरी समझ में आयी। दो-चार दिन बाद सुविधानुसार तारा दा को इसकी सूचना दी तो उन्होंने मुसकराकर कहा, "हरि दा से कहो।" हरि दा कभी अकेले नहीं मिलते, हर वक़्त उन्हें उन्हें एक दल मुसाहिब और तावेदार घेरे रहते हैं। मैं बिना तनख्वाह का रिपोर्टर हूँ, यह बात किसी से कहने में शर्म लगती है, यही वजह है कि हरि दा के कमरे में झांककर लौट आता हूँ। इसी तरह एक-दो

माह बीत गये मगर हरि दा को मन की बात बता नहीं सका। आखिरकार कोई दूसरा उपाय न देखकर एक स्लिप लिखकर लावण्य के हाथ भेज दिया। स्लिप लिखकर भेजने से कोई काम हुआ या नहीं, यह समझ नहीं सका।

कई सप्ताह के बाद दोपहर के समय दफ़्तर आया। न्यूज डिपार्टमेन्ट में बैठकर हम रिपोर्टर और सब-एडिटर बूढ़े कोर्ट रिपोर्टर बाबू के बलात्कार के मामले का रिपोर्ट लिखने के आश्चर्यजनक कला-कौशल और सामर्थ्य पर बातचीत कर रहे थे कि तभी खजांची बाबू अन्दर आये। कुछ देर तक बगैर कुछ बोले चेहरे पर हँसी ले हम लोगों की बातचीत के रस का उपभोग करते रहे। बातचीत के बाद न्यूज डिपार्टमेन्ट से विदा होने के पहले मेरे कान में फुसफुसाकर कह गये, "अगले महीने से आपको दस रुपया भत्ता मिलेगा।"

आनन्द और उल्लास से मैं चिल्ला उठा, "लावण्य दस चाय, दस वेजिटेबल चॉप।"

'दैनिक संवाद' का रिपोर्टर होने के बावजूद ग्रैण्ड, ग्रेट ईस्टर्न में लंच-डिनर लेता हूँ। उपसंपादक गण वाइसराय के लॉज के बैनक्वेट या लाट साहब के महल के स्टेट डिनर की खबर लिखते हैं। लेकिन 'दैनिक संवाद' के दफ़्तर में उस तरह का बैनक्वेट या डिनर बहुत दिनों से नहीं हुआ है। दस प्याली चाय, दस अदद चॉप! सबने अवाक् होकर मेरे चेहरे की ओर ताका। सब-एडिटरों की क़लम रुक गयी, प्रूफ़रीडरों ने प्रूफ़ का शुद्धोच्चारण करना बन्द कर दिया। न्यूज डिपार्टमेन्ट के सभी एक-दूसरे के कान में फुसफुसाने लगे और मेरी ओर तिरछी निगाह से ताकते हुए हँसने लगे। टीका-टिप्पणी चल ही रही थी कि लावण्य गर्व के साथ बनमाली के केबिन के पूरे बटालियन यानी पतितपावन और केदार चन्द्र को अपने साथ लिए भीतर आया। लावण्य हमें एक-एक चॉप और एक-एक प्याली चाय देकर खुद भी चाय और चॉप लेकर बैठ गया। चारों तरफ़ से वाहाहा, उफ़, लवली इत्यादि आवाज ध्वनित

हुई। खाने के बाद आनुष्ठानिक धन्यवाद जताये बगैर सब-एडिटर अलक ने मुझे गोद में लेकर जैसे हो एक बार चारों ओर घुमाया, लावण्य चिल्ला उठा, "थ्री चियर्स फॉर बन्नू बाबू।"

"हिप हिप हुर्रे·····"

"हिप-हिप हुर्रे·····"

चारों तरफ से 'हिप-हिप हुर्रे' ध्वनि जगी।

इस तरह की परिस्थिति में अगर मैं एक संक्षिप्त भाषण न दूँ तो बेमानी जैसा लगेगा। कुरसी पर खड़े होकर मैंने कहा, "लेडीज एण्ड जेन्टलमैन!"

सभी हँसी से लोट-पोट हो गये। अलक ने टिप्पणी की, "हम लोगों के बीच श्रीमती की खोज तुमने कैसे कर ली?"

मेरे उत्साह में जरा भी कमी नहीं आयी। कहा, "मित्रो! आज आनन्द के इस तरह के क्षण मे मान लेना होगा कि यहाँ हम लोगों के बीच अनगिनत सुन्दरियाँ उपस्थित हैं।"

मैंने इसके बाद शुरू किया, "मित्रो, आज इस आनन्द के दिवस पर मैं आप लोगों को अगले कल का एक बैनर हेडलाइन का समाचार बताना चाहता हूँ और वह यह कि महामहिम मान्यवर हरि दा ने मुझे दस रुपया मासिक भत्ता देना स्वीकार कर लिया है।"

सुनकर सभी प्रसन्न हुए। अब मैं भी अपने सहकर्मियों के साथ इन्स्टॉलमेन्ट वेतन के लिए डाकू वासुदेव खजांची के कमरे में भीड़ लगाकर चिल्लाऊँगा; इन्क़लाब-ज़िन्दाबाद नारा लगाऊँगा, यह सोचकर सबने मेरा अभिनन्दन किया।

दस रुपया वेतन मिलने पर मेरी सूखी नदी में चाहे बाढ़ न आये मगर ज्वार-भाटा ज़रूर ही आने लगा। अब वनमाली के केबिन में नक़द पैसा देकर खाना नहीं खाता, माहवार इन्तज़ाम चालू हो गया। तारा दा के रिपोर्टिंग डिपार्टमेन्ट के तीन व्यक्तियों के बीच मुझे तीसरा स्थान प्राप्त हो गया। उपसंपादकों से भी मेरा संबंध आहिस्ता-

आहिस्ता घनिष्ठ होने लगा। मेरा कौन समाचार डव्ल कॉलम और कौन पहले पृष्ठ पर जायेगा, यह मैं स्वयं चौवीस प्वाइन्ट जयन्ती वोल्ड टाइप में हेडिंग तय कर सीधे प्रेस भेज देता हूँ। कभी-कभी टेलीप्रिंटर की खबर शॉर्टकर उपसंपादक को देता हूँ। जरूरत पड़ने पर कहता हूँ, "अलक, पार्लियामेन्ट का लीड आया है" या फिर चन्द्रकान्त बाबू के हाथ में कापी देकर कहता हूँ, "अपनी सिक्यूरिटी कौंसिल की कापी लीजिये। इससे उपसंपादकगण खुश ही होते थे। उनमें से वहुतेरे लोग मेरी सहायता भी करते थे। चेम्वर ऑफ़ कोमर्स की वार्षिक सभा में मेरे जाने की वात थी। भाभी की वहन को चिड़ियाखाना ले जाकर यह वात विलकुल भुला ही वैठा। लेकिन कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा। ऑफिस टेलीफोन किया""कौन? मनमोहन दा? चेंवर की वार्षिक वैठक में जाने का एसाइनमेन्ट था मगर जा नहीं सका। आप जरा पी० टी० आई० की कापी देखकर रिपोर्ट कर दीजिएगा। किसी को इस वात का पता नहीं चला, दूसरे दिन 'दैनिक संवाद' के प्रथम पृष्ठ पर स्टाफ़रिपोर्टरों के डव्ल कॉलम में खवर छपी—आगामी कल के हिन्दुस्तान को उद्योग की दिशा में आत्म-निर्भर वनाने के लिए निवेदन करते हुए चेंवर ऑफ़ कोमर्स की ८३वीं वार्षिक सभा के अध्यक्ष सर हरिदास टनठनिया ने मेहनतकशों को शान्ति के साथ तमाम उद्योग संवंधी विरोधों को मिटाने की सलाह दी। उन्होंने ऐसा कहा, उन्होंने यह भी कहा, उन्होंने खासतौर से कहा, उन्होंने उदारता के साथ कहा, उन्होंने उपसंहार में कहा, उन्होंने अन्त में कहा, इत्यादि रूप में चेंवर के सर हरिदास का भाषण पूरे डेढ़ कॉलम में छपा था।

इस प्रकार के तकनीकी सहयोग के अलावा हम लोगों के वीच और एक तरह का लेन-देन चलता था। और वह था रुपये-पैसे का लेन-देन। अपने कमरे में सिर झुकाये मैं रिपोर्ट लिख रहा हूँ, अचानक कान के पास फुसफुसाकर मोहन दा कहते हैं, "दो आना दो तो वच्चू।" मैं विना कुछ वोले जेव से एक दुअन्नी निकालकर दे देता हूँ। किसी-किसी

दिन रिपोर्ट लिखकर घर रवाना होने के वक्त न्यूज रूप में फोंफर दलाली करने के लिए जाने पर अलक या बारीन मुझ से कहता, "अरे बच्चू, खिसक मत जाना। आज तुम्हारा गेस्ट ऑफ ऑनर बनकर आखिरी ट्राम पर सवार हो बपौती होटल लौटना है। ट्रैफिक बेशक टु बे रहता है। ज़रूरत पड़ने पर मैं भी दण्डकर दूसरे के माथे पर लाद देता। 'दैनिक संवाद' के हम जैसे कर्मचारियों की हालत ऐसी थी कि लेन-देन करने में हमें शर्म का अहसास नहीं होता था, क्योंकि हम इस बात को भलीभांति महसूस करते थे कि आपस में इतना सहयोग न रहेगा तो हम लोगों के लिए जिन्दा रहना मुश्किल है। हम लोगों के इस लेन-देन में सबसे बड़ी मिठास यह थी कि हमें यह सब कर्ज़ वापस नहीं करना पड़ता। पंद्रह आना तीन पैसा वापस देने का नियम नहीं था लेकिन सोलह आना होते ही वह 'लोन' हो जाता था।

दिन मज़े में बीत रहे थे। मानता हूँ कि मैं, अलक और बारीन कुँआरे थे लेकिन जो लोग शादी-शुदा थे, जिन पर गृहस्थी का भार था, वे भी मौज से रहते थे। हम लोगों का 'दैनिक संवाद' का छोटा-सा संसार आनन्द से भरा-पूरा था। हम लोगों के इस छोटे संसार में राजनीति नहीं थी, प्रमोशन-इन्क्रिमेण्ट या स्थानान्तरण का कोई झमेला नहीं था। जहाँ दस रुपये से शुरू कर पचहत्तर रुपये में जिन्दगी और पद क्रम समाप्त हो जाते हैं वहाँ किस बात का झमेला रह सकता है? हमें अभाव था लेकिन दुख नहीं; कमी थी मगर हाहाकार नहीं; हम गरीब थे मगर दीनता हमारे साथ नहीं थी।

इसी तरह हम भविष्य की ओर बढ़ रहे थे—एक साथ, हँसते-मुसकराते हुए। न्यूज रूम में तेल के पकौड़े और फरकी खाते हुए मनमोहन दा कहते, "दस-पन्द्रह रुपये का ट्यूशन और पच्चीस रुपये की सब एडिटरी करके गृहस्थी चलाना मुश्किल है। छोटा लड़का तीन दिनों से..."

मनमोहन दा को इससे ज्यादा हम बोलने नहीं देते।

पकौड़े रखकर चिल्ला उठता, "हे गरीबी, तुमने मुझे महान् बनाया है, तुमने मुझे ईसा जैसा दान दिया है।"

फरकी और तेल के पकौड़े खाते-खाते ही हम आँख दबाकर एक-दूसरे की ओर देख लेते थे। अस्वस्थ मनमोहन दा की जेब में एक लिफ़ाफ़ा रख देते। मनमोहन दा बस इतना ही कहते, "तुम लोग मेरे लिए तकलीफ़ क्यों उठा रहे हो?"

इस बात का जवाब देने की कोई ज़रूरत नहीं पड़ती। अलक चिल्ला उठता, "शट अप····गेट आउट ऑफ़ दिस रूम।" इतना ही नहीं, सब-एडिटर लोग कहते, "मनमोहन दा तुमने तीन विक ऑफ़ नहीं लिया है, अगले तीन दिनों तक तुम्हें नहीं आना। अब शनिवार के मार्निंग शिफ़्ट में आना।"

इसके बाद मनमोहन दा कुछ बोल नहीं पाते थे। आँखें यद्यपि छल-छला आती थीं लेकिन दबी हुई प्रसन्नता की एक रेखा भी उनके चेहरे पर उभर आती थी। शुरू में धीरे-धीरे उसके बाद जल्दी-जल्दी मन-मोहन दा दफ्तर से बाहर निकल जाते।

मनमोहन दा के विदा होते न होते न्यूजरूम फिर शोर-गुल से भर जाता। टेलीप्रिन्टर के क़दम से क़दम मिलाते हुए न्यूज रूम की कार्य-तालिका पुनः शुरू हो जाती।

मेट्रोपाल होटल के प्रेस कान्फ्रेन्स और हाजरा पार्क की पब्लिक मीटिंग की कार्यवाही का संवाद लेकर शुक्रवार के बाद दफ्तर के अन्दर जाते ही ठिठककर खड़ा हो गया। सस्वर समवेत अंग्रेजी गीत सुनकर एकाएक ऐसा लगा जैसे पार्क सर्कस स्थित 'दैनिक संवाद' कार्यालय आने के बजाय डालडा मार्का अंग्रेजों के ठिकाने पर पहुँच गया हूँ। मैंने चारों तरफ़ ग़ौर से देखा। नहीं, ठीक ही स्थान पर आया हूँ। फिर हमारे दफ्तर में अंग्रेजी गीत क्यों चल रहा है? विस्मय में आकर न्यूजरूम की ओर बढ़ने लगा। दो-चार क़दम आगे बढ़ते ही कानों में आवाज आयी, "लांग लिव ऑवर डॉर्लिंग मनमोहन दा, हाउ लवली इज ऑवर

भाभी जी एण्ड गॉड ब्लेस दि नेफ्यू"""।" अब मुझे समझने में तकलीफ़ नहीं हुई। न्यूज रूम में कदम रखते ही देखा, मेज को प्लेटफ़ार्म बनाकर एक कुरसी पर मनमोहन दा को बिठा दिया गया है और उनके सामने सब-एडिटर और प्रूफ़रीडरों की लंबी कतार है। मेरे जाते ही गीत थम गया। अब देखा, एक-एक कर सभी मनमोहन दा के पास जाते हैं और उनके हाथ से कुछ लेकर मुंह में दबा लेते हैं। मैं जैसे ही वहाँ पहुँचा बारीन ने इशारे से मुझे कतार में खड़े होने को कहा और यथा समय बदस्तूर नारियल के दो लड्डू मेरे मुंह के अन्दर चले आये।

बाद में पता चला, पाँच लाख के पाँच पेनसिलिन इन्जेक्शन से मनमोहन दा का लड़का दो दिन में स्वस्थ हो गया और खुश होकर मनमोहन भाभी ने हम लोगों के लिए लड्डू का यह सन्देश भेजा है।

सुख-दुख, अभाव-आनन्द के बीच हम एक-दूसरे के निकट खिंच रहे थे। एक खासे लंबे अरसे के बाद सब एडिटर प्रकाश सेन की विचित्र जीवन-कहानी से परिचित हुआ। कब, किस क्षण प्रकाश दा के प्रति मुझमें श्रद्धा उमड़ आयी है, इसका मुझे पता ही नहीं चला। दामोदर नदी की बाढ़ जैसी उनकी उच्छलता आज व्यतीत की कहानी हो गयी है। पूजा की छुट्टी के दौरान वाराणसी की बाई जी की हवेली की उनकी उच्छृंखलता आज पिरामिड के तले दब गयी है।

विजया दशमी के दो-चार दिन बाद बिडन स्ट्रीट होकर जाते समय मिठाई के लोभ में प्रकाश दा के घर पर गया। हाथ लगा कर पैर छुऊँ कि इसके पहले ही बाधा का सामना करना पड़ा। प्रकाश दा बोले, "छि: छि:, तुम मेरे जैसे विधर्मी का पैर क्यों छूने जा रहे थे?"

"और किसी कारण नहीं, मिठाई खाने के लोभ से।"

मिठाई मिल गयी थी, मगर मैं प्रणाम नहीं कर सका। बहुत दिनं के बाद सरदियों की एक रात मैं और प्रकाश दा देह पर चादर लपेटे

तर के फ़ाटक पर एक ही रिक्शे पर सवार हुए। हम दोनों ने मिल-
र रिक्शेवाले को स्यालदह-बहू बाज़ार के मोड़ पर दस आना क़िराया
या और उसे वहीं छोड़ दिया। इसके बाद हम दोनों ने केदार-बदरिका
आश्रम के तीर्थयात्रियों की तरह पदयात्रा करना शुरू कर दिया।
स्यालदह स्टेशन की घड़ी में देखा, रात के एक बजकर बीस मिनट हो
चुके हैं। गहरायी रात में कलकत्ता नगरी मायाविनी हो जाती है, देह-
मन को अभिभूत कर लेती है। उस वक्त कलकत्ता नगरी घोर संसारी
को भी वैरागी बना देती है। प्रकाश दा भी उस दिन अपने आपको
विस्मृत कर बैठे थे। बीते जीवन के टालीगंज बनारस वाली बाई जी के
जलसाघर में लौट कर चले गये थे। बनारस के दशाश्वमेध घाट, पंच-
गंगा घाट, मणिकर्णिका और हरिश्चन्द्र घाट के महाश्मशान की परिक्रमा
की थी।

....तीन विषयों में 'लेटर' लेकर सतीश सेन के लड़के प्रकाश ने जब
प्रथम श्रेणी में मैट्रिक की परीक्षा पास की तो पूरे कूचबिहार शहर में
हलचल मच गयी। बार से सभी लोगों ने सतीश बाबू का अभिनन्दन
िया। वृद्ध सरकारी वकील हिमांशु बाबू ने कहा, "सतीश, लड़के प
रा ध्यान रखा करो। इस तरह के इन्टेलिजेन्ट लड़के बहुत कम ह
होते हैं। प्रकाश अनायास ही प्रेसिडेन्सी कालेज में भर्ती हो गया।
वर्ष के बाद आई० ए० का इम्तिहान देकर कूचबिहार लौट आय
परीक्षा-फल निकलने के दिन सतीश बाबू और उनकी पत्नी दुर्गा
का जाप करते हुए टेलिग्राम-प्यून के इन्तज़ार में सामने के बरामदे
बैठे रहे, लेकिन प्रकाश बगैर चिन्तित हुए मुहल्ले के लड़कों के
क्रिकेट खेलने राजा की हथेली के मैदान में चला गया।

बहुत देर तक इन्तज़ार करने पर भी जब डाकिया नहीं आ
सतीश बाबू भोजन करने घर के अन्दर चले गये। कुल मिला
कौर मुँह में रखा ही होगा कि तभी बाहर साइकिल की घ
सुनकर सतीश बाबू की पत्नी हड़बड़ा कर वहाँ भागी

दुर्गा नाम जपते-जपते टेलिग्राम का लिफाफा लिए तेज़ क़दमों से अन्दर चली गयीं। लिफ़ाफ़ा खोलकर तार पति की ओर बढ़ा दिया। तार पढ़कर खुशी और उत्तेजना से चिल्लाते हुए सतीश बाबू जूते हाथ ही पूजाघर के अन्दर चले गये और गृह देवता को कोटि-कोटि प्रणाम निवेदित किया। पूजाघर से चिल्लाते हुए सतीश बाबू ने पूरे कूचबिहार शहर को जना दिया कि उनकी एकमात्र सन्तान प्रकाश को युनिवर्सिटी-भर में तीसरा स्थान प्राप्त हुआ है। आवाज़ सबके कानों में न पहुँचने के बावजूद तीसरे पहर के पहले ही सारे शहर को मालूम हो गया कि प्रकाश प्रतियोगी हुआ है। प्रकाश को तीसरा स्थान प्राप्त हुआ है। जिसके चलते इतनी उत्तेजना थी उसमें नाम मात्र की भी अशोभनता नहीं थी। मानो, अस्वाभाविक कुछ भी नहीं हुआ है।

शाम के बाद सतीश बाबू का बाहरी कमरा शहर के नामी-गिरामी व्यक्तियों से भर गया। सतीश बाबू की पत्नी ने सबके हाथ में मिठाई की थाली थमा दी और प्रकाश ने माथा नवाकर सबका आशीर्वाद ग्रहण किया। सेशन जज राय बहादुर सान्याल ने कहा, "लड़के को बैरिस्टरी पढ़ाने का इन्तज़ाम कीजिये। हेडमास्टर सर्वेश ने कहा, "सतीश दा, प्रकाश को पी० आर० एस० बनने दो।" किसी ने कुछ और किसी ने कुछ सलाह दी। सतीश बाबू ने सबके प्रस्ताव पर 'जी हाँ-जी हाँ' कहा।

आखिर में प्रकाश ने अंग्रेज़ी में ऑनर्स लेकर पढ़ना शुरू किया। दो वर्ष बाद गाउन पहन सिनेट हॉल से गोल्ड मेडल लेकर बाहर निकला। अंग्रेज़ी लेकर एम० ए० पढ़ने के समय भी वह अपनी ख्याति को बनाये रहा।

कुछेक साल मुफ़स्सिल कॉलिज में काम करने के बाद प्रकाश दा को कलकत्ते के नामी कॉलिज में लेक्चरर होने का मौका मिला। कलकत्ते में सुविधाजनक डेरा न मिलने के कारण प्रकाश दा ने बाली के चौधरी मुहल्ले में मकान किराये पर लिया और वहीं से कलकत्ता आना-जाना शुरू कर दिया। नौ बजकर तैंतालीस मिनट की डाउनलोकल पकड़

प्रकाश दा जाता और पाँच बजकर पाँच मिनट में खुलने वाली बंडेल या पाँच बजकर पंद्रह मिनट में खुलने वाली वर्धमान लोकल से बाली वापस आता था। इसी तारकेश्वर लोकल में अचानक एक दिन अप्रत्याशित तौर पर प्रकाश दा को अपने छात्र-जीवन के मित्र विमलेन्दु से मुलाकात हो गयी।

पैदल चलते-चलते हमलोग राजा बाज़ार पार कर चुके हैं। प्रकाश दा ने एक पासिंग शो सिगरेट सुलगाकर धुएँ का गुबारा निकाला। बोले, "जानते हो बच्चू, मेरे जीवन की कहानी पर उपन्यास लिखा जा सकता है, सिनेमा बनाया जा सकता है। तब हाँ, इतना जान लो, जब मैंने सुना कि विमलेन्दु को फ़िल्म लाइन में ख्याति प्राप्त हो चुकी है तो मैंने शुरू में रोमांच का अनुभव किया। उसका कपड़ा-लत्ता और रंग-ढंग देखकर समझ गया कि विमलेन्दु को अच्छी आमदनी हुई है। तारकेश्वर लोकल में बैठे-बैठे फ़िल्म लाइन की बहुत सारी कहानियाँ सुनीं। तीन-चार महीने बाद मुझे पता चला कि विमलेन्दु फ़िल्म का निर्देशन कर रहा है। बाद में कॉलेज से गैरहाजिर रहकर मैं फ़िल्म की शूटिंग देखने टालीगंज जाने लगा। धीरे-धीरे फ़िल्म लाइन के बहुतेरे व्यक्ति और 'ए जीवन पूर्ण कर' फ़िल्म की नायिका गायत्री देवी से मेरी जान-पहचान हो गयी।

"ब्रिफकेस बग़ल में रखकर मैं एक फ़ोल्डिंग चेयर पर फ़्लोर पर बैठ जाता और दिन-भर शूटिंग देखता रहता था। दो साल बाद छात्रों को लेक्चर देने के बदले टालीगंज स्टूडियो के फ़्लोर के प्रति मेरा आकर्षण बढ़ गया। स्टूडियो के सभी आदमी मुझे प्रोफेसर कहकर पुकारते थे, बहुतेरे लोग श्रद्धा भी करते थे। ऐसा एक भी आदमी न था जो मेरा मजाक उड़ाये। मगर अचानक एक दिन ...।"

शूटिंग के बाद मेकअप उतारकर घर जाने के समय गायत्री वैनिटी बैग नचाते-नचाते प्रकाश दा के सामने आकर खड़ी हो गयी। गायत्री ने शरारत भरी मुसकराहट के साथ प्रकाश दा की ओर ताका। उसके बाद

आहिस्ता से प्रकाश दा का हाथ पकड़कर कहा, "कम ऑन प्रोफेसर।" कॉलेज के क्लास रूम में बैठकर जो प्रकाश सेन भाषण की झड़ी लगा देता था, उसी प्रोफेसर के मुंह से आज एक भी शब्द नहीं निकला। चरित्रवान् और वीर्यवान होने के बावजूद आज गाड़ी में गायत्री की बगल में बैठे प्रकाश दा को सिहरन का अनुभव होने लगा। बहुत दूर से विधाता का अट्टहास तैरता हुआ प्रकाश दा के कानों में आया।

लैंसडाउन-मनोहरपुकुर के पास एक बहुत बड़ी इमारत के पास गाड़ी आकर खड़ी हुई। गायत्री ने नीचे उतरकर कहा, "आइये प्रोफेसर साहब, एक प्याली चाय पीते जाइये।" प्रकाश दा बगैर कुछ बोले अभिनेत्री के पीछे-पीछे ऊपर चला गया। सामने के सोफ़े पर वैनिटी बैग फेंक गायत्री देवी ने पुकारा, "ललिता।"

सिर पर घूंघट रखे ललिता दरवाजे की सीढ़ी पर आयी। ऊंची एड़ीवाले जूते को खोलते-खोलते गायत्री देवी बोली, "चाय-नाश्ता भेज दो और चांदनी पिक्चर्स के मैनेजर साहब आयें तो कह देना कि मेरी तबीयत खराब है। कल सवेरे मुझे फ़ोन करें।"

ललिता अन्तर्धान हो गयी मगर कई मिनट बाद ही दो प्लेट नाश्ता और दो प्याला चाय लिए कुछ क्षणों के लिए आयी।

प्रकाश दा ने नाश्ता किया, चाय पी और अभिनेत्री के सान्निध्य का उपभोग किया। प्रकाश दा की छाती की धड़कन बढ़ गयी, धमनियों में लोहू तेजी से प्रवाहित होने लगा। गायत्री देवी की उष्ण उसांस का भी अनुभव हुआ। लेकिन आखिरी ट्रेन पकड़ डेरे पर लौटने की व्यग्रता के कारण प्रोफेसर प्रकाश सेन ने यौवन का निमंत्रण ठुकरा दिया। गायत्री देवी ने देहरी पर खड़ी होकर विदा किया। होंठों को दाँत से काटती हुई अपलक खड़ी रहीं। ब्रिफ़केस थामे प्रकाश दा हतप्रभ जैसा हो गया था। गायत्री ने बस इतना ही कहा था, "प्रोफेसर कल फिर आना।" प्रकाश दा ने सिर हिलाकर स्वीकृति जतायी थी।

आखिरी ट्रेन के पिछले डिब्बे में बैठा प्रकाश दा गायत्री की बातें

करने लगा। ऐसी हालत थी जैसे—धन जन यौवन दोसर वंधुजन, विनु शून्य भेल ए तीन भुवन। लेकिन क्यों ? मैं क्या गायत्री से वत करने लगा हूँ ? प्रोफेसर प्रकाश सेन को कोई उत्तर नहीं मिलता उसे 'दि रिंग एण्ड दि बुक' की याद आयी। तारकेश्वर लोकल के खिरी डिब्बे में बैठकर प्रकाश दा अनजाने ही दुहराने लगता है—

"....O Lyric love,
half angle and half bird,
And all a wonder
and a wild desire."

उसके बाद उसे टॉमस मिड्लटॉन की याद आती है—

Love is all in fire,
and yet is ever freezing.
Love is much winning.
yet is more lessing;
Love is ever sick
and yet is never dying;
Love is ever true
and is ever lying,
Love does doat in liking;
and is mad loathing;
Love is indeed anything,
yet indeed is nothing.

दूसरे दिन सवेरे ब्रिफ़केस हाथ में लिए तारकेश्वर लोकल में बै कॉलिज रवाना हुआ था। दिन-भर छात्रों को शेक्सपीयर-ब्राउनिंग टेनिसन पढ़ाता रहा, लेकिन नित्यकर्म की तरह वर्धमान या वण्डे लोकल पर सवार हो डेरे पर लौट नहीं सका। लैंसडाउन-मनोहर पु

के मोड़ के दो मंज़िले मकान में चला गया था। उस दिन प्रकाश दा चुपचाप नहीं रह सका था, गायत्री से हास-परिहास, आमोद-विनोद में तल्लीन हो गया था। दूसरे दिन प्रकाश दा कॉलेज से फिर गायत्री भवन चला गया था। लखपति उर्वशी-सी सुन्दरी अभिनेत्री गायत्री के अन्तरंग सान्निध्य में बहुत देर तक रहने के कारण प्रकाश दा के मन में शायद कुछ दुर्बलता भी उमड़ आयी थी। शायद लैंसडाउन से हावड़ा होते हुए बाली न जाकर यहीं थके-माँदे शरीर को सुख की सेज पर निढाल छोड़ देने की धुंधली उम्मीद और आकांक्षा उसके मन में मचलने लगी थी। मगर ऐसा नहीं हो सका। सवा नौ बजते न बजते गायत्री ने कहा था, "प्रोफेसर, तुम्हारी आखिरी ट्रेन दस बजकर बीस मिनट पर है न ?"

"हाँ।"

"फिर तैयार हो जाओ। इसके बाद रवाना होगे तो दौड़कर जाना पड़ेगा।"

प्रकाश दा बायें हाथ से धोती की चुन्नट और दाहिने से ब्रिफकेस थामें नीचे उतर आया। दोनों आँखों से गायत्री की ओर जी-भर निहारा। मन-ही-मन सोचा, तुम्हारे अलावा और किसका नाम जीवन-भर जपता रहूँ ? प्रकाश दा ने जबान से बस इतना ही कहा, "चलूँ।"

"कहो, फिर आऊँगा।"

चेहरे पर हँसी लेकर प्रकाश दा विदा हुआ था। प्रोफेसरी करता था न, इसलिए किंचित् भावुक होना स्वाभाविक है। तारकेश्वर लोकल के आखिरी डिब्बे में बैठकर सोचा था, यह विदाई नहीं, कल के मिलन की तैयारी है !

इसी तरह दिन बीतते जा रहे थे। सात दिनों के बाद सप्ताह बीत गया, सप्ताह के बाद महीना और महीने पर महीने लुढ़कने के बाद साल पूरा होने का वक्त भी आ गया। अब दुगुना पैसा मिलने पर भी गायत्री पाँच बजे के बाद शूटिंग नहीं करती, हालाँकि पूरे टा

उसको चाहने वालों की भरमार है। निर्माताओं का दल असन्तुष्ट है मगर उनके सामने दूसरा कोई उपाय नहीं। प्रकाश दा छह बजे कॉलेज से वापस आये कि इसके पहले ही नाश्ते का प्लेट लिए गायत्री बार बार घड़ी की ओर देखती है। उसके बाद जब दोनों नाश्ता करने लगते हैं तो गायत्री पूछती है, "आज क्या-क्या पढ़ाया ?"

एक अदद पूरी और आलूदम के एक पूरे आलू को मुँह में रख प्रकाश दा विकृत उच्चारण के साथ कहता, "मर्चेन्ट ऑफ़ वेनिस।"

फिर सवाल किया जाता, "अच्छा, प्रोफेसर मित्र की बीवी कैसी हैं ? डॉक्टर ने कहा कि ऑपरेशन करना ही होगा ?"

प्रकाश दा खाते-खाते ही सवालों का जवाब देता। गायत्री नाश्ता करते-करते ही कॉलेज की सारी खबरों से वाक़िफ़ हो जाती।

"अच्छा, तुमने बताया था कि तुम लोगों के थर्ड इयर के मृणाल घोष के पिताजी का देहान्त हो गया है। अब उन लोगों की फ़ैमिली की देख-रेख कौन करेगा ?"

विमलेन्दु और फ़िल्मी दुनिया के बहुतेरे लोग प्रकाश दा को सन्देह की निगाह से देखने लगे। लेंसडाउन-मनोहर पुकुर के नौजवानों की नज़र प्रकाश दा पर पड़ती तो वे बेरोकटोक प्रकाश दा के खिलाफ़ अशोभनीय राय ज़ाहिर करते। एकमात्र ललिता को ही उस पर कोई सन्देह नहीं था। वह जानती थी कि दीदी जी प्रोफेसर बाबू को प्यार करती है। जानती थी कि दोनों एक-दूसरे को एकान्त में पाना चाहते हैं लेकिन उस चाह और प्राप्ति में रक्त-मांस का रिश्ता नहीं है, इन्द्रिय-दुर्बलता का नामोनिशान नहीं है। ललिता एक दिन देहरी पर खड़ी होकर सुन रही थी....

"अच्छा यह तो बताओ गायत्री, तुमने इस जिन्दगी में ढेरों आदमियों को देखा-परखा है, बहुतों के संपर्क में आ चुकी हो, लेकिन उन्हें छोड़कर मुझसे प्रेम क्यों करने लगी ?"

दीदी जी हँस देती हैं। उसके बाद कहती है, "उत्तर देना क्या ज़रूरी है ?"

प्रोफेसर बाबू कहते हैं, "अगर दो तो मुझे प्रसन्नता होगी।"

उसके बाद दीदी जी कहती हैं, "जानते हो प्रोफेसर, मुझे मालूम है कि लाखों आदमी मुझे चाहते हैं। जिन्दगी में जिन्हें अपने-आस-पास पाया है, वे मेरे जिस्म के प्रत्येक रोएँ को लालची निगाह से देखते हैं। वे मेरी संपत्ति पाना चाहते हैं। लेकिन स्टूडियो के फ्लोर में एकमात्र तुम्हीं को एक ऐसे व्यक्ति के रूप में पाया जो मेरी देह की ओर हिंसक पशु की तरह नहीं ताकता।"

ललिता देहरी से झाँककर देख रही थी, दीदी जी प्रोफेसर के हाथों को नचाती हुई बोली, "यही वजह है कि मैं तुमसे प्रेम करने लगी। तुम्हें अपने निकट पाना चाहा। तुम्हें अपनी भावी संतान के पिता के रूप में स्वीकार कर लिया।"

प्रोफेसर बाबू ने दीदी जी को पकड़कर कहा, "गायत्री!"

दीदी जी ने प्रोफेसर साहब के कंधे पर अपना सिर निढाल छोड़-कर टूटे हुए स्वर में कहा, "बोलो।"

ललिता अब वहाँ रुकी नहीं, हड़बड़ा कर रसोईघर में चली गयी थी।

दुर्गापूजा के समय प्रकाश दा को कूचविहार जाने का मन नहीं था मगर गायत्री की खातिर जाना पड़ा। प्रकाश दा ने एक और पासिंग शो सिगरेट सुलगायी। उसके बाद मुझसे कहा, "जानते हो बच्चू, मेरा घर जाने का मतलब नहीं है, यह सोचकर गायत्री ने क्या कहा था? कहा था, मेरे कारण अगर तुम्हें माँ-बाप के स्नेह से वंचित होना पड़े तो वैसी स्वार्थी औरत बनकर मैं तुम्हें पाना नहीं चाहती। तुम किसी चीज से वंचित हो जाओगे, यह सोचकर मैंने तुमसे प्रेम नहीं किया है। हम-तुम किसी अतिरिक्त वस्तु को प्राप्त करेंगे, इसी उद्देश्य से इस प्रेम ने जन्म लिया है।"

सिगरेट का कश लेते हुए प्रकाश दा ने कहा, "इसके वाद कभी मुझे हिम्मत नहीं हुई कि कहूँ कि छुट्टी के वाद घर नहीं जाऊँगा। इसके अलावा मेरे जाने का सारा इन्तज़ाम गायत्री ही कर देती थी। कॉलेज छुट्टी होने के दो-तीन सप्ताह पहले ही गायत्री माँ के लिए साड़ी-शमीज, वावूजी के लिए धोती-कुरता और मेरे लिए धोती-कमीज़-रूमाल—यहाँ तक कि हमारे किराये के मकान के नौकर विक्रम के लिए कपड़े-लत्ते खरीद देती थी।"

मानिकतल्ला का मोड़ पारकर हम विडन स्ट्रीट में चले आये। दो-चार मिनट चलने के वाद प्रकाश दा के डेरे के सामने पहुँचे। प्रकाश दा के स्वर में भारीपन आ गया है, इसका मुझे पता चल गया। आवाज़ जैसे रुंधती जा रही थी। अंधेरे में प्रकाश दा का चेहरा भली-भांति देख नहीं सका, लेकिन यह समझने में कोई कठिनाई नहीं हुई कि उसकी आँखें छलछला आयी हैं।

प्रकाश दा वोला, "चूँकि गायत्री की कहानी है इसलिए इसका अन्त नहीं हो सकता। इतना ही जान लो कि उसका प्रेम पाकर मेरा जीवन धन्य हो गया था। घटना चक्र से मेरे माँ-वाप को भी गायत्री के वारे में पता चल गया था। उन्होंने मन ही मन गायत्री को पुत्रवधू के रूप में स्वीकार भी कर लिया था। लगभग दो साल वाद हाई ब्लड प्रेशर के कारण वावू जी का देहान्त हो गया। वहुत दिनों के संकोच को परे ठेल कर गायत्री मुझे अपने साथ ले कूचविहार गयी थी। गायत्री के सेवा-जतन और सांत्वना से माँ बहुत ही खुश हुई थी। वा[illegible] जी का मृत्युशोक माँ ने गायत्री को अपने पास पाकर झेल लिया था।

"मामा माँ को अपने साथ लेकर जव रंगपुर चले गये तो हम क[illegible] कत्ता लौट आये। लगभग एक सप्ताह वाद एक फिल्म के आउटडोर शू[illegible] के सिलसिले में वाराणसी जाने का कार्यक्रम वना। मुझे भी ज़[illegible] खींचकर ले गयी। तीनेक दिन में शूटिंग का काम खतम हुआ ले[illegible] हम वहीं रुक गये। हम सारनाथ गये; हिन्दू युनिवर्सिटी, राम[illegible]

पैलेस, विश्वनाथ मंदिर देख आये हर रोज शाम के वक्त हम तुलसी-घाट, हरिश्चन्द्र घाट, दशाश्वमेध घाट, मणिकर्णिका घाट, पंचगंगा घाट को परिक्रमा करते थे। एकबार टिकट लौटाकर हमने और तीन-चार दिन ठहरने का निश्चय किया। लेकिन दूसरे दिन महाराणा चैतसिंह के राजमहल से लौटने के समय हमारा ताँगा एक लॉरी से टकरा गया और मेरा सजा-सजाया बाग उजड़ गया। लगभग दो घण्टे के बाद होश आने पर अस्पताल में गायत्री का क्षत-विक्षत प्राणहीन शरीर देखने को मिला। उसके बाद मैं रोया था या नहीं, यह बात याद नहीं। तब हाँ, इतना जरूर याद है कि हरिश्चन्द्र घाट के महाश्मशान में गायत्री की अन्त्येष्टि क्रिया की थी।"

चुन्नट के छोर से प्रकाश दा ने आँखों का कोर पोंछा।

"जानते हो बच्चू, इसके बाद मैं विक्षिप्त जैसा हो गया। नहाना, खाना-पीना छोड़कर अस्पताल के चारों ओर और हरिश्चन्द्र घाट के मसान में गायत्री को खोजे चलता था।"

पसलियों को कँपाने वाली लंबी साँस लेकर प्रकाश दा ने इसके बाद कहा, "इसके बाद मैं अस्वाभाविक स्थिति में आ गया। दिन के वक्त नशे की खुमारी दूर होते ही अस्पताल और हरिश्चन्द्र घाट भागा-भागा जाता था। रात के समय मीना बाजार लौट आता था।

"बाद में सुनने को मिला, इसी तरह मैंने लगभग एक साल गुजार दिया। ललिता और माँ ने गायत्री को लौटा लाने का वचन देकर बड़ी मुश्किल से बाई जी के कोठे की ठुमरी और शराब की मजलिस से मेरा उद्धार किया। कलकत्ता लौटकर एकाध साल तक चुपचाप बैठा रहा। शेक्सपीयर-बायरन शेली टेनिसन सबको भूल गया। माँ के देहान्त के बाद नब्बे रुपये के कैनवसर का काम स्वीकार कर जबलपुर चला गया। उसके बाद बरेली में सिनेमा-हॉल की मैनेजरी की। आठ-दस साल तक जहाँ-तहाँ मारे-मारे फिरने के बाद पुरी में मनमोहन दा से परिचय हुआ और तीन बरसों से 'दैनिक संवाद' में काम कर रहा हूँ।"

प्रकाश दा ने घर का ताला खोला। घर के अन्दर जाकर स्विच दबाकर बत्ती जलाते ही मेरी निगाह सामने की मेज की घड़ी की ओर गयी। देखा, पाँच बजने में लगभग दस मिनट बाकी हैं। प्रकाश दा ने स्टोव पर चाय का पानी रख दिया। बोले, "बच्चू ललिता के अलावा मेरे जीवन की कहानी और कोई नहीं जानता। आज तुम भी जान गये। प्याली-तश्तरी-चाय-चीनी-दूध निकाल कर बोला, "शायद आज से तुम मुझे नफरत की निगाह से देखना शुरू कर दोगे, मुझे दुश्चरित्र समझने लगोगे। तुम्हें जो भी मर्जी हो मेरे बारे में सोच सकते हो, लेकिन गायत्री के बारे में कहने पर मुझे अपार शान्ति मिलती है। लगता है, वह मेरे आस-पास है, बात कर रही है, हँस रही है। पूरा अतीत मेरे सामने आकर खड़ा हो जाता है।"

दो प्याली चाय लेकर हम पलंग पर बैठ गये। बिना कुछ बोले चाय पीना खत्म कर मैं उठकर खड़ा हो गया। रात-भर प्रकाश दा की वेधक जीवन-कथा का सिनेमा देखकर मेरी वाक्-शक्ति अवरुद्ध हो गयी थी।

बाहर उजास छा गया है। प्रकाश दा के घर से निकलने के बाद ही डेरे पर लौटने की व्यग्रता महसूस की। पैदल चलकर डेरे पर लौटने के बाद याद आया, विद्यार्थी-जीवन में गायत्री देवी की फिल्म देखने के लोभ में कितनी ही बार कतार में खड़ा हो चुका हूँ। उनका अभिनय देखकर मुग्ध हुआ था। वाराणसी में इस अभिनेत्री की मृत्यु होने के संबंध में कैफे-रेस्तराँ में अनेक अश्लील और अजीब कहानियाँ सुन चुका हूँ। अपराधी मन लेकर मैं अपने डेरे पर लौट आया।

जिन असिस्टेन्ट एडिटर, सब एडिटर, स्पोर्ट्स एडिटर, फोटोग्राफ़र और प्रूफ़रीडरों को पहले मैं आदमी समझता ही नहीं था, अब वे लोग मुझे अच्छे लगने लगे हैं। और सिर्फ़ अच्छे लगने की बात नहीं है, उनमें

से बहुतों को मैं प्यार करने लगा हूँ, बहुतों को श्रद्धा की दृष्टि से देखने लगा हूँ। समाचार-पत्र प्रकाशन के मामले में इनके व्यक्तिगत और सामूहिक महत्त्व को धीरे-धीरे समझने लगा हूँ। बाजार में अनगिन प्रकार की साग-सब्जी, अनाज, मछली, मांस, तेल, मसाला मिलते हैं, लेकिन ठीक से चीजों को खरीदकर, अच्छी तरह रसोई पकाकर सुस्वादु भोजन तैयार करना एक प्रशंसनीय काम है। उसी तरह समाचार-पत्र के कार्यालय में दुनिया-भर की खबरें चौबीसों घण्टे आती रहती हैं और उन्हें ठीक से परख कर उनके महत्त्व के अनुसार सहेज-सँवारकर हर रोज सवेरे हरेक आदमी के निकट रखना बुद्धि और सामर्थ्य की बात है। अपने सहकर्मियों को इस बुद्धि और सामर्थ्य पर मैं मुग्ध हूँ।

कई वर्षों तक काम करने के बाद मेरी समझ में यह आ गया है कि आधुनिक सैन्य-वाहिनी की तरह समाचार-पत्र कार्यालय का कोई व्यक्ति नगण्य नहीं है। खास-खास परिस्थितियों में किसी-किसी का प्रयोजन और महत्त्व देखकर मैं अवाक् हो जाता था। आधुनिक सैन्य-वाहिनी के रसोइये तक को अस्त्र-शस्त्र चलाने की बाक़ायदा ट्रेनिंग लेनी पड़ती है; क्योंकि फारवर्ड एरिया में जाने पर रसोइये को भी साथ में जाना पड़ता है और ज़रूरत पड़ने पर लड़ाई लड़नी पड़ती है। लड़ाई के समय सैन्य-वाहिनी विक्षिप्त हो जाती है तो सेना के निचले तबके के कर्मचारियों को नेतृत्व स्वीकार कर दुश्मनों के खिलाफ़ लड़ना पड़ता है। खास-खास इलाके में आर्मड कोर के लोगों को इंजीनियरिंग विभाग का काम करना पड़ता है, सिगनल के लोगों को राइफ़ल सँभालनी पड़ती है। अखबार के दफ्तर में भी बीच-बीच में ऐसा ही होता है। रात दस बजे गैली देखने के लिए जाने पर पता चला, सपादकीय नहीं है। तलाश करने पर मालूम हुआ, प्रेस में भी उसकी कोई प्रति नहीं गयी है। किसी कारणवश हरिसाधन दा या कोई दूसरा असिस्टेन्ट एडिटर नहीं आ सका है, लेकिन ऐसा होने से क्या संपादकीय प्रकाशित नहीं होगा? मनमोहन दा बोले, "बलक, तुम पालियामेंट के फ़ॉरेन एफ़ेयर्स डिबेट के प्राइम मिनिस्टर

या लाठी चार्ज से आहत हुए लोगों का नाम, पता, संख्या अस्पताल से नहीं बताये जायेंगे, मेडिकल कॉलेज ने अभी तुरन्त यह बात डेली न्यूज को सूचित की है।"

लावण्य के अतिरिक्त जो व्यक्ति रिपोर्टर का काम करता था, वह था ड्राइवर प्रेम लाल। अखबार के काम से प्रेम लाल को पूरे कलकत्ते का चक्कर काटना पड़ता था और इस परिक्रमा के दौरान उसकी नजर किसी चीज पर पड़ जाती तो वह हम लोगों को इसकी सूचना देता था। ड्राइवर होने के बावजूद राम लाल खबर और अखबार के बारे में बहुतेरे रिपोर्टरों से अधिक जानकारी रखता था।""एक दिन की घटना को याद आती है। स्कूल-कॉलेज के छात्रों की फीस बढ़ोत्तरी के खिलाफ़ बहुत-सी जगहों में सभा आयोजित की गयी थी। मुझे इस कार्यवाही का संवाद लेने के अतिरिक्त रेल-कर्मचारियों की एक आवश्यक सभा में हावड़ा मैदान जाना था। एकाध घण्टे के दौरान ही इन तीन-चार मीटिंगों की कार्यवाही का संवाद कैसे लूंगा, समझ में नहीं आ रहा था। हतप्रभ होकर मैंने प्रेम लाल से कहा, "आज हवाई जहाज की तरह गाड़ी चलाओ वरना बहुत बड़ी मुश्किल में पड़ जाऊंगा।"

जीप चालू कर गियर लेने के पहले प्रेम लाल ने मेरी ओर देखा और कहा, "क्यों क्या हुआ ?"

मैंने उसे अपनी कठिनाई का ब्यौरा दिया। प्रेम लाल ने कहा, "इसमें चिन्ता की कौन-सी बात है ? प्रेम लाल ने रोग का निदान बताया, "दरभंगा बिल्डिंग में छात्रों के सभापति के नाम का पता लगा लें और प्रस्ताव की प्रतिलिपि ले लें। उसके बाद हम लोग सीधे हावड़ा मैदान चले जायेंगे। दरभंगा की मीटिंग के प्रस्ताव से ही छात्रों की मेन रिपोर्ट तैयार कर सभापति का नाम जोड़ दें। उसके बाद लिख दीजिये कि हाजरा और देश बंधु पार्क में भी विद्यार्थियों की सभा हुई।"

प्रेम लाल ने क्लच ढीलाकर एक्सिलेटर दबाया और स्टियरिंग घुमाकर दफ्तर से गाड़ी बाहर ले आया। उसके बाद

...के अलावा कल तो रविवार का अखबार है, विज्ञापनों से ...
...ा । बड़ी रिपोर्ट लिखने से फ़ायदा ही क्या ?"
...जैसे भद्र रिपोर्टर बाबू के उर्वर मस्तिष्क में उस दिन लाखों
...के बावजूद जो सूझ पैदा नहीं हुई प्रेम लाल ने मँजे हुए डाक्टर की
...ख जैसे मलेरिया के मरीज के मर्ज का सहज ही इलाज कर
...।

...इसी तरह बहुत ठोकरें खाने पर मैंने सोचा है कि अखबार के
...तर का कोई व्यक्ति अश्रद्धा का पात्र नहीं । मनमोहन दा यद्यपि खूंटी-
...र दाढ़ी से आठ हाथवाली धोती और फटा कुरता पहनकर आते थे
...फिल में उन्हें श्रद्धा की दृष्टि से नहीं देखता था । मुझे मालूम था
...कि युगान्तर पार्टी में योगदान करने के निमित्त ही वे एम० ए० क्लास
...छोड़कर चले आये थे, मुल्क की आजादी के लिए ही पुलिस की लाठी
और मिलिटरी के मोटे बूट की मार बरदाश्त की थी, जवानी के सुन
...२ दिन गया सेंट्रल जेल के अँधेरे सेल में बिताये हैं । जानता हूँ, व
...गुलाम करना नहीं जानते । इसीलिए डलहौजी के दस से पाँच बजे
...निश्चिन्त जीवन को स्वीकार करने के बजाय गरीबी से भरे समाचार
...पत्र के जीवन को अपना लिया है । हरेकृष्ण बाबू गृहस्थी चलाने की
...ख़ातिर दिन-भर स्कूल में शिक्षक का काम करते हैं लेकिन अखबार का
...उन्हें ऐसा नशा है कि सोलह साल से मात्र पंद्रह-बीस रुपये की तनख्वाह
...पर नाइट सब-एडिटर का काम कर रहे हैं । हमारे दफ्तर में और भी
...बहुतेरे ऐसे लोग थे जो कालेज के लेक्चरर-प्रोफेसर होकर आषाढ़ के
...प्रथम दिवस में कालिदास पर भाषण दे सकते थे, रवीन्द्र जयन्ती पर
...अध्यक्षता कर सकते थे, आधुनिक तरीके से बाहरी कमरे को सजाकर
...छात्रों से शादी कर सुखी हो सकते थे । बहुत से ऐसे व्यक्ति थे ...
...अगर अपना सिर जरा नवा लेते तो सरकारी दफ्तर में लाखों मो...

गद्दी वाली कुरसी पर आसीन होकर कालिंग बेल बजा सकते थे और सरकार को अंगूठा दिखा कर महीने के अन्त में एक बंडल मोटा नोट घर ला सकते थे, बाल-बच्चों के लिए बीमा कर सकते थे। लेकिन उन्होंने इस रास्ते पर क़दम नहीं रखा। समाचार-पत्र के कर्मचारी संन्यासी नहीं होते, लेकिन घर का आकर्षण इनके लिए प्रमुख नहीं, गौण है।

तब हाँ, सब आदमी इसी कोटि के नहीं थे। बंगला भाषा न जानने के बावजूद स्वदेश कैसे 'दैनिक संवाद' में भर्त्ती हुआ था, यह बात हमें मालूम नहीं। स्वदेश 'दैनिक संवाद' कार्यालय में अपने मूड के कारण विख्यात था। बेयरा की जमात में वह तुनक मिजाज बाबू के नाम से परिचित था। हरिसाधन बाबू से दूसरे की चुगली करना उसका सबसे बड़ा काम था और वह इस काम को इस कदर निर्लज्जता से करता था कि इसे देखकर स्वदेश की तारीफ ही की जायेगी। सबकी गलती निकालना, सबके पीछे पड़ा रहना उसका काम था। यही वजह है कि हम लोगों के फ़ोटोग्राफ़र ने उसका अंग्रेजी नाम स्कूटनाइजर और बँगला नाम काठी बाबू रख दिया था। 'दैनिक संवाद' में लगभग तीन साल तक काम करने के बाद स्वदेश रेल का टिकट कलक्टर होकर वहाँ से विदा हुआ। याद है, जिस दिन स्वदेश कार्यालय से विदा हुआ, उस दिन कार्यालय में अपूर्व प्रसन्नता का वातावरण था।

'दैनिक संवाद' कार्यालय में सहकर्मियों के सान्निध्य में रहने का मौका तो मिलता ही था, इसके अतिरिक्त अजीब-अजीब आदमियों का जुलूस भी देखने को मिलता था। डॉक्टरों के निकट अनगिन मरीज आते हैं, वकील-बैरिस्टरों के पास लोग मुकद्दमा करने जाते हैं, राजनीतिक नेताओं के पास तावेदार और कृपाकांक्षियों की भीड़ इकट्ठी होती है, उच्च पदाधिकारियों के पास नौकरी के उम्मीदवारों का मजमा इकट्ठा होता है, आयकर, बिक्रीकर के पदाधिकारियों के इर्द-गिर्द मधुमक्खियों की तरह व्यवसायियों का जत्था मँड़राता रहता है। इसी तरह समाज के तरह-

लोग किसी खास व्यक्ति के पास या केन्द्र में बैठकबाजी करते
दिन अखबार के दफ्तर में आम समाज के हर तबके के लोगों का
म जुलूस देख सकते हैं। बहुत कुछ रथ के मेले की तरह। तले हुए
से लेकर स्नो-पाउडर, तरल आलता, साग-सब्जी, मिट्टी का पुतला,
-छोटी सर्कस पार्टी, जादूगर, पुतले का नाच, कुरसी-मेज-आलमारी
दुकान, फूलों का बीज, फल के पौधे, कटपीस कपड़ा, रेडीमेड कमीज-
वगैरह तमाम चीजें रथ के मेले में मिलती हैं। 'दैनिक संवाद'
र्यालय में बैठे-बैठे मैं इसी तरह का मेला देखा करता था। साधु-
न्यासी से लेकर काले बाजार के व्यवसायी और खास-खास वक्त
वेश्याओं तक को रिपोर्टरों की मेज पर बैठे पाता था।

जहाँ तक याद आ रहा है, उस दिन रविवार था। तारा दा दफ्तर नहीं आये थे। मेरे दूसरे-दूसरे सहकर्मी घर चले गये थे। ढेर सारी लोकल खबरों को देखकर लिखते-लिखते रात के दस बज गये। उस समय भी टेलीफोन करना बाकी ही था। लावण्य से एक प्याली चाय लाने को कहा। चाय आ गयी, मैंने पीना खतम किया। दैनिक तालिका के अनुसार पुलिस, फ़ायर ब्रिगेड, रिवर पुलिस, अस्पताल, रेलवे स्टेशन, दमदम एयर पोर्ट तथा इसी तरह के दर्जनों स्थान में फ़ोन करते-करते एक विचित्र अलसता ने मुझे जकड़ लिया। सामने रखे पैड पर क़लम से लकीरें खींच रहा था, कभी किसी बतख के चूज़े की तसवीर बना रहा था। उसके बाद सबको काटकर हरिसाधन दा का पोर्ट्रेट बनाना शुरू किया। इसी तरह कुछ वक्त गुजारने के बाद अन्ततः टेलीफोन करना शुरू कर दिया। दो-चार बार टेलीफोन करने के बाद श्री रामपुर पुलि[स] रिपोर्ट सेंटर से संबंध-सूत्र कायम करने का आदेश दिया।

"नमस्कार!"

"नमस्कार।" सामने एक बूढ़े आदमी को खड़े पाया। कि[सी] मुफस्सल से खबर की तहकीकात पहने हुए सज्जन को सामने की कु[रसी] पर बैठने का इशारा किया। कोई खबर नहीं थी, टेलीफ़ोन रख दि[या]

सज्जन से आने का उद्देश्य पूछा। उन्होंने कल के अखबार में एक आवश्यक विज्ञापन छापने का अनुरोध किया। विज्ञापन छापने से 'दैनिक संवाद' के कोषागार में थोड़ी बहुत रकम आती, अखबार के एक विश्वासी कर्मचारी के नाते इस बात से मुझे प्रसन्न होना चाहिए था। लेकिन विज्ञापन से कोई वास्ता न रहने के कारण मैंने अपनी असमर्थता प्रकट की। इतनी रात में विज्ञापन-विभाग का कोई कर्मचारी दफ्तर में नहीं रहता है और अगले दिन के अखबार में विज्ञापन प्रकाशित करना असंभव है, यह बात जब मैंने सज्जन को बतायी तो उनके चेहरे पर उदासी घिर आयी। सज्जन बार-बार कहने लगे, "बहुत ही जरूरी है, इससे बहुतेरे लोगों का उपकार होगा।" आम तौर से व्यावसायिक प्रतिष्ठान विज्ञापनों के माध्यम से अपना प्रचार करते हैं। इसके अलावा टेन्डर नोटिस, खो गया है, मिला है, मकान-किराया, पात्र-पात्री, खरीद-बिक्री, स्कूल-कॉलेज, तीर्थ-यात्रा इत्यादि क़िस्म के जो सब विज्ञापन हर रोज समाचार-पत्र में प्रकाशित होते हैं, उनसे बहुतों का उपकार होता हो, ऐसा नहीं लगा। तब क्या रिक्त स्थान के बारे में सूचना देना चाहते हैं?

पूछा, "आप क्या रिक्त स्थान का विज्ञापन देना चाहते हैं?"

"नहीं भाई, रिक्त स्थान का विज्ञापन नहीं, हम लोगों के आश्रम का पता बदल गया है, इसी का विज्ञापन देना चाहता हूँ। बड़ा ही आवश्यक विज्ञापन है।" सज्जन ने मुझे निराशाभरे स्वर में कहा।

कुरसी के हत्थे पर कुहनी टिकाये और हथेली पर मुँह रखे सज्जन बैठे रहे। दस-पन्द्रह या बीस मिनट बीत गये। मैं बेचैनी महसूस करने लगा। अन्ततः इस चुप्पी को तोड़ते हुए मैंने कहा, "चाय पीजिएगा?"

उन्होंने गंभीरता के साथ कहा, "मैं चाय नहीं पीता।"

कोई उपाय न देखकर मैंने फ़ायर ब्रिगेड, अस्पताल फ़ोन करना शुरू कर दिया। दो-चार आगजनी की घटनाओं के बारे में भी लिख डाला, नेशनल मेडिकल कॉलेज अस्पताल के इमर्जेन्सी से खबर की

मुहताज कर एक भीषण दर्दनाक घटना की मझोली क़िस्म की रिपोर्ट लिखकर तैयार कर ली। तब भी सज्जन चुप्पी ओढ़े बैठे रहे। दस-पन्द्रह मिनट जब और गुज़र गये तो मेरा टेलीफ़ोन करने का काम ख़त्म हो गया। मैंने छोटी-मोटी ख़बरें लावण्य की मारफ़त न्यूज़ डिपार्टमेण्ट में भेज दी। डायरी और कागज़-पत्तर लावण्य को उठाकर रखने को कहा। मुझे जाने को तैयार देखकर भले आदमी की चेतना वापस आयी। एक लंबी साँस लेकर सज्जन उठकर खड़े हो गये। अपने आप बुदबुदाने लगे, "विज्ञापन छप जाता तो बड़ा ही उपकार होता।"

"कल दोपहर आकर विज्ञापन दे जाइएगा, परसों के अख़बार में छप जायेगा।"

सज्जन फिर अपने आप बुदबुदाने लगे, "अगर देवता यही चाहते हैं कि कल कुछ लोगों को तकलीफ़ उठानी पड़े तो फिर ऐसा ही हो।"

आश्रम का पता बदल जाने की सूचना छपवाने की भले आदमी की व्याकुलता देखकर मेरा मन बड़ा ही नरम हो गया। कहा, "क्या छपाना है, लिख दीजिये।"

भले आदमी के चेहरे पर जैसे बिजली की कौंध खेल गयी। उन्होंने न्यूज़प्रिंट के पैड पर लिख दिया, श्री निकेतन रामकृष्ण सदन आज से ३ नंबर पाँच लेन से हटकर ४/१ ए, राधा मोहन गोस्वामी लेन में चला गया है और सेवा-विभाग पहले की तरह ही सबेरे-शाम खुला रहेगा।" पता चल गया कि सज्जन आश्रम के सेक्रेटरी हैं और मैंने लिख दिया—

श्री निकेतन रामकृष्ण सदन के पते में हेर-फेर --

श्री निकेतन रामकृष्ण सदन के सेक्रेटरी सूचित कर रहे हैं कि आज (सोमवार) से बदल ४ १ ए, राधा माधव लेन में स्थानान्तरित हो रहा है तथा सेवा-विभाग बदस्तूर सुबह-शाम खुला रहेगा।

लिखा लेकर मैं स्वयं न्यूज डिपार्टमेण्ट गया और हरेकृष्ण बाबू को देकर कहा, "पहले पृष्ठ के निचले हिस्से में यह समाचार दे दें।"

न्यूज-डिपार्टमेण्ट से बाहर आकर मैंने भले आदमी से कहा, "ठीक

है, कल ही छप जायेगा।" भले आदमी ने हाथ उठाकर देवता को प्रणाम किया और जेब से दस रुपये के दो-तीन नोट निकालकर कहा, "कितना देना होगा?"

"कुछ भी नहीं।"

"यह क्या, आपको लेना ही होगा।"

मैंने उन्हें समझाया, विज्ञापन छापना मेरे अधिकार के बाहर की बात है, लेकिन स्थानीय समाचार छापना मेरे अधिकार के दायरे में आता है। आप लोगों के आश्रम की विज्ञप्ति स्थानीय समाचार के रूप में छपेगी और इसके लिए पैसा नहीं देना है।'

भले आदमी ने फिर हाथ जोड़कर उन्हें मस्तक से लगाया और कहा, "देवता, सब तुम्हारी इच्छा है।" मुझे अनगिन धन्यवाद देकर भले आदमी ने आश्रम आने का निमंत्रण दिया और एक बहुत बड़ी गाड़ी पर बैठकर चल दिये।

घड़ी की ओर देखा, साढ़े बारह बज चुके हैं। अब और देर किये दफ्तर से घर की ओर रवाना हो गया।

दूसरे दिन दफ्तर आने में थोड़ी रात हो गयी। फाटक के अन्दर जाते न जाते वनमाली के केबिन के सामने लावण्य से मुलाकात हो गयी। मुझ पर नजर पड़ते ही बोला, "बच्चू बाबू, आप कहाँ थे। लोगों ने टेलीफ़ोन किया था पर आप मिले नहीं।"

मैंने पूछा, "किसने फ़ोन किया था जो मैं मिला नहीं?"

"नृपेन दत्त नामक किसी व्यक्ति ने। किसी आश्रम के सेक्रेटरी वगैरह हैं। समाचार-पत्र के दफ्तर में टेलीफ़ोन आने की कोई सीमा नहीं रहती, यही वजह है कि लावण्य ने अत्यन्त उदासीनता के साथ मुझे टेलीफ़ोन के बारे में सूचना दी।

अपने कमरे में गया तो तारा दा ने भी टेलीफ़ोन की सूचना दी बोले, "श्री निकेतन रामकृष्ण सदन के सेक्रेटरी मिस्टर

बहुत धन्यवाद दिया है और आज ही आने का बार-बार अनुरोध है।"

सुनकर मैंने अनसुना कर दिया। टेलीफ़ोन से निमंत्रण पाकर आश्रम जाऊँ और कुछ लोगों का भावोन्माद देखूँ, इसके लिए मैंने ज़रा कौतूहल का अनुभव नहीं किया। मगर कुछ दिनों के बाद मुझे उस आश्रम में जाना ही पड़ा। कॉलेज स्ट्रीट के मोड़ पर अचानक नृपेन दत्त से मुलाकात हो गयी और मैं उनके जैसे बुजुर्ग आदमी के आश्रम जाने के अनुरोध को ठुकरा नहीं सका। पहले हालाँकि समझ नहीं सका था, मगर बाद में समझ में आया कि आश्रम जाकर अच्छा ही किया वरन पारुलवाला से परिचित कैसे होता और कैसे इस बात का पता चलता कि भगवान तथाकथित भले आदमी की अपेक्षा वार-वनिता के प्रति अधिक उदार हैं?

....मिस्टर ए० के० रॉय ने बैरिस्टरी से लाखों रुपया कमाया। अँग्रेज़ों की औरस मेमसाहब के गर्भ से जन्म न लेने के बावजूद बैरिस्टर रॉय को एक तरह से अँग्रेज़ ही कहा जायेगा। बड़ी लड़की सुकन्या को ऑक्सफोर्ड से बी० ए० तक पढ़ाने के बाद स्वदेश आते ही उसकी शादी एक आई० सी० एस० के साथ कर दी। बड़े लड़के अशोक को यथासम्... लगभग तीन हज़ार रुपये की मर्केनटाइल एक्सक्यूटिव की नौकरी मि... गयी। छोटा लड़का असीम ग्रेस इन से बैरिस्टरी पास कर स्व... लौटा। उसके बाद सर सुविनय सरकार की लड़की से अशोक की श... हुई। पूरे फिरफो को क़िराये पर लेकर कलकत्ता हाइकोर्ट के ... बैरिस्टर मिस्टर रॉय ने लगभग डेढ़ हज़ार आदमियों को दाव... बुलाया। बंगाल के लाट साहब के अलावा मेयर, शरीफ, चीफ़ ... तथा कलकत्ते के सभी यशाकांक्षी लोग इस दावत में शरीक ... दिल्ली से वाइसराय ने शुभ कामना भेजी थी। ह्विस्की का...

होठों से लगाने के समय उपस्थित डेढ़ हजार अतिथियों ने मिस्टर एण्ड मिसेज अशोक रॉय की अशेष आयु और अटूट दांपत्य सुख की कामना प्रकट की।

रॉय परिवार सुख की दुनिया में जेट हवाई जहाज की तरह अवाध गति से मँडराने लगा। दो साल तक जूनियर रहने के बाद, असीम कई दिन पहले कल्याणी सेन की हत्या के मामले में हाई कोर्ट के फुल-बेंच के सामने जिरह कर कर्नल विश्वास को हत्या के अपराध में बेकसूर साबित कर उसे बरी कराकर ले आया था। बार में हलचल मच गयी। लोगों ने कहना शुरू किया बाप का बेटा और सिपाही का घोड़ा""ऐसा तो होना ही था। असीम की इस कामयाबी पर रॉय विला में स्पेशल फ़ेमिली डिनर का आयोजन हुआ। सुकन्या ने अपने छोटे भाई की उँगली में हंड्रेड प्वाइन्ट्स की हीरे की अंगूठी पहना दी।

अप्रैल में लड़का-लड़की-दामाद दार्जलिंग गये। शाम के बाद लॉन में बैठे मिस्टर रॉय 'शार्लक होम्स' के नशे में इतने मशगूल हो गये कि चाय ही पीना भूल गये। बाद में उनका नशा तब दूर हुआ जब मुस्तफ़ा ने हाथ में फ़ोन थामे कहा, "साहब दार्जलिंग से ट्रंक कॉल""

दार्जलिंग का नाम सुनते ही मिस्टर रॉय ने बायें हाथ से रिसीवर थाम लिया "हैलो""येस ए० के० रॉय स्पीकिंग""

ऑपरेटर ने कहा, "कॉल फ्रॉम दार्जलिंग, स्पीक ऑन।"

ऑपरेटर के 'स्पीक ऑन' कहने से क्या होगा, सुकन्या ने अपने पिता को जो समाचार दिया, उसे सुनकर मिस्टर रॉय के मुँह से कोई शब्द नहीं निकल सका। 'ह्वाट' कहकर मिस्टर रॉय चीख उठे और फिर बेहोश हो गये।

कालीफ़ोरा फ़ॉरेस्ट बंगले के पास जीप-दुर्घटना में अशोक और उसकी पत्नी की मौत हो जाने से मिस्टर रॉय की जिन्दगी विपरीत दिशा की ओर मुड़ गयी। रैनकिन का सूट त्यागकर गेरुआ वस्त्र धारण कर लिया और गृहस्थी से नाता तोड़कर श्री निकेतन रामकृष्ण सदन

का निर्माण किया। पूर्व जन्म के संचित पापों का प्रायश्चित्त करने लगे, दुख से पीड़ित मनुष्यों की सेवा करके। रोगियों को दवा-दारू देकर, आश्रयहीनों को आश्रय देकर और भूखों को अन्न देकर। अठारह साल से हाईकोर्ट के रिटायर्ड जज नृपेन दत्त, प्रोग्रेसिव इंश्योरेन्स के भूतपूर्व चेयरमैन विमल मजूमदार, भूतपूर्व माइनिंग इंजीनियर सुबोध वैनर्जी, इतिहासकार शंभुनाथ हालदार तथा और भी वहुत सारे लोग श्री निकेतन की देख-रेख कर रहे हैं। इन लोगों ने जिन्दगी-भर का जमा-जत्था लगाकर श्री निकेतन को एक आदर्श सेवा-संस्था में वदल दिया है। परम पुरुष रामकृष्ण को सामने रखकर ये लोग लंबे अरसे से मनुष्य की सेवा करते आ रहे हैं। अठारह वर्ष पहले राई चरण घोष के टूटे दो मंज़िलें भवन के एक छोटे से कमरे में जिस श्री निकेतन का जन्म हुआ था वह आज वीते दिनों की कहानी है। पूरे दो मंज़िले मक़ान के सात कमरे में भी आश्रम चलाना मुश्किल हो गया। सेवा-विभाग की आउटडोर डिसपेंसरी और प्रसूति-विभाग के लिए ही चार-चार कमरे हैं मगर आज उनसे भी काम नहीं चल रहा।

एक लंवे अरसे तक श्री निकेतन जैसी सेवा-संस्था राई चरण के भवन में रहने के वाद आश्रम को दूसरी जगह ले जाने का दवाव इसलिए पड़ने लगा कि कहीं संपत्ति उनके लड़कों के हाथ से निकल न जाये। जायदाद के लालच में राई चरण के लड़कों ने उन्हें तंग कर मारा। कोई उपाय न देखकर राई चरण राय वावू के पास रोने लगे। राई चरण के पारिवारिक जीवन की शान्ति में खलल न डालने के खयाल से आश्रम के कार्यकर्त्ताओं ने तीन महीने के अन्दर ही आश्रम दूसरी जगह ले जाने का वादा किया। तीन महीने तक दौड़-धूप करने के वावजूद श्री निकेतन के लायक़ मकान किराये पर नहीं मिला। प्रतिज्ञावद्ध आश्रम के निर्देशकों के दल ने आँख में आँसू लिये दरवाज़े पर नोटिस चिपका दिया : परसों (सोमवार) से सदन वन्द हो जायेगा। शनिवार की रात से ही रविवार-सोमवार तक लॉरी से सदन की

जायदाद विभिन्न स्थानों मे हटाने का इन्तजाम हो गया।

रविवार के सवेरे भी आश्रम की प्रार्थना-सभा हुई। सबकी निगाह से बचकर एक महिला प्रार्थना-घर के दरवाजे पर आकर खड़ी हुई। प्रार्थना के अन्त में आश्रम के निर्देशकों की जमात ने कोठरी से वाहर जाने के समय देखा, एक वृद्ध महिला तसर की लाल किनारी की साड़ी पहने चौखट पर माथा टेक देवता को प्रणाम कर रही है। कुछ मिनटों के बाद महिला आँखों में आँसू लिये उठकर खड़ो हो गया।

इसके बाद की कहानी भौतिकवादी जगत के लिए विश्वास करना कठिन है। बीसवी शताब्दी के जड़वादी जगत के प्राणी होने के नाते शुरू में मैंने भी इसे ढोंग समझा था। लेकिन बाद में जब कागज-पत्तर और दस्तावेज देखे तो विश्वास करना ही पड़ा। चकित मन और विस्फारित नेत्रों से मुझे विश्वास करना ही पड़ा कि कलकत्ते की खानदानी कुलीन प्रतिभाशालिनी बाईजी पारुलबाला देवी को शनिवार की रात के अन्तिम पहर आदेश मिला कि वह श्री निकेतन रामकृष्ण सदन की रक्षा करे। रविवार की सुबह वह राधा माधव लेन के तीन मंजिले भवन का दान-लेख और पच्चीस हजार रुपये का चेक लेकर आश्रम में उपस्थित हुई थी। शुरू में रॉय बाबू, नृपेन दत्त, हाल्दार बाबू और बैनर्जी बाबू ने पारुलबाला का अप्रत्याशित दान स्वीकार करना नही चाहा था, लेकिन पारुलबाला की आँखों के आँसू और दयनीय आवेदन के कारण उन्हें एक चेहरे पर हँसी लेकर पराजय स्वीकार करनी पड़ी थी।

पारुलबाला के नये भवन के आश्रम में देवता की तसवीर के सामने खड़े होकर बैरिस्टर ए० के० रॉय ने आँखों में आँसू भरकर मुझसे कहा था, "देखो भैया, इस दाढ़ी वाले जिस भोलानाथ को तुम देख रहे हो, वे साक्षात् ईश्वर हैं। निराश्रय को आश्रय देने से प्रसन्न होते हैं। हम लोगों के प्रसूति-सदन में असहाय-संबलहीन गर्भवती नारियों को निर्विघ्न संतान पैदा होती है तो इस मूर्ति के चेहरे पर हँसी खेल जाती है।"

दत्त साहब को वहुत अनुरोध करने के वाद मुझे एक वार पारुल-वाला के दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। लेकिन जाने के पहले मुझे वायदा करना पड़ा था कि अखबार में कुछ नहीं छापूँगा। केवड़ातल्ला के एक तीन मंज़िले भवन की दूसरी माला के एक कमरे में पारुलवाला से साक्षात्कार करने का अवसर प्राप्त हुआ था। शुरू में अवाक् होकर मैंने उनकी ओर देखा। उस मातृ स्वरूपा महान् नारी को देखकर मैं मुग्ध हो गया। वहुत कोशिश करने के वावजूद मैं सोच नहीं सका कि वे वाईजी हैं, कल्पना नहीं कर सका कि वह लालसा-कामना की प्रति-मूर्त्ति हैं। मन ने चाहा कि प्रणाम करूँ, मगर संस्कार ने रोक लिया।

पारुलवाला ने मुझसे कहा था, "देखो भैया, तुम मेरी सन्तान के समान हो। सन्तान के सामने कुछ छिपाकर नहीं रखना चाहिए।....यह जान लो कि इस शरीर पर अनगिन लोगों के लोहू का नशा चरितार्थ हुआ है। वहुत सारे लोगों के अनगिनत पापों का वोज मेरे शरीर के अंग-अंग में सोया हुआ है। मेरे अन्दर महानता नामक कोई चीज़ नहीं उम्र के गुनाह के कारण किसी दिन रूप और जवानी की खरीद फ़रोख्त की थी मगर जान-वूझ कर कभी कोई अन्याय नहीं किया है।

जीभ से होंठों को तर कर और चेहरे से निगाह परे हटाकर वा[illegible] की तरफ़ देखा। वोली, "सामर्थ्य-भर मैंने इस वात की कोशिश की कि आदमी को पाप के रास्ते से लौटाकर सही रास्ते पर ले आऊँ। जुल्म वरदाश्त कर, जोर-ज़वरन लायी गयी नयी लड़कियों पतितालय के अँधेरे गन्दे जगत् से दूर हटाया है। इसके अलावा कहने को मेरे पास नहीं है, वेटा।" आखिर में एक लंवी साँस [illegible] वोलीं, "सारा समाज हालाँकि मुझसे नफरत करता है, फिर भी लगता है, देवता ने मुझे सेवा का अधिकार दिया है....।"

कमरे की खिड़की से मैंने देखा, केवड़ातल्ला के मसान में अ[illegible] लपटें लहक रही हैं और कितने ही लोगों की लाशें पंचतत्त्व में होती जा रही हैं। लगा, नौ महीना दस दिन मातृगर्भ में वास [illegible]

बाद केवड़ातल्ला जैसे मसान से वैतरणी पार होने के पहले कितने दिनों तक हम इस पांयशाला में टिके रहेंगे ! सूरज की रोशनी में हम आँख खोलकर चलते हैं, फिर भी देख नहीं पाते। हो सकता है, देखकर भी हम भविष्य के इंगित को अनदेखा कर जाते हैं। मानो स्वेच्छा से आँख बन्द किये हम सभी अंधे की भूमिका में अभिनय कर रहे हैं। पल-भर के लिए मुझमें श्मशान का वैराग्य जगा। लगा, बीते दिनों की वार-वनिता पारुलवाला ने मेरा अंधापन दूर कर दिया है, मेरी दृष्टि वापस कर दी है। खुशियों से मेरा मन नाच उठा, बहुत दूर, समुद्र-तट से क्षण-भर के लिए मुझे भविष्य का संकेत मिला। अँधेरे से मुक्ति मिली, नये जीवन को तृप्ति मिली।

अपने आपको मैंने कुछ लहमों के लिए खो दिया था। देखा, पारुल-वाला दो थाली मिठाई-फल और दो गिलास पानी ले आयी हैं। दत्त साहब की ओर एक थाली बढ़ाती हुई बोलीं, "देवरजी, लो खाओ।" मुझसे सस्नेह कहा, "लो बेटा, थोड़ी-सी मिठाई खाओ।"

मिठाई खाकर वहाँ से चलने के पहले दत्त साहब ने अपनी पारुल भाभी को प्रणाम किया। संस्कार को परे ठेलकर मैंने भी रूपा जीवा पारुलवाला को प्रणाम किया। वे बोलीं, "छिः छिः, मुझे प्रणाम क्यों किया, बेटा ?" स्नेह के साथ अपने पास खींचकर उन्होंने मेरे माथे को चूम लिया। सीढ़ियाँ उतरते हुए लगा, ललाट पर माँ के द्वारा लगाया गया जयटीका लेकर मैं संसार पर जय प्राप्त करने बाहर निकला हूँ।

श्रद्धा-भक्ति-विश्वास रहने से असंभव भी सभव हो जाता है, रिपोर्टरी करने के कार्य-काल में उसका प्रमाण कई वर्ष बाद मिला था। एक फ़ीचर लिखकर दस रुपया कमाने के लोभ से मैंने कलकत्ता और शहर के समीपवर्ती तरह-तरह के सेवा-प्रतिष्ठानों में चक्कर लगा चुका हूँ। छह-सात संस्थाओं पर फ़ीचर लिखने के बाद एक अग्रजतुल्य संवाद-

दाता के परामर्श पर मैं बैरेकपुर ट्रंक रोड किनारे स्थित एक अद्वितीय अस्पताल गया था।

बस्ती में वास करने वाला महरी का लड़का बस्ती के प्रसूतिघर की बदतर हालत देखकर अपनी किशोरावस्था में विचलित हो उठा था। बाद में उसकी माँ ने उससे कहा था, "बेटा, अगर किसी दिन तुझसे बन पड़े तो इन अभागिन औरतों को माँ बनने का सुयोग प्रदान करना।" विधवा महरी के लड़के ने किसी तरह मैट्रिक की परीक्षा पास की और टेलिग्राफ़िस्ट की नौकरी में भर्ती हो गया। लेकिन नौकरी के जीवन में एक नया लक्षण दिखायी पड़ा, उस पर मिरगी रोग का आक्रमण हुआ। गरीबी और रोग से आक्रान्त रहने के बावजूद वह अपनी माँ की आज्ञा का पालन करने को सचेष्ट हो गया।

लंबे अरसे तक साधना और चेष्टा में तत्पर रहकर विधवा महरी के उस लड़के ने धीरे-धीरे एक विशाल आधुनिक अस्पताल का निर्माण किया। अस्पताल के एक एकान्त कमरे में उस साधक से मेरी मुलाकात हुई थी। उसने मेरे और मेरे फ़ोटोग्राफ़र के हाथ में मुट्ठी भर चनाचूर रखते हुए कहा था, "छुटपन में खाना नसीब नहीं होता था, बहुत दिनों तक अधेले का चनाचूर खाकर रहना पड़ा है, यही वजह है कि आज भी बिना चनाचूर खाये रह नहीं पाता हूँ।" और भी ढेर सारी बातें बतायी थी। कहा था, "अस्पताल के काम में लग जाने के बाद मेरी मिरगी की बीमारी अपने आप दूर हो गई। छुटपन में अभाव के कारण एक वक़्त खाना खाता था, आज भी एक ही वक़्त खाता हूँ, लेकिन रात-दिन कठिन परिश्रम करने के बावजूद मुझे कोई तकलीफ़ महसूस नहीं होती।"

बूढ़े ने हम लोगों से कहा, "सच्ची इच्छा रहे तो कोई बाधा, बाधा जैसी नहीं लगती।" टूटी आलमारी के ऊपर रखी रामकृष्ण की एक मामूली फ़ोटो को दिखाते हुए कहा, "मैं तो मात्र निमित्त हूँ। कल-कब्जा वही चलाते हैं।"

मन ही मन सोचा, कल-कब्जा अगर ऊपर वाला न चलाये तो महरी का लड़का कैसे इतना बड़ा अस्पताल बनवाता ? इसका मिरगी का रोग बग़ैर इलाज कराये कैसे ठीक हो जाता ?



ढाई साल तक काम करने के बाद [illegible] रुपया तनख्वाह पाकर मैंने 'दैनिक संवाद' के इतिहास में जैसे नये अध्याय की सृष्टि की । सेलेक्शन ग्रेड की तनख्वाह पाने के बावजूद वनमाली का माहवार बक़ाया चुका नहीं पाता हूँ, पान की दूकान का भी आठ आना-एक रुपया बाक़ी रह जाता है । किसी जाने-पहचाने पर नजर न पड़ने पर ट्राम के पिछले डिब्बे में कूद कर चढ़ जाता हूँ लेकिन ज्यादातर वक्त ऐसा भी नहीं हो पाता । बीच-बीच में ट्राम कंपनी पर बेहद गुस्सा आता था । सोचता, रेलवे कंपनी की तरह ट्राम में भी तीसरा दर्जा होता तो मुझ जैसे निर्धन, मझले तबके के आदमी का कितना उपकार होता ! शुरू में हवाई जहाज में एक ही दर्जा था । मगर हवाई जहाज के पदाधिकारियों को जमाने की हवा लग गयी, दुनिया के लोगों के जीवन-स्तर में सुधार लाने का उन्होंने बीड़ा उठा लिया । यही वजह है कि हवाई जहाज में भी दो दर्जे चालू हो गये—फर्स्ट क्लास और टूरिस्ट क्लास । जिस तबके के लोग हवाई-जहाज कंपनियाँ चलाते हैं, उन्हीं के सगे-संबंधी कलकत्ता ट्राम कंपनी की देखरेख करते हैं मगर वे जमाने की हवा की परवाह किये बगैर पुराने नियम के अनुसार दो ही दर्जों को चलाये जा रहे हैं । रिपोर्टर बनने के पहले एक जोड़ा धोती और दो शर्ट से ही काम चल जाता था, लेकिन अब बहुत कठिनाई का सामना करना पड़ता है । तरह-तरह के तबके के लोगों के बीच आने-जाने के लिए हर रोज करीने से सज-धज कर बाहर निकलना जरूरी है मगर यह मेरी सामर्थ्य के बाहर की बात है । पिछली दुर्गा-पूजा के समय हाथी बगान मोड़ पर ढाई रुपये में एक जोड़ा चप्पल खरीदी थी । उसकी स्वाभाविक आयु थ

समाप्त हो चुकी है, लेकिन उन्हें छोड़ नहीं सका हूँ। हर रोज़ बाहर निकलने के पहले मुहल्ले के मोची को एक आना घूस देकर उनकी आयु एक दिन के लिए बढ़वा लेता हूँ। अपने लिए मुझे कोई दुख नहीं होता। दुख होता है तो भाभी के लिए। बचपन में नीम तल्ला में सिर्फ़ माँ को ही नहीं खोया है बल्कि उसके साथ ही खो दिया है घर का आकर्षण और नारी के स्नेह का कोमल स्पर्श। बहुत दिनों के बाद भाभी मेरे जीवन में वही अमृत कलश ले आयी है। और चूंकि उसे कुछ दे नहीं पाता हूँ इसलिए मन को ठेस लगती है। एक और व्यक्ति के लिए कुछ न कर पाने की वज़ह से मन बहुत उदास हो जाया करता था। हृदय का ऐश्वर्य बहुत पहले ही दे चुका था, लेकिन भाभी को बहन को और भी बहुत कुछ देने की व्यग्रता मन ही मन महसूस करता था।

व्यक्तिगत जीवन में संख्याहीन निराशा से पीड़ित रहने और लगातार आहें भरते रहने पर भी थकने का नाम नहीं लेता था। 'दैनिक संवाद' में हालाँकि रिपोर्टर था लेकिन नौकरी करने के दंशन का अनुभव नहीं होता था। चीफ़ रिपोर्टर, न्यूज एडिटर या खुद एडिटर भी कभी न तो मुझे अपमानित करते थे न ही मेरे जैसे सहकर्मियों को। अखबार के कर्मचारियों को बड़े बाबू आँख नहीं दिखाते, साहब भी अपमानजनक व्यवहार नहीं करते और न मालिक ही अश्लील राय जाहिर करते हैं। समाचार-पत्र ही एक मात्र ऐसे उद्योग-धंधे का प्रतिष्ठान है जहाँ लोगों के बीच मालिक-नौकर का रिश्ता नहीं रहता। मैनेजर के कमरे के अन्दर जाने के लिए स्लिप नहीं भेजना पड़ता है; संपादक से मिलने में हिचकिचाहट का अनुभव नहीं होता, न्यूज एडिटर के सामने हाथ जोड़कर आँखें झुकाये नहीं रहना पड़ता है। इतना ज़रूर था कि हमारे दफ़्तर में एक अजीब तरह का माहौल था। एडिटर की तुलना में न्यूज एडिटर और न्यूज एडिटर की तुलना में चीफ़ रिपोर्टरों के हाथ में ही अधिक क्षमता थी। और उस चीफ़ रिपोर्टर के कैबिनेट का मैं एक मिनिस्टर था। ठीक से इनस्टॉलमेंट वेतन न दे पाने की वजह से हरिसाधन दा ही

मुजरिम के कठघरे में हर रात हम लोगों के न्यायालय में खड़े होते थे। बहुत शोर-शराबा मचाने के बाद हम आखिरकार आठ आना-चार आना कर्ज लेकर ही संपादक को रिहा करते थे। नौकरी करने के बावजूद हम नौकर नहीं थे, यह सोचकर मन ही मन हम अपार आनन्द और आत्म-तृप्ति का अनुभव करते थे।

इसके अलावा बाहरी जिन्दगी में समाज के हर तबके और हर तरह के आदमी के निकट आने पर मैं आनन्द के महासागर में डुबकियाँ लगाता था। नारकेलडंगा के रेलवे क्वार्टर में मैंने पहले-पहल सूरज की रोशनी देखी थी। उस दिन हमारे परिवार के मुट्ठी-भर लोगों के अलावा और कोई मुझे पहचानता नहीं था और न ही प्यार करता था। मगर आज? आज परिवार के सीमित घेरे के बाहर अधिक लोगों से जान-पहचान है, ज्यादा से ज्यादा लोग मुझे प्यार करते हैं। देखते-देखते बहुत दिन बीत गये। लंबे अरसे तक मिलने-जुलने के कारण आज बहुतों से जान-पहचान और दोस्ती हो गयी है।

समाचार-संग्रह की लालसा और हर रोज नयी जान-पहचान के लोभ में रिपोर्टरों को अनगिनत मुहल्लों का चक्कर काटना पड़ता है। कलकत्ते के रिपोर्टरों के विस्तृत विचरण क्षेत्रों में से सबसे प्रमुख तीर्थ-क्षेत्र है राइटर्स बिल्डिंग्स—बंगाल सरकार का प्रमुख कर्मस्थान। वास्तव में राइटर्स बिल्डिंग्स कलकत्ते के रिपोर्टरों के यौवन का उपवन और प्रौढ़ावस्था की वाराणसी है। इस तीर्थस्थान की मैं नियमित तौर पर परिक्रमा करने जाता हूँ—समाचार की खोज और जान-पहचान के लोभ में। रिपोर्टरों में जो लोग जीनियस हैं वे चीफ मिनिस्टर के कमरे के सामने प्रेस-एनक्लोजर में बैठकर दुनिया-भर की समस्याओं का समाधान ढूंढते हैं। बहुत-कुछ दातव्य चिकित्सालय की तरह। यानी मिक्सचर तैयार ही रहता है। राइटर्स बिल्डिंग्स के प्रेस-एनक्लोजर में भी तमाम समस्याओं का रेडिमेड समाधान अकृपणता के साथ वितरित किया है। मैं लघु पत्रिका का पंद्रह रुपया पानेवाला रिपोर्टर था, इसलिए

तरह के रोग की महौषधि के वितरण का अधिकार मुझे नहीं था। इसके अलावा अखबार का रिपोर्टर होकर कैन्टबरी के आर्च बिशप की तरह उपदेश-वितरण का मुझमें कोई आग्रह भी नहीं था।

जेब में एक छोटा-सा नोट बुक और पेंसिल लिए मैं एक कैनवेसर तरह चक्कर काटता रहता था। जिस गाहक से थोड़ी-बहुत खबर पाने की उम्मीद रहती, उसी के पास बैठ जाता। इसी तरह मैं हर रोज लक्ष्मी की पूजा करता था। इस दैनिक कार्य-पद्धति की कृपा से मैं मंत्रियों से राजनीति के संबंध में चर्चा-परिचर्चा करता, उनके प्राइवेट सेक्रेटरियों के साथ अड्डेबाजी करता और अर्दली-चपरासियों के साथ हार्दिक संपर्क स्थापित करता था। लम्बे अरसे के बाद पीछे मुड़कर देखता हूँ तो पता चलता है कि राइटर्स बिल्डिंग्स में अनगिनत लोग मेरे मित्र हो गये हैं। इसी प्रकार का एक मित्र था हरिदास—एक मंत्री महोदय का सिक्युरिटी अफ़सर।

मंत्री से घनिष्ठता रहने के कारण हरिदास मुझे भैया ही कहता था। कमरे के अन्दर जाते ही चाय का आर्डर देता। बोल-चाल और तौर-तरीके से हरिदास बिलकुल भला आदमी था और यही वजह है कि मैं भी उसे पसन्द करता था। एक दिन बातचीत के दौरान मैंने उससे पूछा, "हरिदास, तुम पुलिस के आदमी हो, अच्छा यह तो बताओ कि घूस-वूस लेते हो ?"

हरिदास खुलकर हँस पड़ा, उसके बाद चेहरे पर हँसी लिए कहा, "बच्चू दा, आपने अच्छा सवाल किया है !"

मिनिस्टर साहब के सेक्रेटरी, पर्सनल असिस्टेन्ट आदि ने क़लम नीचे रखकर हरिदास की ओर देखा। स्टेनोग्राफ़र बाबू बोले, "सही बात बताइए।"

हरिदास की मुसकराहट गायब हो गयी। उसके बाद कहा, "एक ही बार...उन दिनों मैं यहाँ नहीं था। एक दूसरे आदमी के साथ था। तीसरे पहर 'राइटर्स' से रवाना होकर साहब बंगले की देहरी पर क़दम

रखने जा ही रहा था कि जोरों की एक चिल्लाहट सुनायी पड़ी। पीछे मुड़कर देखूं कि तभी साहब की गाड़ी अन्दर आ रुकी। झपटता हुआ आया और दरवाजा खोल दिया। गाड़ी से उतरते हुए साहब ने कहा, "हरिदास, बाहर जाकर देखो कि माजरा क्या है।"

तेज क़दमों से चलता हुआ बाहर आया। देखा, सड़क पर बरगद के पेड़ के नीचे दो आदमी आपस में उलझे हुए हैं। मैं दौड़ता हुआ गया और दोनों के हाथ कसकर पकड़ लिये।

धोती और आधी बाँह का कुरता पहना हुआ एक व्यक्ति बोला, "देखिये साहब, यह कितना बड़ा धूर्त्त है! मैं सड़क से आ रहा था, अचानक सामने आकर पूछा; लाल पान का एक्का या ईंट का साहब? मैं सकते में आ गया। कुछ भी जवाब न देने के बावजूद इस आदमी ने कहा : क्या कहा? लाल पान का एक्का? मैं अचकचा कर देखने लगा। इस पर यह आदमी चिल्ला उठा : यह देखिये, ईंट का साहब। आप हार गये, रुपया निकालिये। मेरे आश्चर्य का भाव दूर हो कि इसके पहले ही जोर-जबरन पूरे महीने का वेतन मेरी जेब से निकाल लिया।"

हरिदास ने कहा, "जानते हैं बच्चूदा, उस आदमी ने मेरे पैरों को कसकर पकड़ लिया और कहा; जान बचाइये……बायीं पॉकेट में हाथ डालते ही आपको मेरा एक सौ बावनबे रुपया मिलेगा। वास्तव में उस आदमी की जेब मे एक सौ बावनबे रुपया ही मिला। बात अच्छी तरह समझ में आ गयी कि प्लेन एण्ड सिम्पल छीना-झपटी का मामला है।

"बहरहाल दोनों को अपने साथ ले बंगले पर आया और साहब को घटना के बारे में बताया। उसके बाद साहब के कथनानुसार उन लोगों को अपने साथ ले कोतवाली पहुँचा। कोतवाली जाकर जैसे ही कोतवाल के कमरे के अंदर क़दम रखा, लगा, छीना-झपटी करने वाला आदमी कोतवाल को देखकर मुसकरा रहा है। मुसकराहट का अर्थ ठीक-ठीक समझ में नहीं आया मगर मन में सन्देह पैदा हुआ। यह जानकर कि मैं सिक्युरिटी में हूँ कोतवाल साहब ने मेरी भरपूर खातिरदारी की। उस

वाद जब सुना कि खुद साहब ने मुझे थाने भेजा है तो कोतवाल साहब और ज़्यादा खातिरदारी करने लगे। मेरी आपत्ति की परवाह किये वगैर कोतवाल साहब ने चाय-विस्कुट मँगाया। आखिर में एफ० आइ० आर० लिखकर कोतवाल साहब ने नफरत के साथ कहा; इन वदमाशों के चलते तो मैं परेशान हो गया हूँ।"

हरिदास ने चाय के गिलास से घूंट लिया। प्राइवेट सेक्रेटरी स्टेनो वावू और मेरी आँखें आपस में टकरायीं।

हरिदास ने फिर कहना शुरू किया।

"दूसरे दिन साढ़े ग्यारह-वारह वजे कचहरी गया। कोर्ट इंस्पेक्टर, उनके सहकर्मी और कोतवाल साहव ने आदर के साथ मुझे विठाया। मैं सिगरेट नहीं पीता, फिर भी पीनी पड़ी; पेट भरा रहने के वावजूद एक अदद फ़िश कटलेट खाना पड़ा। कटलेट खाते समय ही लगा, थाने के कोतवाल साहव ने कोर्ट इंस्पेक्टर को कुछ इशारा किया। कोर्ट-इंस्पेक्टर ने अपने एक सहकर्मी की ओर देखकर आँख दवायी।

"कटलेट खाने के वाद चाय पीना शुरू कर दिया। उसके वाद सिगरेट सुलगाकर मुश्किल से एक कश लिया ही होगा कि कोर्ट इंस्पेक्टर के एक सहकर्मी ने कलकत्ते की गुंडागर्दी, छीना-झपटी और आनुषंगिक विषयों पर एक भाषण दिया।....

"कुछ मत कहिये भाई साहव! इन लोगों को कंट्रोल करना जब स्वयं शिव के वूते के वाहर की वात है तो फिर हम लोग क्या कर सकते हैं? इन लोगों ने ऐसा जाल विछा लिया है कि एक तरफ़ से इन्हें रोक कर रखें तो दसियों ओर से वाहर निकल आयेंगे।"

"मैं चूँकि वडे साहव का आदमी था इसलिए कोर्ट इंस्पेक्टर के शागिर्द ने भी मक्खन लगाना शुरू कर दिया: जानते हैं सर, इन वानरों को जेल भिजवाने से भी कोई फायदा नहीं....अंगार शत धौतने मलिनत्व न जायन्ति।"

कोर्ट इंस्पेक्टर के सुयोग्य शिष्य इसी तरह और कुछ देर तक

लेक्चर झाड़ते रहे। लेक्चर के अन्त में बताया कि मुजरिम की तक़दीर का फ़ैसला हरिदास पर ही निर्भर करता है। शुरू में हरिदास की समझ में बात नहीं आयी, वह अवाक् होकर ताकता रहा उसकी ओर। उसके बाद प्याज के छिलके उतारने की तरह पूरा प्लान समझाया।

"सर इस अभागे को जेल भिजवाने से भी इसे कोई सीख नहीं मिलेगी, हमलोगों को भी कोई फायदा नहीं होगा। आप सर, अगर अनुमति दें तो आपको भी कुछ हासिल हो और हम लोगों को भी····"

हरिदास ने गंभीर स्वर में कहा, "क्या होगा ?"

थूक निगलते हुए सवाल का जवाब दिया, "आप ही तो असली आदमी हैं, इसलिए आपको डेढ़ सौ मिलेगा, हम सबों को तीस-तीस और पेशकार बाबू को दस—कुल मिलाकर दो सौ।"

हरिदास ने अब बेवकूफ की तरह सवाल नहीं किया। इसके अलावा वक्त भी काफ़ी हो चुका था, कोर्ट-इंस्पेक्टर के फेरीघाट में बैठना भी अब अच्छा नहीं लग रहा था। कहा, "ठीक है, जो कुछ करना है, जल्दी कीजिये।"

"अब पन्द्रह मिनट में मामले की सुनवाई होगी।"

हरिदास को पुलिस की नौकरी में आये ज्यादा दिन नहीं हुए थे। मन ही मन सोचा, यह भी क्या संभव है ? मुजरिम दो सौ रुपया देगा ? यह कैसी बात है ? यह क्या संभव है ? इसके अलावा फैसले में अगर इस अभागे को दो साल के कारावास की सजा मिले तो फिर वह दो सौ रुपया खर्च क्यों करेगा ?

कुछ ही मिनटों में मामले की सुनवाई शुरू हुई। इंस्पेक्टर का वक्तव्य समाप्त होते न होते मैजिस्ट्रेट साहब ने मुजरिम को डांट पिलायी। पूछा, "यह सब सच है ?"

मुजरिम ने हाथ जोड़कर कहा, "हुजूर, अबकी माफ कर दें, जिन्दगी में फिर कभी····"

हुजूर ने कलम से कुछ लिखा। जबानी सूचित किया, "१

अपराध किया है इसलिए पच्चीस रुपया फ़ाइन किया जाता है।"

बूढ़े पेशकार ने वगुला भगत की तरह धागे से वँधे ऐनक की फाँक से मुजरिम को हुज़ूर का आदेश समझा दिया।

हरिदास ने सब कुछ देखा। सोचते-सोचते हरिदास कोर्ट-इंस्पेक्टर के कमरे में आया। तुरन्त रिहा हुए मुजरिम ने श्रद्धा और विनय के साथ हमारे हरिदास को प्रणाम किया। कोर्ट-इंस्पेक्टर के शागिर्द ने हरिदास के हाथ में उसकी दक्षिणा थमा दी। अब हरिदास बग़ैर वक़्त वर्बाद किये कोर्ट विल्डिंग से निकल कर सड़क पर चला आया। एकाएक लगा कि कोई उसे पुकार रहा है। पीछे की ओर मुड़ते ही करबद्ध मुजरिम पर आँखें गयीं।

"आपसे परिचित होकर वेहद खुशी हुई।""तव हाँ, एक वात जानते हैं सर? थाने के वड़े वावू, कोर्ट वावू और आप लोगों में से वहुत से आदमी मुझे वेहद प्यार करते हैं।""इसलिए सर, मेरे कहने का मक़सद है कि आप 'डेली वेसिस' पर चाहते हैं या मन्थली वेसिस पर? मैं ज़बान का पक्का हूँ सर, इसलिए मेरे कहने का मतलव है कि 'डोल' लेने से हर रोज़ तीन रुपया और मन्थली होने से एक सौ""आप क्या चाहते हैं?"

हरिदास खामोशी ओढ़े खड़ा रहा। मानो वह भौंचक हो गया हो। जवाब देने लायक़ उसकी हालत न थी।

"ठीक है सर, पहली तारीख़ को ही मैं सब पेमेन्ट करता हूँ, अच्छा ही हुआ। पहली तारीख को तीसरे पहर चार वजे के वाद उस आम के पेड़ के नीचे एक हरदिया लिफ़ाफ़े में आपकी दक्षिणा रहेगी।"

वचपन में जिस तरह मन लगाकर भूत-प्रेत की कहानी सुनता था, उसी तरह हम लोग हरिदास की रिश्वत लेने की कहानी सुनते रहे। स्टेनोग्राफ़र वावू ने कहा, "अच्छा, हर महीने"""

हरिदास ने मेरी ओर मुड़कर कहा, "यकीन कीजिये वच्चूदा, वे

लोग जो कहते हैं, वही करते हैं। दो साल तक हर महीने की पहली तारीख को हरदिया लिफाफे में एक सौ रुपया मिलता रहा।"

हाथ में कोई खास काम न रहे तो दिमाग में तरह-तरह की बातें और चिन्ता आती रहती हैं। व्यतीत और अनागत के बारे में सोचता रहता हूँ। बीच-बीच में व्यतीत से वर्तमान की तुलना करता हूँ। सोचता हूँ, रिपोर्टर होने के पहले परिवार के मुट्ठी-भर लोगों के अलावा मुझे कौन पहचानता था ? कोई नहीं। लेकिन आज चालीस लाख की आबादी की कलकत्ता महानगरी में कम-से-कम कई हजार लोगों से परिचित हूँ। भले ही हर जगह नहीं, लेकिन बहुत से स्थानों में लोग चेहरे पर हँसी लिये, मेरी प्रतीक्षा करते रहते हैं। सुख-दुख, भले-बुरे में कितने ही लोगों के बीच खड़ा होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। दूर के आदमी निकट ही नहीं आये हैं, उनमें से अनेक तो परम आत्मीय भी बन गये हैं।

बीच-बीच में कलकत्ते के बाहर जाता हूँ लेकिन बहरमपुर जाने का वक़्त नहीं निकाल पाता, हालांकि अलका वग़ैरह से मिलने को मन व्याकुल हो उठता है। अलका मेरी या श्यामल की बहन नहीं है, इस बात पर किसी को यक़ीन नहीं होगा। हम भी यह सोच नहीं सकते कि अलका हमारी सगी बहन नहीं है। बहुत दिनों के बाद, तीन साल पहले अलका से मिलने गया था। लाल गोला पैसेंजर से बहरमपुर कोर्ट स्टेशन पर उतरने के बाद अलका और रमेश ने जिस प्रकार मेरा स्वागत-सत्कार किया, सोचने पर हँसने का मन करता है। कार्य-व्यस्त जीवन में आजकल जब भी थकावट महसूस होती है, उस वक्त इच्छा होती है कि भागकर अलका के पास चला जाऊँ। इच्छा होती है कि कई दिन उसके सेवा-जतन का उपभोग करूँ, रमेश के साथ बैठकबाजी करूँ और मुन्ना के साथ खेलूँ।

अलका की याद आते ही मुझे उस दिन की बात याद आती है जिस

दिन लाल बाज़ार पुलिस हेड क्वार्टर्स में श्यामल के कमरे में मेरी उससे पहले-पहल जान-पहचान और बातचीत हुई थी।

....मैं रिपोर्टर हूँ, श्यामल पुलिस अफ़सर। कोई समानता न रहने के बावजूद पहले हम लोगों में जान-पहचान हुई और उसके बाद हम मित्रता के बंधन में बँध गये। राइटर्स में काम खत्म करने के बाद दफ़्तर लौटने की हड़बड़ी न रहती तो मैं श्यामल से मिलने लाल बाज़ार चला जाता था। आम तौर से पुलिस अफ़सरों को पसन्द न करने पर भी मैं श्यामल को यथेष्ट श्रद्धा की दृष्टि से देखता था। इतना भला आदमी पुलिस में मिलना तो दूर की बात, प्रोफेसरों के बीच भी कठिनाई से मिलता है। यही वजह है कि वक़्त मिलते ही या तो श्यामल के दफ्तर में पहुँच जाता या फिर उसके घर पर चला जाता था।

श्यामल माथा झुकाये किसी मुक़द्दमे का इतिहास या रिपोर्ट लिख रहा था। मैं एक प्याली चाय पीता हुआ अखबार का पन्ना उलट रहा था। एक कांस्टेबुल ने आकर कहा, "साब, एक औरत आपसे मिलने आयी है।"

रिपोर्ट लिखते-लिखते श्यामल ने कहा, "अन्दर भेज दो।" दो या ढाई साल के एक छोटे खूबसूरत बच्चे का हाथ थामे बीस-बाईस साल की एक युवती ने कमरे के अन्दर प्रवेश किया। अख़बार पढ़ते-पढ़ते मैंने आँख उठायी और एक बार सरसरी निगाह से देख लिया। बड़ा ही अच्छा लगा। भले ही बेजोड़ खूबसूरत न हो फिर भी खूबसूरत जैसी ही लगी। रंग चाहे दूध में मिले महावर जैसा न हो मगर खुलता हुआ श्याम वर्ण अवश्य है। भौंहें बहुत सुन्दर नहीं, लेकिन आँखें बड़ी-बड़ी हैं। लम्बी नाक के ऊपर चौड़े ललाट पर सिन्दूर का एक बड़ा-सा टीका देखने में बेहद अच्छा लग रहा था। पहरावा था सफ़ेद करघे की साड़ी और लखनऊ के चिकन का सफ़ेद ब्लाउज। अंग-सज्जा की बहुलता दीख नहीं पड़ी, दोनों हाथों में मात्र दो कंगन नजर आये। युवती मुसकराती हुई, बच्चे का हाथ सँभाले श्यामल की मेज के सामने आकर खड़ी हो गयी।

श्यामल ने सोचा था, मुक़द्दमे की पैरवी करने कोई औरत आयी है। वगैर सिर उठाये थोड़ी-बहुत हिकारत के साथ पूछा, "क्या चाहिए ?"

"तुम्हारी ज़रूरत है", युवती ने दबी हँसी के साथ उत्तर दिया।

श्यामल हड़बड़ा कर उछल पड़ा। "अरे तू !....मैंने सोचा था....? "चोर-डाकू होगा, यही न भैया ?"

"मत कह, दुनिया के तमाम लोग जिन्हें नफ़रत की निगाह से देखते हैं, जिनसे डरते हैं, उन्हीं लोगों के बीच हमें रात-दिन बिताना पड़ता है।" श्यामल ने खेद के साथ कहा। उसके बाद वह बोला, "सीधे यहाँ चली आयी है, घर नहीं गयी ?" अब देर किये वगैर श्यामल ने बच्चे को अपनी गोद में उठा लिया।

"गयी थी।" साड़ी के पल्लू को उसने अपनी देह के चारों ओर अच्छी तरह लपेट लिया।" मैं सुबह की गाड़ी से आयी हूँ। तुम्हें वहाँ न पाकर लाल बाज़ार आ रही थी मगर माँ, बाबू जी और छोटी बहन सुशान्त ने आने नहीं दिया। भरपूर हिलसा मछली खाकर दोपहर-भर बूढ़ा-बूढ़ी के साथ अड्डेबाज़ी करती रही। उसके बाद सुशान्त की नयी गृहस्थी की कहानी सुनकर अभी आ रही हूँ।"

प्रसन्नता से श्यामल का चेहरा आईने के शीशे की तरह चमकने लगा। बच्चे के सिर और चेहरे को सहलाते हुए बोला, "अच्छा किया। इसके अलावा सुशान्त की शादी के बाद उससे तेरी यह पहली मुलाक़ात है न ?"

"हाँ।"

इसके बाद श्यामल आँधी की रफ़्तार से सवाल पर सवाल करने लगा। रमेश के दाँत का दर्द अच्छा हो गया ?....माधू तो दुबला जैसा दीख रहा है ! तेरा रंग और कितना काला होगा ?....रमेश छुट्टी लेकर कब आ रहा है ? वगैरह-वगैरह।

युवती ने एक-एक कर हर सवाल का जवाब दिया। बातचीत से समझ गया कि युवती श्यामल की बहन है। इतनी देर के बाद श्यामल

यान आया कि मैं भी उसकी बग़ल में बैठा हूँ।

“अरे अलका, तुझसे परिचय कराना भूल गया था। यह है मेरा र बच्चू, तेरा एक दूसरा भैया।”

एक हाथ से आँचल सँभाल और दूसरा हाथ आगे बढ़ाकर अलका झे प्रणाम करने को उद्यत हुई। किसी तरह उसका हाथ कसकर पकड़ लिया और अपना बचाव किया। लेकिन उसके मंतव्य से अपना बचाव नहीं कर सका।

अलका बोली, “श्रद्धा-ज्ञापन के अधिकार से मुझे वंचित कर आपको कौन-सा लाभ होगा ?”

मैं बोला, “श्रद्धा पाने के जिस अधिकार को अपने गुण से अर्जित नहीं किया है, उस श्रद्धा को क्यों स्वीकार करूँ ?”

अलका ने पूछा, “भैया, बच्चूदा क्या वकील हैं ?”

“नहीं; रिपोर्टर।”

आँख और भौंहों को नचाकर अलका ने कहा, “बाबा रे ! आपको तो डबल प्रणाम करना चाहिए।”

दो-चार मिनटों तक इसी प्रकार की बातचीत चलती रही। उसके बाद अलका ने कहा, “पिछली बार की तरह इस बार भी तिलक लगवा-कर भाग आओगे, यह नहीं होगा। सारा दिन गुज़ार कर दूसरे दि लौटना पड़ेगा।” ज़रा अभिमान भरे स्वर में बोली, “ऐसा न करोगे त फिर तकलीफ़ उठाकर उतनी दूर जाने की ज़रूरत ही क्या ?”

श्यामल मुसकरा दिया। कहा, “दिन जैसे-जैसे बीतते जा रहे हैं, वैसे-वैसे झगड़ालू होती जा रही है। भाई दूज में भोजन ही अगर अस चीज़ रहता तो इसका नाम होता भोजन दूज....भाई दूज त्योहा अवसर पर तू तिलक लगायेगी, मेरे पैर पर माथा टेकेगी, मिठा थाली आगे बढ़ाकर एक अदद फिनले की धोती थमा देगी....”

“यह सब फालतू बात रहने दो भैया। मुझे वचन दो कि तुम भर रहोगे।”

"छुट्टी मिली तो अवश्य रहूँगा।"

लगा, अलका वेहद गुस्से में आ गयी है। बोली, "अपने काम को क्षति पहुँचा कर आना वेकार है।"

अलका के मन के ईशान कोण में श्यामल को अभिमान मिश्रित क्रोध के काले-काले वादलों के टुकड़े दिखायी पड़े। श्यामल ने अपराधी की तरह कहा, "दफ्तर में झगड़ा मत कर। ज़बान देता हूँ कि दिन-भर ठहरूँगा।" श्यामल ने एक बार मेरी ओर देखा और फिर कहा, 'अरे अलका, मुझे तो तूने निमंत्रित किया, लेकिन बन्धु को नहीं। और इस पर तुर्रा यह कि हाथ बढाकर खुशी से प्रणाम कर रही थी।"

अलका का जो चेहरा खुशियों से दमक रहा था, वही शर्म से लाल हो गया। उसके बाद उसने इस तरह निमंत्रित किया कि मैं अस्वीकार नहीं कर सका।

श्यामल और मैंने नीचे उतर कर अलका और मामू को टैक्सी में बिठा दिया। कुछ दिन बाद ही भाई दूज के दिन सबेरे-सबेरे हम दोनों एक साथ अलका के घर श्रीरामपुर गये थे। श्यामल आशीर्वाद के रूप में अलका के लिए क़ीमती साड़ी-ब्लाउज और मुन्ना के लिए मार्टिन के सूट के अतिरिक्त ढेर सारी मिठाई ले गया था। ट्यूशन का वेतन पेशगी लेकर मैं भी अलका के लिए एक साड़ी और मुन्ना के लिए खिलौना ले गया था। तिलक लगवाकर हमने भरपूर खाना खाया, रात में 'उदयन' में नाइट शो सिनेमा देखा। इसके अलावा अलका से हमें खासी अच्छी दक्षिणा भी प्राप्त हुई। यही नहीं, रात के वक़्त गाने-बजाने की मजलिस भी जमी। श्यामल हारमोनियम लेकर बैठ गया। रमेश तबला बजाने लगा और अलका ने गीत गाया—'जीवन जखन शुकाये जाय, करुणाधाराय एशो," जे छाड़ुक, आमि तोमाय छाड़व ना मा' तथा और भी ढेर सारे गीत। रात दो या ढाई बजे 'ताश के देश' के 'लाल पान ईंट' से गीत की समाप्ति हुई।

मैंने कहा, "अलका, बहुत-बहुत धन्यवाद और कंग्रेचुलेशन्स।

तो बहुत अच्छा गाती हो।"

रमेश ने फुंफकार छोड़ी, "बच्चू दा, मेरे तबले की कोई करामात नहीं....."

"नहीं-नहीं, करामात क्यों नहीं, तुमने बहुत ही अच्छा बजाया। हमेशा बजाते हो ?"

हमें पता न चले इस अन्दाज से अलका को चिकोटी काटते हुए रमेश बोला, "हमेशा न बजाऊँ तो कैसे चलेगा ? एक तो खूबसूरत स्त्री, उस पर सुशिक्षिता और सुगायिका से शादी की है, इसलिए थोड़ी बहुत मुसाहबी और ताबेदारी करते रहना पड़ता है।

मैंने कहा, "नो कमेन्ट।"

श्यामल ने कहा, "उफ़् रमेश, अलका को क्यों चिढ़ा रहे हो ?"

अलका ने कहा, "यही उसका काम है।"

उतनी रात में लेटने पर भी मुझे नींद नहीं आ रही थी। खिड़की की बग़ल के हरसिंगार के पेड़ की फाँक से मैं शुक्ला तृतीया का आकाश देख रहा था और अलका वगैरह के बारे में सोच रहा था कि कैसे मैं इस परिवार से घुल-मिल गया, कैसे इन लोगों के सुख-दुख का सहभागी हो गया। एकाएक ऐसा महसूस हुआ जैसे मेरी ज़िन्दगी एक पहाड़ी नदी है, जिसके उद्गम का पता चल सकता है, मगर उसकी गति और पथ का पता लगाना मुश्किल है। पर्वत की उच्चतम चोटी से निकलकर पहाड़ी नदी पहाड़ के चढ़ाव-उतार को पारकर दिक्हारा नशेबाज़ की तरह जीवन की गति ले पहाड़ और तलहटी के गिर्द चक्कर काटती है। किसी भी तरह के बंधन को न मानने वाली वही पहाड़ी नदी एक विचित्र शिला के सामने आकर ठिठक जाती है और फिर मुड़कर बहने लगती है। आज रात लेटे-लेटे मुझे लगा, मेरा जीवन भी पहाड़ी नदी की भाँति अनगिनत अज्ञात पथों से चक्कर काटता हुआ अचानक शिला के समान अलका को अपने पास पाकर ठमक कर खड़ा हो गया है। अतीत और भविष्य का बारीक विवेचन किये बिना मैं अलका, उसके पति रमेश और उसके बच्चे से प्रेम करने लगा।

सवेरे सात-साढ़े सात की गाड़ी पकड़ आठ-साढ़े आठ तक हावड़ा पहुँचने की बात थी। मगर हाथ में चाय की प्याली थामे अलका ने मुझे जब झकझोर कर जगाया तो उस वक्त घड़ी नौ बजा रही थी। मानता हूँ, मैं 'ऑन हिज मैजिस्टीज़ सर्विस' में था, मगर श्यामल के साथ ऐसी बात नहीं थी; इसलिए घड़ी पर जैसे ही उसकी निगाह गयी, वह चिहुँक उठा। अलका जले पर नमक छिड़कती हुई बोली, "वाकई तुम्हारी बहुत बड़ी क्षति हो गयी। ठीक कह रही हूँ न भैया? ढेर सारे केस पेण्डिंग पड़े होंगे। उसके बाद उसने मुझसे कहा, "आपकी भी तो ढेर सारी मीटिंग—रिपोर्ट बाक़ी पड़ी हुई होंगी। इसके अलावा आप नहीं जायेंगे तो अख़बार निकलेगा ही नहीं। बात सही है न बच्चू दा?"

श्यामल ने झिड़की सुनायी, "फालतू बक-बक मत कर, जाकर अपना झमेला सँभाल।"

गुसलख़ाने में जाते-जाते मैंने कहा, "अलका, श्यामल पर नजर नहीं पड़ रही। वह क्या अभी तक सोया है?"

अलका जवाब दे कि इसके पेश्तर ही दो अदद राशन की थैलियाँ लिए रमेश दरवाज़े को ठेलकर अन्दर आया और पूछा, "आप कुछ कह रहे थे, बच्चू दा?"

एक हाथ में मंजन और दूसरे हाथ में तौलिया लिए श्यामल पीछे की ओर से आया और बोला, "दस बज गये हैं, अब कुछ करना नहीं है। चटपट कुछ मुगलई पराठे और कस्टर्ड पुडिंग खिलाकर विदा करो।"

गुसलख़ाने का अध्याय समाप्त कर अलका की साड़ियाँ लुंगी की तरह पहन जब हमने भर-पेट मुगलई पराठे और कस्टर्ड पुडिंग खा लिये तो अलका ने घोषणा की, यह हुआ ब्रेकफ़ास्ट। अन्ततः श्रीरामपुर के अलका-भवन में मध्याह्न भोजन और अपराह्न की चाय के बाद हम कलकत्ता रवाना हुए। मुन्ना को अपने साथ ले रमेश और अलका

न आये थे। ट्रेन पर चढ़ने के पहले अलका और रमेश ने हमें प्रणाम
ा और दोनों ने बार-बार आने के लिए साग्रह अनुरोध किया।
हावड़ा स्टेशन पर उतरकर श्यामल ने पूछा, "बच्चू, अलका तुम्हें
ी लगी ?"

"बहुत ही अच्छी।"

"हाँ, अलका सचमुच बहुत ही अच्छी लड़की है।" श्यामल ने मेरी
ाँख बचाकर एक लंबी साँस ली। "रमेश बड़ा ही अच्छा लड़का है।"

मैंने कहा, "तुम्हारी तक़दीर इतनी अच्छी न होती तो अलका जैसी
बहन और रमेश जैसा बहनोई पाना मुश्किल था।" बात करते हुए हम
स्टेशन के बाहर आ गये हैं। हम दोनों अलग-अलग बसों से विदा होते
कि इसके पहले ही मैंने श्यामल से पूछा, "अच्छा, अलका तुम्हारी किस
प्रकार की बहन है ?"

"किस प्रकार की क्या ? वह मेरी बहन है और मैं उसका भाई
हूँ।"

उस दिन और कुछ बातचीत नहीं हुई, हावड़ा स्टेशन से हम दोनों
दो तरफ़ चल दिये।

काफ़ी दिनों के बाद श्यामल ने एक दिन अलका के बीते जीवन की
ी सुनाकर मुझे हैरत में डाल दिया था।

....लगभग तीन साल पहले की कहानी है। श्यामल उन दिनों बड़-
तल्ला के थाने का सेकेण्ड ऑफिसर था। नाइट ड्यूटी में बैठे-बैठे समर-
सेट मॉम का 'रेजर्स ऐज' रात दो बजे तक तक़रीबन ख़त्म कर चुका
था। कलाईघड़ी की ओर देखा, चार बजकर दस मिनट हो रहे हैं।
दिसम्बर का आधा महीना समाप्त हो चुका है। ओवरकोट को अच्छी
तरह बदन पर रखकर मुड़कर बैठ गया और दो-चार पृष्ठ ही पढ़े होंगे
कि टेलीफ़ोन घनघना उठा।

अलस्सुबह के सरूर में जब कलकत्ते के लोग गहरी नींद में खोये थे
उस वक्त तीन-चार कांस्टेबुल लेकर श्यामल लॉरी से रवाना हो गया

टॉप गियर में तीव्र गति से गाड़ी चलाता हुआ मोनागाछी के मोड़ पर पहुँचा। अनुभवी ड्राइवर ने हेड लाइट जलाकर मोड़ के औरत-मर्द को चकाचौंध में डाल दिया। ब्रेक लेते ही श्यामल और कांस्टेबुल नीचे उतर पड़े।

चारों तरफ गौर से देखें कि इसके पहले ही एक खूबसूरत युवती ने आकर श्यामल को कसकर पकड़ लिया। युवती की साड़ी जमीन पर लोट रही थी, आँखों में अज्ञात विभीषिका की छाया हिल-डुल रही थी। एक ही साँस में युवती दसियों बार बोल गयी, "भैया मुझे बचाइए।"" वे लोग मुझे जान से मार डालेंगे, मेरी जान बचाइए।"

श्यामल ने बिना कुछ कहे युवती को बूढ़े कांस्टेबुल दुबे के सुपुर्द कर दिया और खुद उसके सामने बढ़ आया। कांस्टेबुल दुबे के बाहुओं में जकड़ी युवती ने एक बूढ़े, एक नौजवान और एक प्रौढ़ा महिला को दिखाते हुए कहा, "ये तीनों आदमी मुझे जान से मार डालेंगे।" बगैर कुछ कहे श्यामल इन तीनों व्यक्ति को लॉरी में बिठाकर थाने चला आया।

थाने में वापस आ हाथ का बेटन और टोपी रखकर बोला, "लड़की को अलग रखो और इन तीनों को एक साथ।

श्यामल अपनी कुरसी पर चुपचाप बैठ गया। रात ड्यूटी के बाद डेरे पर आराम करेगा, ऐसा तो हुआ नहीं, बल्कि नया झमेला खड़ा हो गया। पुलिस की नौकरी में इस तरह का झमेला खड़ा होना मामूली रोजमर्रा की घटना है, इसलिए क्रुद्ध होने पर भी उसे जाहिर नहीं होने दिया। एक प्याली चाय पीकर कांस्टेबुल से कहा, "लड़की को यहीं भेज दो।"

भयभीत, संत्रस्त, आतंकित युवती धीरे-धीरे, [illegible] चलती हुई श्यामल की मेज के सामने आकर खड़ी हो गयी। साड़ी का आँचल खींच, माथा झुकाकर पूछा, "आपने मुझे बुलाया है?"

"हाँ।"

भोर की धुंधली रोशनी में श्यामल युवती को अच्छी तरह देख नहीं सका था, अब उसे अच्छी तरह देखा। युवती बड़ी खूबसूरत लगी। श्यामल शायद विभोर होकर देख रहा था। लड़की ने दुबारा सवाल किया, "मुझसे कुछ कहना है ?"

"नहीं; सुनना है। इस घटना के बारे में आपका बयान सुनना चाहता हूँ।" श्यामल ने सिर झुकाकर कहा।

"तो सुनिये।"

श्यामल ने देखा, युवती की आँखों से आँसू के दो कतरे टपक पड़े। आवाज़ में भी भारीपन आ गया। मगर उसने स्वयं को संयत कर लिया। "....मेरा नाम अलका है। मेरे पिता राय बहादुर केशव चन्द्र सान्याल भागलपुर के सबसे नामी वकील हैं। घण्टाघर से बंगाली टोला रास्ते के नुक्कड़ पर दाहिनी ओर हमारा आलीशान मकान है। मैं अपने बाप की बड़ी लड़की हूँ, मेरा छोटा भाई अबकी आइ० एस-सी० का इम्तिहान देगा। मोक्षदा गर्ल्स स्कूल की छात्रा की हैसियत से मेरी ख्याति फैली हुई थी। कभी मैं थर्ड नहीं हुई, हमेशा फ़र्स्ट या सेकेण्ड ही होती आयी हूँ। मैट्रिक फ़र्स्ट डिवीजन में पास किया। इंटरमीडिएट ी परीक्षा देने के समय मुझे निमोनिया हो गया और तक़रीबन एक महीने तक बिस्तर पर लेटे रहना पड़ा। इसलिए पहले जैसा रिजल्ट नहीं हो पाया। मैंने सेकेण्ड डिवीजन में पास किया। फ़िलॉसफ़ी में ऑनर्स लेकर मैंने पिछले साल बी० ए० पास किया है।

"क्लास की सहेलियों के अतिरिक्त बाहरी दुनिया से मेरा कोई लगाव नहीं था और न ही इसकी कोई ज़रूरत थी। जिन दिनों बंगाल के लोग शान्ति निकेतन को अच्छी निगाह से नहीं देखते थे, उन्हीं दिनों मेरी माँ शान्ति निकेतन में पढ़ती थी। रवीन्द्र नाथ के चरणों तले बैठकर माँ ने रवीन्द्र संगीत की तालीम ली थी। रवीन्द्र नाथ की उपस्थिति में 'परिशोध' और 'चण्डालिका' में अभिनय कर नाम कमाया था। बाबू जी शाम के वक़्त चेम्बर में मुवक्किलों के साथ व्यस्त रहते थे और माँ

ऑर्गन लेकर बैठती थी। बचपन में थोड़ी समझ आते ही माँ को अक्सर अकेले घण्टों तक गीत गाते हुए पाती थी! साथ-साथ मैंने भी रवीन्द्र संगीत गाना सीख लिया। माँ ऑर्गन बजाती और मैं गीत गाती। जब मैं सात साल की थी उस समय बंगाली टोला की दुर्गापूजा के अवसर पर पंडाल में 'तोमारि गेहे पालिछो स्नेहे तुमि धन्य-धन्य हे' गीत गाया और मुझे कमिश्नर्स पदक प्राप्त हुआ।

"बाद में मैं इसी गीत को गाने मुंगेर, जमालपुर, पटना, साहबगंज के अलावा बहुत-सी जगह गयी। हर बार मेरी माँ मुझे अपने साथ ले जाती थी और मेरा छोटा भाई बोधिसत्त्व तबला या ढोल बजाता था। यही वजह है कि बाहर निकलने के बावजूद बाहरी दुनिया से मेरा परि-चय-संपर्क नहीं हो पाया। होने की जरूरत भी न थी।

"अपनी छोटी-सी गृहस्थी में हम मजे से दिन गुज़ार रहे थे। चाचाजी स्कूल-कॉलिज की पढ़ाई की देख-रेख करते, माँ संगीत सिखाती। रविवार का पूरा वक़्त बाबूजी हम लोगों के साथ बिताते और इस वजह से मुझे ढेर सारी कविता और किताबें पढ़नी पड़ती थी। बाबू जी अत्याधुनिक नहीं थे, वे क्लासिक जैसी चीजें ज्यादा पसन्द करते थे। बाबू जी बचपन में मुझे शेक्सपीयर, बायरन, ह्विटमैन, होमर, थैकरे, ऑस्कर वाइल्ड तथा बहुत सारे कवियों के छोटे-छोटे कोटेशन जबानी याद कराते थे। किसी-किसी दिन विद्यापति का 'तातल सैकत वारि बिन्दु सम' या कृत्तिवास का 'कुले शोते ठाकुराले ब्रह्मचर्य गुणे' याद कराते थे। किसी-किसी दिन 'मैमन सिंह गीतिका' या ईश्वर गुप्त की कई पंक्तियाँ पढ़कर सुनाते थे।"

अलका की कहानी सुनते-सुनते श्यामल विभोर हो गया। थाने में बैठकर इस तरह का बयान सुनने का अभ्यस्त नहीं था, इसलिए अनजाने ही निर्लज्ज की तरह एकटक अलका के चेहरे की ओर निहार रहा था। विवेक ने चुपके से श्यामल के कान में कहा—अलका बेगुनाह है, पाप इसका स्पर्श न करे। श्यामल के हृदय में अलका के प्रति स्नेह उमड़

गया। मन ही मन वह इस निश्चय पर पहुँचा कि इसे ज़िन्दा रखना ागा।

अलका ने ज़मीन की ओर ताकते हुए एक लम्बी उसाँस ली और चुपके से आँखों के आँसू पोंछ लिये।

......"यक़ीन कीजिये भैया, उम्र बढ़ने पर भी मैंने कभी उत्तेजना या उन्माद का अनुभव नहीं किया। सपने में भी कभी सोचा नहीं था कि मेरे कारण मेरे माँ-बाबू जी को आँसू बहाना होगा। नियति पर विश्वास नहीं करती थी, मगर आज देखती हूँ, नियति ने मेरा अहंकार चूर-चूर कर दिया।"

अलका एक मिनट के लिए खामोश हो गयी; उसके बाद बोली, "हर बार की तरह इस बार भी दुर्गा पूजा के अवसर पर मुंगेर, अपने ननिहाल गयी थी। बहुतेरे सगे-संबंधियों से घर भरा था, इसलिए नवमी की रात थियेटर के बाद जहाँ जिसको सुविधा हुई लेट गया। मेरा ध्यान इस पर नहीं गया था कि मेरी बग़ल में मेरे मझले मामा के साले रथीन बाबू सोये हैं। गहरी नींद में बीच-बीच में ऐसा महसूस होता कि किसी का हाथ मेरे बदन से टकरा रहा है। नींद में ही एक-दो बार हाथ हटा दिया, और करवट लेकर सो गयी। ऐसा लगा जैसे घर का ही कोई आदमी मेरी बग़ल में लेटा है। इसके अलावा एक ही कमरे में इतने-सारे आदमी अगल-बग़ल लेटे हों तो ऐसा होना संभव है। उसके बाद एकाएक मेरी नींद टूट गयी। भय और आतंक से मैं चिल्ला जा रही थी मगर रथीन बाबू मेरा मुँह दबाये हुए थे। कान में फुसफुस कर कहने लगे; अलका, सबको मालूम हो जायेगा, सर्वनाश हो जायेगा, चिल्लाओ नहीं।"

अलका ने रूखे चेहरे से श्यामल की ओर देखा। होठों को क हुई बोली, जानते हैं भैया, उस रात मेरी आँखों से लगातार आँस धार बहती रही। रथीन बाबू सवेरे ही उठकर सूटकेस हाथ में ले स गंज चले गये थे। जाने के पहले कुछ मिनटों तक मेरे सामने सिर

खड़े रहे और बोले; अलका, हो सके तो मुझे क्षमा कर देना। इसके अलावा यह भी कहा था - जिन्दगी मे कभी और किसी लड़की का स्पर्श नहीं करूँगा—यही मेरी प्रतिज्ञा है। मेरी जबान से एक भी शब्द बाहर नहीं आया। मैं खामोश रही। सोच रही थी अपने और रथीन बाबू के बारे में। सगे-संबंधियों के बीच रथीन बाबू सुशिक्षित और चरित्रवान व्यक्ति के रूप में जाने जाते थे। इसके पहले मैंने यह नही सोचा था कि वे बुरे होंगे। आज भी ऐसा नही सोचती। मगर इतना तो जरूर सोचती हूँ कि उन्होंने मेरा सर्वनाश क्यों किया ?''

बहरहाल, अलका गर्भवती हो गयी। माँ-बाप के सिर पर जैसे बिजली आकर गिर पड़ी। राय बहादुर ने बीमारी का बहाना बनाकर कचहरी जाना बन्द कर दिया। माँ का गाना-बजाना बन्द हो गया, ऑर्गन पर धूल की परतें जम गयीं। लगभग दो महीना इसी तरह गुजरने के बाद अचानक अलका के फूफा एक दिन भागलपुर उन लोगों के घर पर आये। प्रौढ़ बहनोई को अपने निकट पाकर वे अलका के सर्वनाश की कहानी उनसे कह गये। फूफा जी ने समस्या को छू मंतर में उड़ा दिया। बोले, "अरे, इसके लिए फिक्र करने की कौन-सी बात है ? मैं कलकत्ता ले जाकर सब सही रास्ते पर ला दूँगा। तब हाँ, कलकत्ते के डॉक्टरों की माँग अधिक हुआ करती है। दो-तीन हजार रुपये पर पानी फिर जायेगा।

दो दिन बाद आधी रात में फूफा जी और अलका को अपर इण्डिया एक्सप्रेस के एक कूपे में कलकत्ते के लिए बिठा दिया। बंगाली टोले के सभी लोगों को इतना ही मालूम हुआ कि अलका शादी के सिलसिले में बुआ के घर कलकत्ता गयी है।

ट्रेन में फूफा जी ने अलका को अपने पास बिठाकर काफ़ी कुछ सांत्वना दी—भय की कोई बात नहीं, वे सब कुछ सही रास्ते पर ला देंगे। अलका को मन में थोड़ा-बहुत बल मिला। दूसरे ही क्षण उसने सोचा, मातृत्व के अधिकार से नारी का जीवन गौरवान्वित होता है

आया। मन ही मन वह इस निश्चय पर पहुँचा कि इसे ज़िन्दा रखना होगा।

अलका ने ज़मीन की ओर ताकते हुए एक लम्बी उसाँस ली और चुपके से आँखों के आँसू पोंछ लिये।

.....“यक़ीन कीजिये भैया, उम्र बढ़ने पर भी मैंने कभी उत्तेजना या उन्माद का अनुभव नहीं किया। सपने में भी कभी सोचा नहीं था कि मेरे कारण मेरे माँ-बाबू जी को आँसू बहाना होगा। नियति पर विश्वास नहीं करती थी, मगर आज देखती हूँ, नियति ने मेरा अहंकार चूर-चूर कर दिया।”

अलका एक मिनट के लिए खामोश हो गयी; उसके बाद बोली, “हर बार की तरह इस बार भी दुर्गा पूजा के अवसर पर मुंगेर, अपने ननिहाल गयी थी। बहुतेरे सगे-संबंधियों से घर भरा था, इसलिए नवमी को रात थियेटर के बाद जहाँ जिसको सुविधा हुई लेट गया। मेरा ध्यान इस पर नहीं गया था कि मेरी बग़ल में मेरे मझले मामा के साले रथीन बाबू सोये हैं। गहरी नींद में बीच-बीच में ऐसा महसूस होता कि किसी का हाथ मेरे बदन से टकरा रहा है। नींद में ही एक-दो बार हाथ हटा दिया, और करवट लेकर सो गयी। ऐसा लगा जैसे घर का ही कोई आदमी मेरी बग़ल में लेटा है। इसके अलावा एक ही कमरे में इतने-सारे आदमी अगल-बग़ल लेटे हों तो ऐसा होना संभव है। उसके बाद एकाएक मेरी नींद टूट गयी। भय और आतंक से मैं चिल्लाने जा रही थी मगर रथीन बाबू मेरा मुँह दबाये हुए थे। कान में फुसफुसाकर कहने लगे; अलका, सबको मालूम हो जायेगा, सर्वनाश हो जायेगा, चिल्लाओ नहीं।”

अलका ने बुझे चेहरे से श्यामल की ओर देखा। होठों को काटते हुई बोली, जानते हैं भैया, उस रात मेरी आँखों से लगातार आँसू की धार बहती रही। रथीन बाबू सवेरे ही उठकर सूटकेस हाथ में ले साहबगंज चले गये थे। जाने के पहले कुछ मिनटों तक मेरे सामने सिर झुकाये

खड़े रहे और बोले; अलका, हो सके तो मुझे क्षमा कर देना । इसके अलावा यह भी कहा था : जिन्दगी में कभी और किसी लड़की का स्पर्श नहीं करूँगा—यही मेरी प्रतिज्ञा है । मेरी जबान से एक भी शब्द बाहर नहीं आया । मैं खामोश रही । सोच रही थी अपने और रथीन बाबू के बारे में । सगे-संबंधियों के बीच रथीन बाबू सुशिक्षित और चरित्रवान व्यक्ति के रूप में जाने जाते थे । इसके पहले मैंने यह नहीं सोचा था कि वे बुरे होंगे । आज भी ऐसा नहीं सोचती । मगर इतना तो जरूर सोचती हूँ कि उन्होंने मेरा सर्वनाश क्यों किया ?"

बहरहाल, अलका गर्भवती हो गयी । माँ-बाप के सिर पर जैसे बिजली आकर गिर पड़ी । राय बहादुर ने बीमारी का बहाना बनाकर कचहरी जाना बन्द कर दिया । माँ का गाना-बजाना बन्द हो गया, आँगन पर धूल की परतें जम गयी । लगभग दो महीना इसी तरह गुजरने के बाद अचानक अलका के फूफा एक दिन भागलपुर उन लोगों के घर पर आये । प्रौढ़ बहनोई को अपने निकट पाकर वे अलका के सर्वनाश की कहानी उनसे कह गये । फूफा जी ने समस्या को छू मंतर में उड़ा दिया । बोले, "अरे, इसके लिए फ़िक्र करने की कौन-सी बात है ? मैं कलकत्ता ले जाकर सब सही रास्ते पर ला दूँगा । तब हाँ, कलकत्ते के डॉक्टरों की माँग अधिक हुआ करती है । दो-तीन हज़ार रुपये पर पानी फिर जायेगा ।

दो दिन बाद आधी रात में फूफा जी और अलका को अपर इण्डिया एक्सप्रेस के एक कूपे में कलकत्ते के लिए बिठा दिया । बंगाली टोले के सभी लोगों को इतना ही मालूम हुआ कि अलका शादी के सिलसिले में बुआ के घर कलकत्ता गयी है ।

ट्रेन में फूफा जी ने अलका को अपने पास बिठाकर काफ़ी कुछ सांत्वना दी—भय की कोई बात नहीं, वे सब कुछ सही रास्ते पर ला देंगे । अलका को मन में थोड़ा-बहुत बल मिला । दूसरे ही क्षण उसने सोचा, मातृत्व के अधिकार से नारी का जीवन गौरवान्वित होता है

लेकिन मैं स्वेच्छा से उसे विसर्जित करने जा रही हूँ। मैं सन्तान की हत्या करने जा रही हूँ। चलती रेलगाड़ी के झटके के साथ अलका के मन में भी अगणित सवाल उमड़ने-घुमड़ने लगे। रात ढलती रही, तिन पहाड़ स्टेशन में चायवाला आखिरी हाँक लगाकर चला गया। ट्रेन फिर चलने लगी। बैठे-बैठे अलका की पलकें झपकने लगीं।

अपर इण्डिया एक्सप्रेस दोपहर के पहले ही स्यालदह पहुँच गयी। फूफा जी अलका के साथ होटल में टिके। अलका ने एक बार पूछा था, "यहाँ डॉक्टर कहाँ है?" फूफा जी ने कहा था, "यहाँ कुछ भी नहीं होगा। शाम के बाद तुम्हें ऐसी जगह ले जाऊँगा जहाँ लड़कियाँ हैं। वहीं डॉक्टर आयेगा।"

शाम होते न होते फूफा जी के साथ अलका बहुत से उपन्यासों की बहुत सारी नायिकाओं की स्मृति से संश्लिष्ट घोड़ा गाड़ी पर सवार हुई। कितनी ही गली और सड़कें पार कर घोड़ा गाड़ी एक ऐसे धुँधलके से से भरे बदबूदार मुहल्ले के अन्दर पहुँची जिसके बारे में अलका को पता नहीं था कि यह कोई गन्दा मुहल्ला है।

खिड़की बन्द रहने के बावजूद अलका के कानों में औरत-मर्दों के ठहाके, गीत की धुन और बीच-बीच में सबको दबोचकर मुखर होती हुई एक अजीब तरह की चिल्लाहट आ रही थी। ठीक-ठीक समझ में न आने पर भी अलका को बेचैनी का अहसास होने लगा। आसन्न भविष्य की आशंका से उसका मन आतंकित हो उठा।

अलका की जिन्दगी के लंकाकाण्ड का वर्णन करते हुए श्यामल ने कहा, "आदमी की नीचता देखते-देखते मन आदमी के प्रति घृणा से भर गया है। बाप के हमउम्र फूफा जी ने मकान-मालकिन से एक कमरे के लिए अनुरोध किया। बड़े शिकार के लालच में मकान-मालकिन ने एक ही बात में अनुरोध स्वीकार कर लिया। लेकिन आये हुए ढेर सारे गाहकों से फूफा जी की लड़ाई ठन गयी। आखिर में मकान-मालकिन अलका को तीसरे माले में अपने कमरे में ले गयी। सामयिक तौर पर

स्वस्ति मिलने पर भी अलका को शान्ति नहीं मिली। गहरी रात में दबे पांवों चुपचाप छत से छलांग लगाकर खुदकशी करने की कोशिश करने पर अलका को कामयाबी हासिल नहीं हुई। मकान-मालकिन ने पीछे से आंचल खींचकर हाथ के परिन्दे को जंगल में जाने से रोक लिया। मकान-मालकिन शिकार के मामले में माहिर थी, वह जानती थी कि नया शिकार फंसा हो तो उस पर निगरानी रखनी चाहिए।

अलका जैसी नयी लड़की के मुहल्ले में आने से दोस्त-दुश्मनों की जमात में खलबली मच गयी। सोनागाछी के एक छोर से दूसरे छोर तक घर-घर यह खबर फैल गयी। दुश्मनों की जमात इस तीन मंज़िले पर कड़ी निगाह रख रही थी।……रात के आखिरी पहर में अलका ने सोचा, ठंड के कारण सभी नींद में डूबे पड़े हैं। सोचा, इस मौके से लाभ उठाकर वह इस जघन्य कारागार से बाहर निकल कर अपनी नियति की परीक्षा करेगी, लेकिन उसकी यह कोशिश भी कारगर साबित नहीं हुई। मकान-मालकिन जब दल-बल के साथ अलका को घसीट कर ले जा रही थी, उसी समय बड़तल्ला थाने का टेलीफ़ोन घनघना उठा।

अलका के जीवन की कहानी सुनकर श्यामल भौंचक-सा बैठा हुआ था। जीवन के सफ़र के फिसलन-भरे रास्ते पर अलका जो औंधे मुँह गिर पड़ी उसके लिए जिम्मेदार कौन है? श्यामल को जवाब नहीं मिला, लेकिन मन ही मन उसने महसूस किया कि अलका पाप के गड्ढे में गिर तो पड़ी थी मगर पाप उसका स्पर्श नहीं कर सका है।

अलका को लाकर माँ की हिफ़ाज़त में रखा। मौका मिलने पर माँ-बाप को अलका की कहानी सुनाया। श्यामल ने अविलंब राय बहादुर को ज़रूरी तार भेजा—कम शार्प। वृद्ध राय बहादुर दूसरे ही दिन सपत्नीक श्यामल के घर आ पहुँचे। बाद की कहानी लंबी नहीं, लेकिन बेहद खुशी की है। श्यामल के माँ-बाप की कोशिश से राय बहादुर ने

रमेश से अलका की शादी तय कर दी। रिपन होस्टल में रहकर रमेश जब बी० एस-सी० पढ़ रहा था, उसके माँ-बाप, भाई-बहन नोआखाली के दंगे में मारे गये थे। अलका के बारे में सब कुछ जानने के बाद भी नये ज़माने का रमेश उससे शादी करने को तैयार हो गया।

माघ महीने के शुभ दिन में श्यामल के घर पर तीन महीने की गर्भ-वती अलका से रमेश की शादी हो गयी। अब देखने से पता नहीं चलेगा कि अलका श्यामल की बहन नहीं है। जमाई-षष्ठी के अवसर पर रमेश के लिए भागलपुर जाकर निमंत्रण की रक्षा करना संभव नहीं हो पाता है, श्यामल के माँ-बाप ही इस ज़िम्मेदारी को निभाते हैं।

मुन्ना के अन्नप्राशन पर राय बहादुर को आने की इच्छा नहीं थी लेकिन श्यामल के पिता का अनुरोध ठुकरा नहीं सके। भागलपुर जाने के पहले श्यामल के पिता के हाथों को थामकर राय बहादुर ने कहा था, "प्रोफेसर, पिछले जन्म में तुम निश्चय ही मेरे जुड़वाँ भाई थे और श्यामल मेरी सन्तान।""मैं अपनी लड़की खोने जा रहा था, लेकिन भगवान ने इसके बदले मुझे भाई दिया, लड़का दिया और रमेश जैसा रतन दिया।"

महान् संकट के दौर से गुज़रने के बाद भी अलका को श्यामल की उदारता के कारण जीवन का समस्त ऐश्वर्य प्राप्त हो गया था। एक आवश्यक लेबर मीटिंग की कार्यवाही का संवाद लेने कुछ दिनों के बाद मैं श्रीरामपुर गया तो अलका के घर पर भी गया। कलकत्ता लौटने की अनुमति न मिलने पर मीटिंग के बाद टेलीफ़ोन से दफ्तर सूचना भेज दी और अलका के घर पर रात के वक़्त ठहर गया। रमेश जल्दी ही सो गया था, बरामदे पर चाँदनी में बैठकर मैं और अलका बहुत देर तक गपशप करते रहे। काफ़ी कुछ बातचीत के बाद, अलका ने एकाएक कहा, "बीच-बीच में लगता है, छल-छलावे से आपका प्रेम प्राप्त किया है। लगता है, मैंने अन्याय किया है।"

"अचानक यह सब फालतू बात तुम्हारे मन में क्यों आयी?"

अलका जैसे अपने आप मे डूब गयी थी। बोली, "फालतू नहीं है, बच्चू दा।""मेरी सारी बात सुनें, तो हो सकता है, आप मेरे घर में क़दम न रखें।"

झिड़की-भरे स्वर में मैंने कहा, "उफ् अलका!"

इसके बाद मुझे कुछ कहने का मौका दिये बगैर अलका ने धड़ल्ले से अपनी जीवन-कहानी कहना शुरू कर दिया। कहानी के बीच में ही मैंने जबरन रोक दिया। अलका को अपने निकट खींचकर लाड़ करते हुए कहा, "अलका, मैं अखबार का रिपोर्टर हूँ। बीते दिनों की अपेक्षा वर्तमान और भविष्य के प्रति ही अधिक आग्रहशील रहता हूँ, जरूरत भी इसी की पड़ती है। व्यतीत में तुमने कहाँ एक रात बितायी या नहीं बितायी है, उससे मेरा कुछ बनता-बिगड़ता नहीं। अतीत भले ही असत्य न हो मगर वह छाया मात्र है। जिस अलका सान्याल के बारे में तुम कह रही हो, वह छाया मात्र है। आज की अलका राय का यही परिचय है कि उसके दो पिता और दो माताएँ हैं, बोधिसत्व के अतिरिक्त उसके दो भाई हैं और सबसे बड़ी बात है कि आदर्शवादी रमेश उसका पति है। यही नहीं, आज तुम माँ हो, तुम सन्तान की जननी हो, तुम सबके लिए श्रद्धा की पात्री हो।"

चाँदनी में मैंने साफ़-साफ़ देखा, अलका के चेहरे पर हँसी तैर रही है। लगा, उसके कपोल पर दो रेखाएँ दमक रही हैं। समझ गया, आँखों के आँसू सूख गये हैं। आँसू के स्पर्श से अलका का चेहरा और भी सुन्दर दीखने लगा। लगा, कितने ही युग-युगान्तर से अलका और मैं भाई-बहन बनकर इस धरती पर आते रहे हैं और यहाँ से विदा होते रहे हैं। अनन्त काल के प्रेम के हम दोनों बन्दी हैं। याद नहीं, हम दोनों ५ व तक बैठे रहे। लेकिन, इतना याद है कि अलका ने बहुत देर बाद कहा था, "भैया की उदारता पाकर मैं धन्य हूँ।"

श्रीरामपुर में बीच-बीच में जाता था, लेकिन रमेश जब बहरमपुर चला गया तो सिर्फ एक बार ही जा सका। आज दूर रहने पर भी

को भूला नहीं हूँ। उसके स्नेह को भूल नहीं पाया हूँ, रमेश और
को भूल नहीं पाया हूँ। कोयले की खान के मजदूर को कोयला
-काटते कदाचित् कभी-क़दा हीरे का टुकड़ा मिल जाता है, उसी
र प्रेस का रिपोर्टर होने के नाते जन-सभा, प्रेस कॉन्फ्रेन्स, थाना
स, फ़ायर-ब्रिग्रेड और अस्पताल के संवादों की कार्यवाही लेने के
लसिले में अलका से मुलाक़ात होने पर मैंने स्वयं को धन्य माना है।
र क्षण यही सोचता हूँ कि उन लोगों का कल्याण हो।

अखबारों की अपनी-अपनी खासियत होती है और उसी की वजह से उन्हें सम्मान प्राप्त होता है। कोई वेहद प्रचार-प्रसार के कारण सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है तो कोई समाज के उच्चस्तरीय व्यक्तियों की अन्दरूनी खबरों को उछालकर आदर पाता है। हमारे 'दैनिक संवाद' कार्यालय में कंपोज के लिए लाइना मशीनें और मुद्रण के लिए विशाल रोटरी मशीन न थी, इसलिए इसका प्रचार सीमित था। मगर दुनिया-भर की छिपी खबरें उछालने के कारण 'दैनिक संवाद' अनेक लोगों के दिल में दहशत पैदा कर देता था।

अखबार के पन्ने पर नाम छपाने का लोभ प्रायः हर आदमी के मन में रहता है। मिनिस्टर चक्रधर चैटर्जी में भी यह दुर्वलता थी। चक्र-धर दा को मालूम था कि हमारे अखबार में उनका नाम छपने का मतलब है दोहरा लाभ। इसलिए चक्रधर दा कलकत्ते के वाहर किसी समारोह में जाते तो अक़्सर मुझे अपने साथ ले लेते थे। मैं भी घूमने फिरने के नशे और भविष्य में स्कूप समाचार पाने की उम्मीद में चक्रधर दा की संगति का मजा लेने को अक़्सर वाहर निकल पड़ता था।

चीफ़ मिनिस्टर वाहर गये थे और तमाम मंत्रियों के कमरों के चक्कर लगाने पर भी मैं किसी समाचार का पता लगा नहीं सका

आख़िर में चक्रधर दा के कमरे के अन्दर जाकर पूछा, "भैया, कुछ हासिल होगा ?"

"भले आदमी की औलाद, पहले आकर बैठो, एक प्याली चाय पियो, उसके बाद देखूंगा कि कुछ है या नहीं।"

चक्रधर दा का आतिथ्य स्वीकार कर अन्ततः उनके साथ गाड़ी में बैठकर शान्तिपुर गया। शान्तिपुर सनातन समिति के वार्षिक अधिवेशन में चक्रधर दा ने मुख्य अतिथि की हैसियत से एक सारगर्भित भाषण दिया। कहा : अनन्तकाल के यात्रा-पथ में भारत एक विशेष ध्रुवतारा रहा है तथा इस पुण्यभूमि में युग-युगों तक एक के बाद दूसरे महापुरुष का आविर्भाव होता रहा है। उनकी शान्ति की मधुर वाणी ने संसार को नयी आशा का आलोक दिया है और उसके साथ ही दिया है नये जीवन का इंगित। चक्रधर दा ने और भी बहुत-कुछ कहा। अन्त में बोले : चैतन्य-भूमि के पुण्यतीर्थ में खड़े होकर गर्व के साथ इस बात की घोषणा कर सकता हूँ कि जिस स्थान की मिट्टी पर भगवान रामकृष्ण ने जन्म लिया है जहाँ वीर विवेकानन्द ने साधना की है, विद्यासागर, राममोहन, शिवनाथ शास्त्री, रवीन्द्र नाथ, श्री अरविन्द, नेताजी इत्यादि अनगिनत महामानवों के पदचिह्न जिस पर अंकित हैं, वह बंगाल आज की तरह हमेशा दुरवस्था में पड़ा नहीं रहेगा। चारों तरफ़ तालियों की गड़गड़ाहट हुई। उसके बाद सिर्फ़ एक पंक्ति कहकर चक्रधर दा बैठ गये " तमाम अंधकार से ऊपर उठकर शौर्य-वीर्यवान् चरित्र के साथ बंगालियों की पताका पुनः फहराने लगेगी।

दुबारा तालियों की गड़गड़ाहट हुई। सभापति ने अनुनय-विनय-भरे शब्दों में चक्रधर दा के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित की। गले की चादर को सँभालते हुए चक्रधर दा बोले, "इसके लिए कृतज्ञता-ज्ञापन की आवश्यकता ही क्या है ? आप लोगों के पास आना हमारा कर्त्तव्य है। स्थानीय म्युनिसिपैलिटी के चेयरमैन अजित कुमार ब्रह्मचारी ने मुख्य अतिथि को धन्यवाद देते हुए कहा, "शान्तिपुर जैसे प्राचीन

सनातन समिति की वार्षिक सभा में माननीय चक्रधर बाबू जैसे देश के सच्चरित्र, विद्वान और श्रद्धेय नेता के आगमन से शान्तिपुरवासी आज अपने को धन्य मान रहे हैं।"

शान्तिपुर की सुविख्यात गायिका श्रीमती लावण्य हालदार के गीत से समारोह की समाप्ति हुई।

कलकत्ता लौटने के रास्ते में राणाघाट के निकट एक छोटी-सी सड़क के मोड़ पर चक्रधर दा ने गाड़ी रोकने को कहा। बोले, "बच्चू भाई, ज़रा बैठो। सामने ही मेरे एक दोस्त की विधवा औरत और लड़की रहती हैं, ज़रा देख आता हूँ।"

चक्रधर दा पैदल चलते हुए गली में ओझल हो गये, मैं और ड्राइवर गाड़ी में बैठे रहे। पाँच-दस-पंद्रह मिनट गुज़रते-गुज़रते आधा घण्टा हो गया, फिर भी चक्रधर दा वापस नहीं आये। दो-चार मिनट और बैठने पर मैं धैर्य खो बैठा। गौर से पूछा, "क्या बात है गौर, तुम्हारे साहब अब तक नहीं लौटे? गौर कुछ जवाब न दे सका। गाड़ी का दरवाज़ा खोलकर मैं नीचे उतर पड़ा और गली की ओर ताकने लगा। कुछ क्षण और बीत जाने के बाद चौदह-पन्द्रह साल की एक लड़की गाड़ी के पास आयी और गौर से पूछा, आपका नाम बच्चू बाबू है?" गौर ने मेरी तरफ़ इशारा किया।

यह जानकर कि चक्रधर दा और लड़की की माँ मुझे बुला रहे हैं, मैं लड़की के साथ एक इकमंज़िले खण्डहरनुमा मकान में आकर हाज़िर हुआ। मौलसिरी की बगल से होकर सहन में क़दम रखते ही चक्रधर दा ने अन्दर से कहा, "बच्चू, इधर आओ।"

अन्दर के बरामदे से महीन किनारी की धोती पहने एक मध्यवयस्क महिला बाहर निकलकर आयीं। आते ही पुकारा, "आओ भाई, अन्दर चले आओ। पहले पता चलता तो तुम्हें इतनी देर तक गाड़ी में बिठाकर नहीं रखती।"

दीदी के पीछे-पीछे चलता हुआ बरामदे पर आया और चक्रधर दा

की बग़ल में तख्ते पर बैठ गया। दीदी के आदेशानुसार उनकी लड़की मल्लिका ने मुझे एक तश्तरी मिठाई और एक गिलास पानी दिया। खाने की मुझे कोई खास इच्छा न थी, लेकिन चक्रधर दा और दीदी के अनुरोध पर खाना ही पड़ा।

चाय की प्याली से घूँट लेते हुए चक्रधर दा बोले, "इनका पति महीतोष मेरे बचपन का दोस्त था। दोनों एक साथ पढ़े थे और एक साथ राजनीति करते थे। हम दोनों एक साथ जेल भी गये थे। लगभग तीन बरस पहले धनुष्टंकार रोग से महीतोष की मृत्यु हो गयी। महीतोष के छोटे भाई प्रियतोष के लिए नौकरी का इन्तजाम कर दिया था, लेकिन ईश्वर का मज़ाक देखो, जवान लड़का एकाएक बस-दुर्घटना में घायल हो गया और आज तीन महीने से अस्पताल में पड़ा है।" एक खासी लंबी उसाँस लेकर चक्रधर दा बोले, "मालूम नहीं, ईश्वर की मर्जी क्या है, लेकिन अब इन दो प्राणियों का क्या होगा, यही चिन्ता लगी है।"

दीदी सिर झुकाये बैठी थीं। मल्लिका चक्रधर दा के पास बैठ कर दाँत से नख काट रही थी। दीदी की कहानी सुन मेरा मन बोझिल हो उठा था। मैंने कहा, "आपके हाथ में तो अपार शक्ति है, दीदी के लिए कुछ कर-करा दीजिये।"

विदा लेने के समय दीदी ने मेरा हाथ थामकर कहा, "फिर आना भैया। गरीब बहन को भूल मत जाना।"

चेहरे पर हल्की मुसकराहट लाकर मैंने कहा, "आप यह क्या कह रही हैं! रिपोर्टर दीदी-भैया किसी को नहीं भूलते। आप नहीं भूलिएगा तो मैं भी नहीं भूलूंगा।"

लोगों की भीड़-भाड़ से भरे कलकत्ते में काम में मशगूल रहने के कारण दीदी और मल्लिका की याद एक तरह से दिल से उतार चुका था, तभी तक़रीबन छह महीने के बाद तरह-तरह की बातों के प्रसंग में एक दिन चक्रधर दा ने सूचना दी कि प्रियतोष बाबू चल बसे।

...तन समिति की वार्षिक सभा में माननीय चक्रधर बाबू जैसे ...के सच्चरित्र, विद्वान और श्रद्धेय नेता के आगमन से शान्तिपुरवासी ...ज अपने को धन्य मान रहे हैं।"

शान्तिपुर की सुविख्यात गायिका श्रीमती लावण्य हालदार के गीत ...से समारोह की समाप्ति हुई।

कलकत्ता लौटने के रास्ते में राणाघाट के निकट एक छोटी-सी सड़क के मोड़ पर चक्रधर दा ने गाड़ी रोकने को कहा। बोले, "बच्चू भाई, ज़रा बैठो। सामने ही मेरे एक दोस्त की विधवा औरत और लड़की रहती हैं, ज़रा देख आता हूँ।"

चक्रधर दा पैदल चलते हुए गली में ओझल हो गये, मैं और ड्राइवर गाड़ी में बैठे रहे। पाँच-दस-पंद्रह मिनट गुज़रते-गुज़रते आधा घण्टा हो गया, फिर भी चक्रधर दा वापस नहीं आये। दो-चार मिनट और बैठने पर मैं धैर्य खो बैठा। गौर से पूछा, "क्या बात है गौर, तुम्हारे साहब अब तक नहीं लौटे? गौर कुछ जवाब न दे सका। गाड़ी का दरवाज़ा खोलकर मैं नीचे उतर पड़ा और गली की ओर ताकने लगा। कुछ क्षण और बीत जाने के बाद चौदह-पन्द्रह साल की एक लड़की गाड़ी के पा... आयी और गौर से पूछा, आपका नाम बच्चू बाबू है?" गौर ने मे... तरफ़ इशारा किया।

यह जानकर कि चक्रधर दा और लड़की की माँ मुझे बुला रहे... मैं लड़की के साथ एक इकमंज़िले खण्डहरनुमा मकान में आकर हा... हुआ। मौलसिरी की बगल से होकर सहन में क़दम रखते ही च... दा ने अन्दर से कहा, "बच्चू, इधर आओ।"

अन्दर के बरामदे से महीन किनारी की धोती पहने एक मध्य... महिला बाहर निकलकर आयीं। आते ही पुकारा, "आओ भाई, ... चले आओ। पहले पता चलता तो तुम्हें इतनी देर तक गाड़ी में ... नहीं रखती।"

दीदी के पीछे-पीछे चलता हुआ बरामदे पर आया और च...

की बगल में तख्ते पर बैठ गया। दीदी के आदेशानुसार उनकी लड़की मल्लिका ने मुझे एक तश्तरी मिठाई और एक गिलास पानी दिया। खाने की मुझे कोई खास इच्छा न थी, लेकिन चक्रधर दा और दीदी के अनुरोध पर खाना ही पड़ा।

चाय की प्याली से घूँट लेते हुए चक्रधर दा बोले, "इनका पति महीतोष मेरे बचपन का दोस्त था। दोनों एक साथ पढ़े थे और एक साथ राजनीति करते थे। हम दोनों एक साथ जेल भी गये थे। लगभग तीन बरस पहले धनुष्टंकार रोग से महीतोष की मृत्यु हो गयी। महीतोष के छोटे भाई प्रियतोष के लिए नौकरी का इन्तजाम कर दिया था, लेकिन ईश्वर का मजाक देखो, जवान लड़का एकाएक बस-दुर्घटना में घायल हो गया और आज तीन महीने से अस्पताल में पड़ा है।" एक खासी लंबी उसांस लेकर चक्रधर दा बोले, "मालूम नहीं, ईश्वर की मर्जी क्या है, लेकिन अब इन दो प्राणियों का क्या होगा, यही चिन्ता लगी है।"

दीदी सिर झुकाये बैठी थी। मल्लिका चक्रधर दा के पास बैठ कर दाँत से नख काट रही थी। दीदी की कहानी सुन मेरा मन बोझिल हो उठा था। मैंने कहा, "आपके हाथ में तो अपार शक्ति है, दीदी के लिए कुछ कर-करा दीजिये।"

विदा लेने के समय दीदी ने मेरा हाथ थामकर कहा, "फिर आना भैया। गरीब बहन को भूल मत जाना।"

चेहरे पर हल्की मुसकराहट लाकर मैंने कहा, "आप यह क्या कह रही हैं! रिपोर्टर दीदी-भैया किसी को नहीं भूलते। आप नहीं भूलिएगा तो मैं भी नहीं भूलूंगा।"

लोगों की भीड़-भाड़ से भरे कलकत्ते में काम में मशगूल रहने के कारण दीदी और मल्लिका की याद एक तरह से दिल से उतार चुका था, तभी तक़रीबन छह महीने के बाद तरह-तरह की बातों के प्रसंग में एक दिन चक्रधर दा ने सूचना दी कि प्रियतोष बाबू चल बसे।

लगभग दो साल बाद एक दिन दोपहर में राइटर्स बिल्डिंग के गलियारे से जाते हुए सामने की ओर से एक महिला को आते देखकर एकाएक याद आया कि यह तो दीदी है, लेकिन मन में एक प्रकार का सन्देह भी पैदा हुआ। इसके पहले राणाघाट के डेरे पर जब दीदी को देखा था, उस समय दीदी की उम्र तक़रीबन पैंतीस मालूम हुई थी। आज राइटर्स बिल्डिंग के गलियारे में उम्र कुछ कम मालूम हुई। महीन किनारी के बदले चौड़ी किनारी की सफ़ेद साड़ी दीख पड़ी। शुरू में पुकारने की हिम्मत न हुई। सोचा, शायद कोई दूसरी औरत है। मगर बिलकुल आमने-सामने होने पर कपाल के कटे दाग़ को देखकर समझ गया कि यह तो मेरी वही दीदी है।

हाथ जोड़कर कहा, "नमस्कार !"

नमस्कार के बदले नमस्कार न कर दीदी वैनिटी बैग दाहिने से बायें हाथ में लेकर बोलीं, "आपको ठीक-ठीक पहचान नहीं पा रही हूँ।"

बग़ैर शर्मिन्दा हुए मैंने कहा, "मेरा नाम बच्चू है।"

"कौन बच्चू ?" दीदी ने भौंह सिकोड़कर पूछा।

"किसी दूसरे बच्चू के बारे में मुझे मालूम नहीं। तब हाँ, यह बच्चू रिपोर्टर है। कुछ दिन पहले चक्रधर दा के साथ राणाघाट आपके डेरे पर....."

इसके आगे मुझे कुछ कहना नहीं पड़ा। दीदी ने हँसते हुए कहा, "ओह तुम हो ! कैसे हो भाई ?"

"ऐसी दीदी रहे तो भाई की हालत कैसे बुरी होगी, आपकी कृपा से कुशल ही है।"

लाड़ से मेरे गाल पर एक चपत जमाते हुए दीदी बोलीं, "रिपोर्टर नहीं, तुम तो शब्द-शिरोमणि हो।"

मोटे तौर पर दीदी ने सूचना दी कि राणाघाट छोड़कर आजकल वे कलकत्ते में रह रही हैं और सकुशल हैं। "मैं बालीगंज प्लेस में रहती

हूँ। प्रेसिडेन्सी नर्सिंग होम के सामने की गली से सीधे चले आना। उसके बाद ज़रा बायें चलकर दायें मुड़ने पर सामने एक ड्राई क्लीनिंग शॉप पर निगाह पड़ेगी। इस मोड़ पर आकर मल्लिका का नाम लेते लेते ही लोग मेरा डेरा बता देंगे। या फिर पूछना कि पूर्णिमा दीदी का डेरा कहाँ है।"

मैंने भी कह दिया कि वक्त मिलने पर जाऊँगा।

अभिमान और बनावटी क्रोध के स्वर में दीदी बोलीं, "दीदी के पास अख़बारों का चालूपन नहीं चलेगा। बताओ, कब आ रहे हो ?"

तर्क करने से कोई नतीजा नहीं निकला, अन्ततः अगले रविवार को आने का वादा करना पड़ा। चलती हूँ भाई, यह कहकर दीदी मुस-करा कर विदा हो गयीं, मगर मेरी पेशानी पर चिन्ता की लकीरें उभर आयीं। विधवा महिला का एकमात्र सहारा प्रियतोष बाबू थे लेकिन उनके मरने के बाद भी दीदी क्योंकर अच्छी तरह हैं ? किस ख़ुशी के कारण दीदी की प्रौढ़ता में से आज फिर से जवानी झांक रही है ? मुझे इसमें एक तरह के रहस्य का हाथ लगा।

तारादा से कहकर बुधवार के बदले रविवार को ही ऑफ़ लिया। तीसरे पहर के पहले ही धोती-कुरता पहनकर दीदी के डेरे की ओर रवाना हुआ। निर्धारित समय पर वेलेस्ली-गड़ियाहाट की ट्राम पकड़ कर बालीगंज फांड़ी के मोड़ पर उतर कर बालीगंज के अन्दर गया। गोपाल भांड़ की तरह दो डग आगे और तीन डग पीछे चलकर अनगिन बार दाहिने से बायें और बायें से दाहिने चलकर अन्ततः ड्राइ क्लिनिंग पर नज़र पड़ी। दीदी के डेरे का पता किससे पूछूँ, यह सोचते ही बरामदे पर बँगला चलचित्र जगत् के भावी नायकों पर नज़र पड़ी। मन में सोचा, मुहल्ले की कुमारी युवतियों का पता लगाने के लिए इससे बढ़-कर पूछताछ-कार्यालय और कौन-सा हो सकता है ? जो सोचा था, सही साबित हुआ। मल्लिका का नाम लेते ही एक अर्धयुवक रेड क्रॉस के स्वयंसेवक की तरह उठकर आया और बोला, "आइये, दिखा देता हूँ।"

जवान पॉकेट से माउथ ऑर्गेन निकाल कर बड़े ही खूबसूरत ढंग से
क हिन्दी गीत का स्वर बजाते हुए एक तीन-मंज़िले मकान के सामने
ाया और पुकारा "मल्ली।"

तीसरे माले के बरामदे की रेलिंग पर झुककर नीचे की ओर
झाँकते हुए, सजल काली आँखों से एक लड़की ने विद्युत-बाण चलाया।
मुँह से कुछ कहने के पहले ही माउथ ऑर्गेन से फिर एक मीठा-सा स्वर
बाहर निकल आया। उसके बाद कहा, "नीचे आओ।"

लड़की अपने अंग-अंग को थिरकाती, नाचते हुए सीढ़ियाँ उतर कर
नीचे मेरे सामने आयी। मैंने पूछा, "पूर्णमादी हैं?"

"हैं, मेरे साथ आइये," मल्ली बोली।

मल्ली के पीछे-पीछे सीढ़ियां चढ़ते हुए मैंने देखा, तीनेक साल पहले
राणाघाट की जिस मल्लिका को न तो रूप था और न ही सौरभ, वही
मल्लिका अब पूर्णतया प्रस्फुटित हो गयी थी और उसकी खुशबू सारे
मुहल्ले में फैल गयी थी।

सीढ़ियाँ तय कर तीसरे माले पर पहुँचते न पहुँचते दीदी ने दाहिने
ाथ से मुझे अपने पास खींच लिया। रोल्ड गोल्ड के रिमलेस चश्मे
ान्तराल से दीदी की आँखों की मुसकान मेरे चेहरे पर बिखर गयी।
मेरे और दीदी के पीछे-पीछे मल्ली आयी।

दीदी के साथ आकर जिस कमरे में प्रवेश किया वह छोटा होने
बावजूद करीने से सजा था। दीवान के अनुकरण पर एक छोटे से
पर खादी की छपी चादर बिछी थी। मुझे अपने साथ ले दीदी उसी
बैठ गयीं। मैं कमरे के चारों तरफ़ निगाह दौड़ा रहा था; दीदी
"तुमने मुझे बिसराया नहीं, इसके लिए बहुत-बहुत धन्यवाद!"

मैंने कहा, "परीक्षा-फल खराब होने के बावजूद विद्यार्थी की है
से मैं कोई बुरा नहीं था।"

होंठ बिदकाकर दीदी बोलीं, "बात में तुमसे भला कौन जीत
है?"

मैंने कहा, "अधजल गगरी छलकत जाय।"

दीदी बोली, "अब बहस नहीं, तुम मल्ली से गपशप करो, मैं चाय लेकर आती हूँ।"

दीदी बरामदे से होती हुई बगल के कमरे में चली गयी। सामने से एक पुराने अखबार को उठाकर मैंने उसे सरसरी निगाह से देखा और रख दिया। आँख उठाकर देखा तो मल्लिका को खड़ी पाया। मल्लिका अब छोटी नहीं रही। मल्लिका में अब उभार आ गया है, उसके पास मधु और मधुमक्खियाँ हैं। आप कहकर संबोधन करूँ या तुम, समझ में नहीं आ रहा था। उसके बाद दीदी की बात का स्मरण करके कहा, "मल्लिका, तुम खड़ी क्यों हो? बैठो।"

मल्लिका ने निकट के एक मोढ़े पर बैठकर शायद एक बार मेरी ओर तिरछी निगाह से देखा। दो-चार मिनटों तक मैं चुपचाप बैठा रहा। बेचैनी महसूस होने लगी। मल्लिका से पूछा, "कैसी हो?"

जिस उत्तर की आशा थी, वही मिला। मल्लिका ने कहा, "ठीक ही हूँ।"

"कलकत्ता कैसा लग रहा है?"

अब मल्लिका जरा हँस दी; बोली, "कलकत्ता कहीं बुरा लगता है?"

मैं फिर खामोश हो गया। उसके बाद पूछा, "तुम लोग गंगाघाट छोड़कर क्यों चली आयी?"

मल्लिका ने मेरी ओर ताकते हुए कहा, "बगैर आये हमारे लिए कोई दूसरा उपाय नहीं रह गया था। यहाँ न रहने से माँ को टैक्सी में बहुत पैसा बर्बाद करना पड़ता था और माँ को लगभग हर रोज कल-कत्ता आना पड़ता था……"

"दीदी के पास टैक्सी है?" झट से मेरे दिमाग में सूझ आ गयी।

"टैक्सी तो बहुत पहले से ही है, लगभग दो साल से?"

मल्लिका ने हिसाब करते हुए कहा, "दो साल से कुछ अधिक समय से ही।"

मल्लिका ने मुझे अपना आदमी सोचकर गृहस्थी की बहुत-सारी बातें बतायीं। कहा, पहले माहवार हजार-बारह सौ खर्च हो जाता था मगर आजकल आठ-नौ सौ से ज्यादा नहीं होता। चक्रधर चाचा न होते तो उन्हें भीख माँगना पड़ता। और, इतने बड़े आदमी होने के बावजूद वे इतने निरहंकारी और परोपकारी हैं कि उनका जोड़ मिलना मुश्किल है।"

दीदी अपने दोनों हाथों में दो प्लेटें थामे कमरे के अन्दर आयीं। इशारे से मल्लिका को चाय लाने को कहा। "लो भाई, थोड़ी-सी चाय पियो।"

मैंने राय ज़ाहिर की, "भाई की तरह दीदी अब गरीब नहीं है कि थोड़ी-सी चाय पियूंगा। ख़ुशहाल दीदी के घर पर आया हूँ, डटकर खाना खाऊँगा।"

दीदी के चेहरे पर उतार-चढ़ाव देखकर लगा, मेरी बात से उन्हें संत.प हुआ।

अब मैंने ज़रा हठ के साथ कहा, "आपने वादा किया था कि किसी दिन टैक्सी से घुमाइएगा....."

दीदी बोलीं, "अरे यह कौन-सी बड़ी बात है? जिस दिन मर्जी हो, घूम लेना।"

पोटेटो चिप्स के कुछेक टुकड़े मुँह के अन्दर डालकर मैंने पूछा, "चक्रधर दा इतने लोगों की भलाई करते हैं जिसका कोई अन्त नहीं।"

चक्रधर दा के सन्दर्भ में बातचीत करते ही पूर्णिमादी का चेहरा पूनम के चाँद की तरह झलमलाने लगा। कृतज्ञता से चेहरा परिपूर्ण हो गया। बस इतना ही कहा, "ऐसा कोई दूसरा आदमी मिलना मुश्किल है भाई। वे न होते तो मैं और मल्लो कहाँ किस किनारे लगतीं, यह सोचते ही डर लगने लगता है।"

और कुछ देर तक दीदी से सुख-दुख की बातें कर वहां से विदा हुआ।

दूसरे दिन राइटर्स बिल्डिंग पहुँचते ही चक्रधर दा के पास गया। मौक़ा मिलते ही कहा, "जानते हैं भैया, कल मैं पूर्णिमादी के डेरे पर गया था।"

चक्रधर दा ने घबराहट के साथ कहा, "सचमुच ? वे लोग सकुशल तो हैं ?"

दीदी और मल्लिका की कुशलता की सूचना देते हुए मैंने कहा, "आप उन लोगों के लिए टैक्सी का इन्तजाम नहीं कर दिये होते तो दीदी की क्या हालत होती, यह सोचा भी नहीं जा सकता।"

चक्रधर दा बड़े ही चतुर व्यक्ति हैं। लम्हे-भर के लिए कुछ सोचा। बोले, "तुम तथा और भी बहुत से लोगों ने मुझसे उन लोगों के लिए कुछ करने कहा था। सो आखिर में एक टैक्सी ही दे दी।"

चक्रधर दा ने गंगाजल से गंगा को पूजाकर मुझे क्लीन बोल्ड आउट कर दिया। यानी मेरी ही बात का हवाला देकर मेरा ज़हर दूर कर दिया। इसके बाद मैंने बात आगे नहीं बढ़ायी, संदर्भ बदल कर उस दिन वहां से चल दिया।

इसके कुछ दिन बाद उत्तर बंगाल की बाढ़ की कार्यवाही का संवाद लेने चला गया। तिस्ता के पागलपन के कारण कूच बिहार, जलपाईगुड़ी का चक्कर लगाते हुए कलकत्ता लौटने में कई महीने बीत गये। वेलिंगटन-हाजरा-श्रद्धानन्द मैदान की जनसभा, विक्षोभ, जुलूस, प्रेस-कॉन्फ्रेन्स तथा बहुत सारी सभा-समितियों की बाढ़ के कारण कलकत्ता लौटने पर दीदी को याद करने की फ़ुर्सत ही नहीं मिली।

बहुत दिनों बाद एस्प्लेनेड के मोड़ पर दीदी से मुलाकात हुई। दीदी को मैं पहचान नहीं सका। अबकी दीदी ने ही मुझे पहचाना। फैशनेबुल लड़कियों की तरह 'हैलो रिपोर्टर' कहकर दीदी ने मेरी ओर हाथ बढ़ाया।

मैं अवाक् होकर दीदी की ओर ताकता रहा। वॉब्ड बाल, आँखों पर सनग्लास, स्किनटाइट स्लीवलेस ब्लाउज, होठों पर रंग, आँखों में काजल—ऐसी हालत में दीदी को पहचानता भी कैसे? दीदी के घुटनों की उम्र का होने के बावजूद दीदी के अंगों की माया से अपने को अलगकर आँख हटाने में काफ़ी-कुछ वक़्त लग गया; जैसे हल्के नशे ने मुझे दबोच लिया हो। अन्ततः स्वयं को संयत कर, हाथ बढ़ाते हुए दीदी से हाथ मिलाया। एसप्लेनेड के मोड़ पर खड़े हो दीदी की संगति का उपभोग ज्यादा देर तक करने में मुझे भय और संकोच का अनुभव हुआ। पूछा, "किस तरफ़ जा रही हैं?"

"आइ सपोज़, तुम अधिक व्यस्त नहीं हो", दीदी ने सवाल के बदले सवाल ही किया।

सोचा था, 'हाँ' कहूँगा मगर मुँह से निकल गया, 'नहीं'। दीदी ने बस इतना ही कहा, "वेरी गुड।" उसके बाद मुझे खींचते हुए, सड़क को पार कर गाड़ी के अन्दर बैठ गयीं। मुझे अपने पास बिठाकर दीदी खुद ही ड्राइव करने लगीं। चौरंगी, रास बिहारी, गड़ियाहाट पार कर दीदी ने जोधपुर पार्क के एक छोटे से बँगले के सामने आकर हॉर्न बजाया। नौकर ने आकर फाटक खोल दिया, दीदी गाड़ी अन्दर ले गयीं।

छोटे से मकान के सामने ही लॉन है। लॉन के चारों तरफ़ कैरन-डुला और कुछ दूसरे फूलों की क़तार। एक तरफ़ गैरेज और सर्वेन्ट्स क्वार्टर। दीदी ने अन्दर की ओर हाँक लगायी। ड्राइंगरूम, बेडरूम, गेस्टरूम के अन्दर घुमा-फिराकर पूछा, "हाउ डू यू लाइक माइ स्मॉल कॉटेज?"

"बहुत ही खूबसूरत।"

दीदी मुझे ड्राइंगरूम में बिठाकर कपड़ा बदलने अन्दर चली गयीं। दीदी अन्दर चली गयीं तो मैंने चक्कर लगाकर चारों तरफ़ देख लिया। एकाएक राइटिंग टेबल पर पड़े एक पैड पर नज़र गयी। उस

पर लिखा है—कॉण्टिनेण्टल सिण्डिकेट प्राइवेट लिमिटेड। समझ गया, दीदी अब सिर्फ़ एक टैक्सी की ही मालकिन नहीं, एक कंपनी की भी मालकिन हैं।

दीदी के साथ बेयरा ट्रॉली ट्रे में पेस्ट्री, सैंडविच और चाय ले आया। मेरा सत्कार करती हुई दीदी बोली, "जानते हो भाई, इण्डिपेण्डेण्ट बिजनेस के अतिरिक्त आदमी के लिए जिन्दा रहने का कोई दूसरा चारा नहीं है। यही वजह है कि बहुत सोचने-विचारने के बाद एक्सपोर्ट-इंपोर्ट बिजनेस शुरू कर दिया है। यकीन करो रिपोर्टर, दिस इज ए वेरी गुड लाइन।"

बहुत सारे मुद्दों पर बातचीत करने के बाद दीदी अन्त में बोली, "जर्नलिज्म करके तुम क्या कर लोगे? कम एण्ड ज्वाइन मी।"

दीदी को मैंने बहुत-बहुत धन्यवाद दिया—जरा इस बात पर सोच कर देख लूं।

विदा होने के पहले दीदी से पूछा, "मल्लिका दीख नहीं रही है!"

"मॉली! मेरे पार्टनर जस्टिस कयाल के लड़के साथ बंबई गयी है, एक इंपोर्ट डील फ़ाइनलाइज करने।""शी इज वेरी बिजी नाउ।" दीदी ने गर्व के साथ सूचना दी।

दीदी को देखते ही मल्लिका की प्रतिमा मेरी आँखों के सामने स्पष्ट हो गयी। कुमारी मल्लिका बसु अब मिस मॉली बसु हैं।

तीन-चार महीने बाद मुझे एक कार्ड मिला था""टु सेलिब्रेट दि एंगेजमेन्ट ऑफ़ मॉली विथ विजितेश, यू आर कॉरडियली इनवाइटेड टु ड्रिंक्स।" जा नहीं सका था। शायद अच्छा ही हुआ वरना उपहार बर्बाद हो चला जाता। साल पूरा होने के पहले ही मॉनी और विजितेश का सम्बन्ध-विच्छेद हो गया। सुनने में आया, इसके बाद मॉनी का पुनर्विवाह एक मिलिटरी अफसर से हुआ।

आम लोगों को जिन्दगी चाहे जितनी ही विचित्रताओं से क्यों न भरी हो, लेकिन पत्रकारों की जिन्दगी और कार्य-कलाप उनकी तुलना

में और अधिक विचित्रताओं से भरे-पूरे रहते हैं। यही वजह है कि सब की निगाह से बचकर दीदी रात के अँधेरे में छिपकर जो जीवन जी रही थीं, उसकी छोटी-मोटी खबरें भी तरह-तरह के सूत्रों से प्राप्त होती रहती थीं। दो-चार दावतों में जाने पर कुछेक महापुरुषों से दीदी के संबंध में तरह-तरह की टिप्पणियाँ सुनने को मिलीं।

अखबार का रिपोर्टर होने के कारण न तो बैंक-बैलेन्स कर सका और न ही घर-द्वार, जायदाद, इंश्योरेन्स और गहना। एक शब्द में कहा जाये तो संचय के नाम पर कुछ भी नहीं कर सका। तब हाँ, अनुभव कुछ न कुछ अवश्य बटोरे हैं और इसी संचय के आनन्द के आवेग के कारण दुरवस्था की परवाह किये बगैर भविष्य की ओर क़दम बढ़ाता जा रहा हूँ। आम लोग और अक्लमन्द दुनियादारों की जमात इस पर भले ही यक़ीन न करे, लेकिन यह बात पत्रकारों के जीवन की मर्मवाणी है।

जब रिपोर्टर नहीं था, उन दिनों अखबारों का पाठक था। जन-समुद्र का एक अंग बनकर मारा-मारा फिर रहा था। उन दिनों बेव-क़ूफ़ों की तरह नेताओं का भाषण सुनने मैदान जाता था। उनके वक्तव्य के आमंत्रण पर दोपहर-भर इन्क़लाब-ज़िन्दाबाद करता था, घर-द्वार, स्कूल-कॉलेज छोड़कर सड़क पर बैठा रहता था। यही नहीं, इसके लिए स्वयं को धन्य समझता था। डॉक्टर हर प्रसाद मौलिक, डॉक्टर विप्लव चैटर्जी, महामानव सेनगुप्त, लंबोदर चक्रवर्ती, गदाधर कुठारिया इत्यादि नेताओं का भाषण सुनकर स्वयं को कृतार्थ समझता था। अपनी सुख-सुविधा, मान-सम्मान की परवाह किये बगैर हिमालय सरकार और हिटलर घोष को आन्दोलन के लिए आत्म-त्याग करते देख, श्रद्धा से माथा झुका लेता था। पहले अखबारों से इन नेताओं की तसवीर काट-

कर एलबम में रखता था, ऑटोग्राफ कापी में उनसे हस्ताक्षर कराता था।

उन बीते दिनों की याद आने पर आज हँसने को मन करता है। बीच-बीच में इच्छा होती है कि व्यतीत के 'मैं' को न्यायालय के कठघरे में खड़ाकर न्याय करूँ। मैं पत्रकार हूँ, रिपोर्टर हूँ। लिखना मेरा काम है। नेतागण भाषण देंगे, मैं उसकी रिपोर्ट तैयार करूँगा—यही मेरा काम है, न कि भाषण देना। लेकिन अगर संभव होता तो मॉनुमेन्ट के तले लाखों लोगों के सामने हाथ में माइक्रोफोन थामे इन नेताओं की कीर्ति-कहानी कहता, इन लोगों के स्वार्थ के लंबे इतिहास और व्यक्तिगत जीवन पर प्रकाश डालता····

आज मैं जानता हूँ, रेडियो के फरमाइशी कार्यक्रम में जिस तरह एक ही गीत को बार-बार घुमा-फिराकर बजाया जाता है, हमारे श्रद्धेय महान् नेतागण भी उसी तरह अलग-अलग सभाओं में कुछेक भाषणों का रेकार्ड बजाकर सुनाते हैं। आम लोग एक ही नेता के तमाम भाषण सुनते नहीं या सुनने की आवश्यकता नहीं पड़ती, लेकिन रिपोर्टरों को एक ही नेता के हज़ारों भाषण सुनने का दुर्भाग्य प्राप्त होता है और उनका भाषण सुनते-सुनते हमारे कान रेकार्ड बन जाते हैं। स्थान, काल और वक्ता का नाम मालूम होते ही मोटे तौर पर भाषण दुहरा दे सकता हूँ।····कलकत्ते के बाहर विप्लव का भाषण देते ही कहने लगते थे दोस्तो आज कलकत्ते की जिन्दगी की नस-नस में अन्याय, अनाचार और व्यभिचार का बोलबाला है। आदमी के जीवन-मरण का वहाँ हर रात खेल चल रहा है और उस मधु के छत्ते से एक श्रेणी की मधुमक्खियाँ लाखों रुपया लूट-खसोट कर ले जा रही हैं। राजनीतिक जगत् की दूषित आबोहवा में पलकर इस श्रेणी के लोग दीर्घायु प्राप्त कर रहे हैं। और इनके नेतृत्व के राजनीतिक षड्यंत्र के कारण बंगाल के गौरव-नेतृत-

नाबूद हो रहे हैं। बंगाल की धरती पर बंगाली आज भिखमंगे हो गये हैं।""आज नेतृत्व में बदलाव लाने का दिन आ गया है और मैं इस शुभ क्षण में कलकत्ता को आशीर्वाद की नहीं, बंगाल के गाँवों को आशीर्वाद की कामना करता हूँ।

हावड़ा के मैदान में मजदूरों की सभा में विप्लवदा कहते हैं।"" दोस्तो, नवजाग्रत भारत की आप चिरजाग्रत सन्तान हैं—जो लोग मुट्ठी-भर अनाज के लिए खून-पसीना एक करते हैं, जिनके बाल-बच्चे-पत्नी को भर पेट खाना नसीब नहीं होता, वे अपने हृदय में दर्द लेकर धनियों की खुराक जुटा रहे हैं। दुनिया के इतिहास ने आज नयी करवट ली है, विधाता प्रसन्नमुख आज आपके स्वागत की तैयारी कर रहे हैं। आज इस पवित्रक्षण में आप लोगों को युग-युग की संचित पुरुषार्थहीनता को तिलांजलि देकर माँ के नाम का स्मरण कर खड़ा होना होगा और मुल्क का नेतृत्व नये युग के हाथ में सौंपना पड़ेगा।

हाजरा पार्क।""दोस्तो, बंगाल ही नहीं, तमाम हिन्दुस्तान के इतिहास को इस कलकत्ता महानगरी के मध्यवित्त बुद्धिजीवियों का जो रहा है, उसकी मिसाल दुनिया के इतिहास में नहीं मिलेगी। पुरखों ने ही साम्राज्यवाद के खिलाफ़ पहले-पहल आवाज़ बुलन्द की थी। कलकत्ते की ज़मीन का चप्पा-चप्पा आज़ादी की लड़ाई का साक्षी है। हिन्दुस्तान का पुनर्जागरण भी इसी शहर में आया था।— आज एक बार पुनः आप लोगों को जागना होगा, सम्मिलित स्वर में कहना होगा, तुम लोगों के दिन बीत चुके। राष्ट्र के कर्णधार के रूप में आप ही लोगों को अपने हाथ में नेतृत्व लेना होगा। नये दिन के नये संग्राम में मैं आपलोगों का साथी रहूँगा।

मैंने हज़ारों नेताओं के लाखों भाषण सुने हैं। आज तक किसी नेता को यह कहते नहीं सुना कि वे व्यक्तिगत तौर पर किसी वस्तु को प्रत्याशा रखते हैं। सभी निःस्वार्थ भाव से देश-सेवा की प्रतियोगिता में जी-जान से पिले हैं। आम लोगों को सुबह से शाम तक दो मुट्ठी अनाज

के लिए जानवर की तरह खटना पड़ता है लेकिन लीडर लोग खीर-पूरी खाकर मौज करते हैं। डलहौजी स्क्वायर में दस से पांच तक किरानीगीरी करने के अलावा सुबह-शाम पार्ट-टाइम काम करने पर भी हमें महीने के अन्त में ट्राम-बस के कंडक्टर से बचकर चलना पड़ता है। परन्तु विप्लवदा, लंबोदर चक्रवर्ती, गदाधर कुठारिया इत्यादि नेतागण नौकरी न करने के बावजूद मोटर गाड़ी पर चढ़ते हैं। कालीघाट, भवानीपुर या श्याम बाजार-बाग बाजार से दक्षिणेश्वर या बेलुड़ मठ जाने लायक़ हमारी आर्थिक स्थिति नहीं है, परन्तु नेतागण एयर इंडिया के महाराजा की तरह पर्शियन क़ालीन पर पैर रखकर तमाम दुनिया की सैर करते हैं। लेबर-लीडर हिटलर घोष के फ़्लैट में आपको देखने को मिलेगा कि वे हर रोज कम-से-कम आठ-दस मेहमानों को ले आते हैं।

'''बाप का दिया हुआ नाम हितेन घोष। मैट्रिक पास कर कॉलेज में दाखिल हुए थे, लेकिन प्रोफ़ेसरों को छह महीने से ज्यादा परेशान करने का मौका नहीं मिला। अगस्त आन्दोलन के समय अनुमंडलीय राजनीतिक संस्था ने आवाहन किया और उसकी अपील के इश्तिहार के प्रचार के अपराध में हितेन घोष को डिस्ट्रिक्ट जेल के लंगर में तीन महीने तक खिचड़ी खानी पड़ी। जेल से लौटने के बाद हितेन घोष को कॉलिज एक जेलखाने जैसा प्रतीत हुआ। इसके अलावा नेता बनकर भाषण देने के बजाय प्रोफ़ेसरों का भाषण सुनना उन्हें वाहियात जैसा लगा। खादी का कुरता-पाजामा पहन तमाम चाय की दुकानों में अपने देश-प्रेम की कहानी का बखान करने में ही हितेन घोष का एक साल से अधिक समय बीत गया। उसके बाद अचानक एक नवगठित रिक्शा मजदूर यूनियन के अध्यक्ष की भूमिका में हितेन घोष का आविर्भाव हुआ और दसेक साल से कम अरसे में ही वे बंगाल के सबसे बड़े लेबर-लीडर हो गये। दस वर्षों के इस जन-संग्राम के दौरान हितेन घोष का नाम अनजाने को हिटलर घोष हो गया। आज बंगाल के **मेहनत**

मालूम है कि हिटलर घोष अगर उनकी यूनियन के अध्यक्ष हो जायें तो कंपनी को बाध्य होकर एक महीने के बदले तीन महीने का बोनस देना होगा, एक भी सामयिक मजदूर के बदन पर हाथ लगाने से मैनेजर साहब को क्षमा की भीख माँगनी होगी।

मुझसे हिटलर घोष की मुलाकात मटिया बुर्ज की एक मजदूर सभा में हुई थी। ट्राम-बस से जाने और गलियों में चक्कर काटते रहने के कारण सभा-स्थल में पहुँचने में ज़रा विलंब हो गया था। जब पहुँचा उस समय दो तख्ते से बने मंच पर खड़े होकर हिटलर घोष भाषण दे रहे थे। रूखा दोहरा बदन, आँखें लाल, आवाज़ तेज़-तर्रार। प्रथम दर्शन में श्रमिक नेता अच्छे ही लगे थे। बैशाख की आँधी की तरह हिटलर घोष घण्टे में एक सौ मील की रफ़्तार से भाषण दे रहे थे। "जिन्होंने तुम लोगों का सब कुछ लूट कर महल खड़ा किया है, शाम के अँधेरे के बाद जो लाखों रुपये फूंकते हैं, उनसे कोई समझौता नहीं हो सकता। तुम्हें लड़ाई लड़कर अपना हक़ हासिल करना है। तक़रीबन हर मिनट पर हिटलर को ताली मिल रही थी। मीटिंग के बाद हज़ारों मजदूर हिटलर घोष को घेर कर खड़े हो गये। यूनियन के सेक्रेटरी रतनलाल अपने सहकर्मियों की मदद से किसी प्रकार उन्हें यूनियन के दफ़्तर में ले आये।

बाद में श्रमिक नेता के प्रति मुझमें जो विस्मय भाव था, वह दूर हो गया। मजदूर-सभा, प्रेस-कांफ्रेन्स, लॉक आउट, अनशन, हड़ताल, मैनेजर का घेराव, विक्षोभ-प्रदर्शन, धारा १४४ का उल्लंघन, विधान सभा अभियान आदि-आदि की कार्यवाही का संवाद लेते-लेते हिटलर घोष से जान-पहचान का क्रम घनिष्ठता के रूप में बदल गया। बीच-बीच में राजनीति करने के खयाल से मैं हिटलर दा के डेरे पर जाने लगा। कभी-कभी लंच या डिनर लेने डाइनिंग टेबल पर बैठ जाता था। उनकी बीवी और दो बच्चों को देखने पर लगता कि सुख और प्राचुर्य के बीच ही ये लोग जीवन जी रहे हैं। बाहरी तौर पर सुनने को

मिलता कि हिटलर दा के छोटे भाई गृहस्थी की पूरी जिम्मेदारी सँभाले हुए हैं, लेकिन लंबे अरसे की जान-पहचान और हिटलर दा की यूनियन के प्रतिपक्ष के संसर्ग में आने पर सहृदय श्रमिक नेता के श्रमिक-प्रेम की कहानी सुनकर स्तंभित हो जाना पड़ा था।

आसनसोल, रानीगंज, झरिया से बजबज तक फैले कई औद्योगिक अंचलों के अध्यक्ष हैं हिटलर घोष। हमारे देश के दूसरे-दूसरे मजदूर नेताओं की तरह हिटलर घोष भी श्रमिक-प्रेम के कारण अवैतनिक यूनियन अध्यक्ष के रूप में मजदूर-आन्दोलन करते हैं। इसलिए, थोड़ा-बहुत पाथेय और अन्यान्य खर्च यूनियनों से ले लेते हैं। हिटलर दा हर यूनियन से माहवारी भत्ता लेते हैं और इसी आय से हिटलर घोष के परिवार की परवरिश का हर खर्च पूरा होता है।

भारत की एक अद्वितीय औद्योगिक संस्था की एक स्टील मिल में बहुत दिनों से श्रमिक विरोध चल रहा था। लिहाजा स्टील मिल का काम-धंधा एक तरह से ठप्प पड़ता जा रहा था। खिदिरपुर डॉक पर खाली जहाज स्टील मिल का माल लादने के लिए मुँह बाये खड़ा था। जापानी इंपोर्टरों का तार आया, लोकसभा में प्रश्न पूछा गया, मंत्रियों ने मामला सुलझाने की कोशिश की, मगर कुछ भी नहीं हुआ। भारत सरकार के उद्योग मंत्री ने पार्लियामेन्ट में घोषणा की, स्टील मिल के श्रमिक-विरोध के कारण देश को मोटे तौर पर पिछले दो सप्ताह के दरमियान साढ़े तीन करोड़ का घाटा उठाना पड़ा है। 'दैनिक संवाद' के लिए अब चुप्पी ओढ़े रहना संभव नहीं हो सका। तारादा ने मुझे भेजा।

अण्डाल स्टेशन पर उतरते ही सुना, आसपास ही इस्पात सेनगुप्त की मीटिंग चल रही है। मीटिंग में जाकर इस्पात गुप्त का भाषण सुना तो आश्चर्य चकित रह गया। हिटलर दा से बहुत बार मिल चुका हूँ मगर कभी पता नहीं चला कि उनके पास गाड़ी और मकान भी है। दूसरे-दूसरे माध्यम से भी वे हजारों रुपया कमाते हैं.

दूसरे दिन हिटलर दा भी यण्डाल आये थे। मैंने उनसे इस्पात सेनगुप्त के भाषण के सन्दर्भ में पूछताछ की मगर कोई स्पष्ट उत्तर नहीं मिला। इतना ही कहा, "उन लोगों की गन्दगी का क्या जवाब दूं?"

इसके वाद हिटलर दा से मेरा संपर्क दिन-दिन क्षीण होता गया। पार्लियामेन्ट के चुनाव में हिटलर दा को हार होने के वाद दुख प्रकट करते हुए मैंने उन्हें एक पोस्टकार्ड भेजा था। इसके अलावा पत्र लिखने का दूसरा समय निकाल नहीं सका।

देश में चीज़ों की क़ीमतें दिन-दिन वढ़ रही हैं, कलकत्ते की सड़कों पर भिखमंगों की संख्या में अभिवृद्धि होने की रिपोर्ट अखवारों में प्रकाशित हुई; जगह-जगह मीटिंग, जुलूस, विक्षोभ-प्रदर्शन का सिलसिला चालू हो गया। छोटे-छोटे राजनीतिक दल और नेता इस मौक़े से लाभ उठाकर अपनी लोकप्रियता वढ़ाने के काम में जुट गये। सुना है, वड़ा वाज़ार, ब्रेबोर्न रोड, कैनिंग स्ट्रीट के कुछ व्यवसायियों ने विप्लवदा के सामने घुटने टेक दिये और उनसे निवेदन किया।

कुछ दिन वाद ही कलकत्ते के तमाम समाचार-पत्रों के प्रथम पृष्ठ पर बंगाल के वारह नेताओं का एक सम्मिलित वक्तव्य प्रकाशित हुआ जिसमें पाकिस्तान के खिलाफ़ आर्थिक अवरोध की माँग की गयी। डॉक्टर विप्लव चैटर्जी को मिलाकर कुल वारह नेताओं ने जो वक्तव्य दिया उसमें तीक्ष्ण शव्दों में भारत सरकार की पाकिस्तान नीति की कठोर आलोचना और पाकिस्तान सरकार की सीमान्त नीति की निन्दा की गयी थी। लंवी लड़ाई की तैयारी के साथ विप्लवदा के सभापतित्व में खंडित बंगाल के राजनीतिक दलों की एक मिली-जुली कमेटी संघटित की गयी। एक विशाल हॉल में मिली-जुली कमेटी की ओर से प्रेस-कॉन्फ्रेन्स बुलाई गयी। कुछ दिनों के दरमियान ही यह हॉल वहुत लोगों के पद-स्पर्श से विख्यात हो गया। कक्ष में नया फर्नीचर आया, टेलीफ़ोन लगाया गया; टाइपराइटर और डुप्लिकेटर मशीनों की वज़ह

से कक्ष का माहौल व्यस्तता से परिपूर्ण हो उठा ।

यक़ीन कीजिये, अगले तीन-चार महीने तक कलकत्ते के रिपोर्टरों को साँस लेने की भी फ़ुर्सत नहीं मिली । प्रेस-कॉन्फ्रेंस, ढाई सौ छोटी-बड़ी जन-सभाएँ, साढ़े चार सौ वक्तव्यों के प्रचार, इक्कीस विधानसभा अभियान और तीस दिन तक पाक डेपुटी हाइकमिश्नर के सामने विक्षोभ-प्रदर्शन कर राजनीतिक दलों की इस सम्मिलित कमेटी ने एक नया इतिहास क़ायम कर दिया । नये आन्दोलन के बहाव में पहले का मूल्यवृद्धि विरोधी आन्दोलन कहाँ बह गया, कौन जाने !

पहले सोचता था, श्रद्धा-ज्ञापन के लिए ही नेताओं का स्वागत किया जाता है, किसी महान् कार्य के संपादन के लिए ही उन्हें रुपये की थैली दी जाती है, परन्तु आज मुझे इन बातों पर विश्वास नहीं होता । अब मुझे अच्छी तरह मालूम हो गया है कि बगैर विशेष स्वार्थ के इस तरह की स्वागत-सभा का आयोजन नहीं किया जाता है । आज मैं जान गया हूँ कि विप्लवदा, लंबोदर चक्रवर्ती, महामानव सेनगुप्त तथा और कुछ नेताओं के पास एक विशाल प्रेस है; वहाँ से जनता के लिए एक प्रमुख पत्रिका का भी प्रकाशन होता है । राजनीतिक जगत् के तमाम अन्यायों के खिलाफ़ अगर कोई आवाज़ बुलन्द कर सकता है तो वह एक मात्र विप्लवदा हैं और है उनका साप्ताहिक । आज मैं जान गया हूँ कि धोखा धड़ी का यह धंधा महज़ एक मुखौटा है । कलकत्ते के लोगों की निगाह से अपने आपको छिपाकर ये लोग गहरी रात या प्रत्यूषकाल में अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिए भिक्षा-पात्र लेकर बाहर निकलते हैं, भतीजे की नौकरी, भांजे की प्रोन्नति और ठेके के लिए गिड़गिड़ाते हैं, मिन्नतें करते हैं । दिन की रोशनी से जगमगाते कलकत्ते में ये ही लोग मिनिस्टरों के बँगलों का घेराव करते हैं, सरकार के विरुद्ध समाचार पत्रों में वक्तव्य छपवाते हैं ।

पत्रकारों को बहुतेरे लोग सिनिक या विश्वनिन्दक कहते हैं । चूंकि हम सारी चीजों में गन्दगी ही गन्दगी देखते हैं इसलिए हमारी आलोचना

की जाती है। मगर हम निरुपाय हैं। लाखों-लोगों के संपर्क में आने के बावजूद अगर वैसा एक भी आदमी न मिले जिसे सही मानों में आदमी कहा जाये और अधिसंख्य नेताओं के चरित्र में अनैतिकता की छाप हो, तो ऐसी हालत में यदि पत्रकार सिनिक हो जाये तो इसमें उसका दोष ही क्या है! ऐसे लोगों के संपर्क में आते ही मैं एलर्जी का शिकार हो जाता हूँ।

....विद्यार्थी-जीवन में मेरे एक सहपाठी के बड़े भाई को काला बाज़ारी करने के अपराध में शुरू में लाल बाज़ार की हवालात और बाद में अलीपुर कारागार में कुछ दिनों तक बन्द रहना पड़ा। दसेक साल बाद बड़े भाई का अविर्भाव निर्वाचन-रणक्षेत्र में हुआ। सेन्ट्रल कलकत्ते का जीवन-केन्द्र बड़े भाई का चुनाव-दफ़्तर बना। युवक-युवतियों की एक जमात को उन्होंने वोटर बनाने के काम में लगा दिया। पोस्टर, फेस्टून, हैंड बिल के कारण लाखों लोगों के बीच बड़े भाई का नाम फैल गया।....समाज-सेवा में आप हमेशा सबसे आगे रहे हैं। गरीब छात्रों की पढ़ाई-लिखाई और बीमारों की सेवा के लिए आप मुक्त हस्त से दान करते हैं।

बड़े भाई के चुनाव का जिस व्यक्ति ने निर्देशन किया, किसी ज़माने में वे सीमेन्ट के नाम पर गंगा की मिट्टी बेचकर क़ानून-अदालत की क़लम से सुर्खियों में विख्यात हो चुके थे। ऐसे सधे उस्ताद की मदद से बड़े भाई किसी तरह निर्वाचन-वैतरणी पार कर गये। कुछ वर्षों के बाद लोग-बड़े भाई का पिछला इतिहास भूल गये। अब बड़े भाई का भाषण नियमित तौर पर अखबारों में छपता है। बड़े भाई अखिल भारतीय अनैतिकता विरोधी संस्था के अध्यक्ष भी हो गये हैं। दूसरे-दूसरे रिपोर्टरों के साथ मैं भी बड़े भाई के भाषण की रिपोर्ट लिखने लगा।

विधाता, इस प्रकार के विधाता का भयंकर परिहास रिपोर्टरों के खाते में यथेष्ट परिमाण में लिखा हुआ है। दुःख इसी बात का है कि नासमझ जनसाधारण के बीच जिनकी वाणी का हम प्रति दिन प्रचार

करते हैं, उन्हें हम प्रेम की दृष्टि से नहीं देखते और न ही उनके प्रति हममें श्रद्धा-भाव ही है।

लेकिन एक दिन ऐसा आया जब राजनीतिकता से ऊबे [illegible] राजनीतिक नेताओं के जंगल में मैंने पक्षी का गीत सुना, श्रमिकों की [illegible] देखी।....डुआर्स चाय बगान के श्रमिकों का [illegible] [illegible] आग की तरह लहक उठा। अखबारों के पन्नों-पन्नों पर नक्सलबाड़ी, जलपाईगुड़ी की खबरें सुर्खियों में छपने लगीं। [illegible] दिन बाद ही मैं भी नार्थ बंगाल एक्सप्रेस में बैठकर उत्तर बंगाल के आंदोलन-क्षेत्र में उपस्थित हुआ। पाँच-सात दिन शटल कॉक की तरह जलपाईगुड़ी-सिलीगुड़ी, सिलीगुड़ी-दार्जिलिंग का चक्कर लगाते रहने के बाद नक्सलबाड़ी का विशेष आकर्षण यद्यपि समाप्त हो गया लेकिन तीन दिन बाद [illegible] [illegible] [illegible] विजयोत्सव देखने के लिए मुझे जलपाईगुड़ी में रुक जाना पड़ा। कई दिनों तक भाग-दौड़ करने के कारण थककर चूर हो गया था। इसलिए

हे सुन्दरी, उन्मथित यौवन मेरा
संन्यासी का व्रत विच्छिन्न कर दिया
पौरुष की वह अधीरता
उसके गौरव को स्वीकारता हूँ मैं—
कोई आचार-भीरु नारी नहीं हूँ मैं
शास्त्र वाक्य से बँधा हूँ।

मैं चादर लपेटे उठकर विस्तर पर बैठ गया। हाथ आगे बढ़ाकर कहा—

आओ सखी, दुःसाहसी प्रेम
वहन करे हमें
अज्ञात के पथ पर।

मैं इस बात की प्रतीक्षा कर रहा था कि मेरी चित्रांगदा मुझे बाँहें में भर लेगी और कहेगी—तब ऐसा ही हो····परन्तु उसके बदले जिसके कण्ठ स्वर से मेरी दिवानिद्रा टूट गयी और रवीन्द्रनाथ की चित्रांगदा का नृत्य-नाट्य अचानक थम गया वह था नेपाली चौकीदार वीर बहादुर उसकी पहली पुकार से लगा था, हो सकता है चित्रांगदा ही आयी हो. लेकिन दूसरी पुकार से होश लौट आया और समझ गया कि चित्रांगदा नहीं, केवल गदा है। वीर बहादुर के तकाजे पर स्नान-भोजन कर पुनः जेट विमान पर चढ़कर प्रेम के महाकाश में उड़ने लगा। लेकिन बहुत देर तक उड़ नहीं सका, थकावट के दबाव के कारण नींद में डूब गया।

बेला ढलने पर आँखें खुली। चाय पीकर सज-धज के साथ तिस्ता का किनारे टहलने लगा। इरिगेशन रेस्ट हाउस को पीछे छोड़ जब खासी अच्छी दूरी तय कर ली तो एकाएक दुलाल दा से मुलाकात हो गयी। जिस दुलाल दा को कलकत्ते के मैदान में भाषण करते देखने का अभ्यस्त रहा हूँ, उन्हें जलपाईगुड़ी में तिस्ता के किनारे एक युवती के साथ टहलते देखूँगा, इसकी मैंने उम्मीद नहीं की थी। मैंने आश्चर्य के साथ पूछा, "क्या बात है दुलाल दा, आप यहाँ?"

लड़की को बाँहों में भरकर दुलाल दा ने चेहरे पर हँसी लाकर कहा, "मैं भाई, बीच-बीच में इन दीदी जी से मिलने यहाँ आता हूँ।"

अनजाने ही मेरे मुँह से निकल गया, "दीदी जी !"

"हाँ, मेरी नतिनी है।"

जहाँ तक स्मरण है, दुलाल दा को चिरकुमार के रूप में ही जानता था। इसलिए नतिनी को देखकर विस्मय हुआ। दुलाल दा साठ के खाने में क़दम रख चुके हैं, अनुभव की दिव्य दृष्टि से मेरे प्रश्न का मर्म समझने में उन्हें कोई कठिनाई नहीं हुई। इसलिए नतिनी से अच्छी तरह मुझे परिचित करा दिया।

"दीदी, यह बच्चू है, दैनिक संवाद का रिपोर्टर।" उसके बाद लड़की की ओर इशारा करते हुए मुझसे कहा, "यह मेरी नतिनी है, कल्याणी चौधरी।"

दुलाल दा को मैंने अपने आने का कारण बताया। अपने डेरे और जलपाईगुड़ी में ठहरने की अवधि की सूचना दी। सब कुछ सुनने के बाद दुलाल दा बोले, "मेरे लड़की-दामाद का मकान रहते तुम जलपाईगुड़ी रेस्ट हाउस में नेपाली चौकीदार के हाथ की रसोई खाओगे, यह नहीं हो सकता। एक तरह से जबरन् ही मुझे दामाद के घर ले गये।

दुलाल दा के दामाद का पेशा हालाँकि वकालत था लेकिन उनकी असली आय चाय बगान से होती थी। घर-द्वार में प्रचुरता की छाप नज़र आयी और भोजन में तो थी ही। दुलाल दा के दामाद और लड़की ने स्वागत-सत्कार कर मुझे कृतज्ञता के बंधन में बाँध लिया, बातचीत और तौर-तरीके से मुझ जैसे बड़बोले रिपोर्टर को भी चकित कर दिया। और कल्याणी? उसके अन्दर मुझे क्रान्तिकारी दुलाल दा की प्रतिमा दिखायी पड़ी थी। अप्रत्याशित तौर पर यह स्वागत-सत्कार पाकर मैं मुग्ध होकर कृतज्ञता के साथ कलकत्ता वापस चला आया।

अगले साल कल्याणी को मेडिकल कॉलेज में भर्ती कराने के समय इन लोगों से मेरी मुलाकात हुई थी। चाय बगान के मालिक का स्वागत-

करूँ, ऐसी मेरी सामर्थ्य न थी, इसलिए अपना दफ्तर दिखाने का आमंत्रण देकर चाय और वेजिटेबल चाप से उनका स्वागत किया था।

दुलाल दा किसी ज़माने में बंगाल के नामी क्रान्तिकारी थे। पंजाब और महाराष्ट्र के क्रान्तिकारियों के साथ उनका घनिष्ठ सम्बन्ध था, यह बात मैं जानता था। बीते दिनों के दुलाल दा को मैं श्रद्धा की दृष्टि से देखता था लेकिन आये दिन गन्दे राजनीतिज्ञों को अपने इर्द-गिर्द देखकर इन्हें श्रद्धा के सिंहासन पर बिठाने में मुझे संकोच का अनुभव होता था।

कुछ दिन बाद हरिसाधन दा से दुलाल दा का व्यतीत और वर्तमान सुनकर मैं मुग्ध हो गया। इस चरित्रवान्, शक्तिशाली-निष्ठावान् देश-सेवक से परिचित होने के आनन्द से आत्म-तृप्ति का अनुभव हुआ। लेकिन व्यतीत में उनका सही-सही परिचय न पाकर मैंने कितना बड़ा अन्याय किया है, उस बात को सोचकर आज स्वयं को अपराधी महसूस करने लगा।

····पुलिस सुपरिन्टेन्डेन्ट राय बहादुर प्रसन्न मुखर्जी की इकलौती सन्तान दुलाल दा बचपन से ही अपने विनम्र स्वभाव के कारण लोगों के प्रिय पात्र थे। इसके अलावा चूँकि बचपन में ही उनकी माँ चल बसी थीं इसलिए बहुतों के हृदय में दुलाल दा की बातचीत, तौर-तरीका, हाव-भाव और चाल-चलन में उनके पिता के धन, यश, प्रभाव या पद-मर्यादा की कोई छाप न थी।

दुलाल दा जिन दिनों स्कूल में पढ़ते थे, देश की राजनीति का डमरू बजने लगा था। कलकत्ते में कॉलेज में पढ़ने के समय दुलाल दा को बहुतेरे आन्दोलनों को देखने का मौक़ा मिला, लेकिन छात्र-जीवन में अध्ययन त्याग करने की अपील उन पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकी। अखबारों

के पन्नों में पुलिस और संत्रासवादियों की लड़ाई की खबर पढ़ते अवश्य मगर याद नहीं रखते थे।

कलकत्ते में बी० एस-सी० की परीक्षा देकर दुलाल दा पिता के पास आये थे। पढ़ने-लिखने और डेपुटी कमिश्नर के घर पर बैडमिण्टन खेलने में ही दिन बिता रहे थे। बीच-बीच में पुराने दोस्त-मित्रों के साथ अपने ड्राइंगरूम में मजलिस भी जमाते थे। एकाध महीना इसी तरह गुजर गया। उसके बाद एक दिन तीसरे पहर बैडमिण्टन खेलने के लिए जाने के समय गोली की आवाज सुनकर दुलाल दा ठिठक कर खड़े हो गये। साइकिल से आते समय दूर से ही चौराहे के मोड़ पर अनेक पुलिसवालों को देखा था, मगर बात ठीक से समझ में नहीं आयी थी। चौराहे के मोड़ पर पहुँचते ही समझ गये कि पुलिस हृषिकेश हलवाई की दुकान के अन्दर घुसी है। साइकिल रोककर गौर से चारों तरफ देखें कि इसके पहले ही अन्दर से दुबारा गोली की आवाज आयी। कुछ ही मिनटों के दरमियान दुलाल दा को दिखायी पड़ा कि एंग्लो इंडियन डी० एस० पी० जॉन्स्टन और शशधर दरोगा एक आदमी को खींचते हुए हृषिकेश की दुकान से बाहर ला रहे हैं। इसी बीच अंदर से वंदेमातरम् ध्वनि आते ही दुलाल दा समझ गये कि मामला क्या है। मगर तत्काल ही देखा, शशधर दरोगा के इशारे पर पुलिस का एक जत्था खाने-पीने के सामान को पैरों से रौंदता हुआ अन्दर जा रहा है। दूसरे ही क्षण दुलाल दा की आँखें जलने लगीं। जॉन्स्टन और शशधर दरोगा ने जिसको खींचते हुए लाकर सड़क पर पटक दिया था, वह दुलाल दा के ही बचपन का मित्र कालिदास सरकार था। दुलाल दा ने देखा, कालिदास के हाथ में कागज का एक पुलिन्दा है और उस पुलिन्दे को छीनने के लिए जॉन्स्टन उसके बालों को मुट्ठी से पकड़े है और उसके सीने पर बूट से प्रहार कर रहा है। शशधर दरोगा ने चाहा कि वह कालिदास के हाथ से कागज का पुलिन्दा ले ले, मगर जब उसे सफलता नहीं मिली तो उसने मोटे बेंत की छड़ी से उसके माथे पर प्रहार किया। हृषिकेश हलवाई यह दृश्य

बर्दाश्त नहीं कर सका और उसने एक लंबी करछी उठाकर शशध
दरोगा को दे मारी। जॉन्स्टन छलाँग लगाकर दुकान के ऊपर चढ़ गर
और हृषिकेश को पकड़ना चाहा पर वह सफल नहीं हो सका। हृषिके
छलाँग लगाकर नीचे उतर गया। दुलाल दा ने खड़े-खड़े देखा, जॉन्स्ट
ने ग़ुस्से के मारे गरम रसगुल्ले की चाशनी से भरी कढ़ाई को ठोक
मारकर नीचे गिरा दिया और तत्क्षण जल जाने की असह्य यातना
कालिदास और हृषिकेश बुरी तरह चिल्ला उठे।

अगल-बग़ल के मकानों के खिड़की-दरवाज़े बन्द थे, पुलिस के जव
के सिर पर जुनून सवार था, किसी का ध्यान इस बात पर नहीं गय
कि दुलाल दा ज़ोरों से साइकिल चलाता हुआ अपने क्वार्टर चला गय
था। चपरासी कांस्टेबुल समझें कि इसके पहले ही दुलाल दा ने पित
की मेज़ की दराज़ से रिवॉल्वर निकाल लिया और चौराहे के मोड़ क
तरफ़ दौड़ते हुए चले गये।

साइकिल का ब्रेक ले दुलाल दा जब चौराहे के मोड़ पर पहुँचे त
उसी समय शशधर दरोगा की पिस्तौल गरज उठी और कालिदास क
निष्प्राण शरीर आखिरी कराह के साथ ज़मीन पर लुढ़क पड़ा। दुलाल
दा का शरीर लम्हे-भर के लिए काँप उठा, मानो शशधर दरोगा की
गोली की चोट उसे ही लगी हो। लेकिन ऐसा लम्हे-भर के लिए ही
हुआ, बग़ैर देर किये दूसरे ही क्षण जेब से रिवॉल्वर बाहर निकाल
कर दुलाल दा ने ट्रिगर दबा दिया। ठीक कालिदास की तरह ही
आर्तनाद करते हुए शशधर दरोगा का प्राणहीन शरीर कालिदास की
बग़ल में लुढ़क पड़ा। बाद में जॉन्स्टन को निशाना बनाकर भी गोली
चलायी थी परन्तु हाथ ज़रा थरथरा गया था। बुलेट जॉन्स्टन के सीने
में लगने के बजाय उसके हाथ में लगा।

पुलिस सुपर के लड़के दुलाल की गोली से शशधर दरोगा की मौत
होने की ख़बर तमाम शहर में आग की तरह फैल गयी। राय बहादुर
दफ़्तर में बैठे थे कि उन्हें यह ख़बर मिली। कुछ देर तक वे ख़ामोश बैठे

ल से ही प्यार और स्नेह मिला था। दुलालदा की आँखें छलछला
ायी थीं किन्तु वे रोये नहीं। ज़्यादा बोल नहीं सके थे, इतना ही कहा
ा, "आप लोग इतना घबरा जाइएगा तो मेरे पिता जी और बुआ की
क्या हालत होगी ?" साथ ही साथ यह भी कहा था, "उन लोगों से
कह दीजिएगा कि मैं सकुशल हूँ।"

दूसरे दिन तमाम अखबारों में इस फ़ैसले का विस्तृत ब्यौरा प्रकाशित हुआ, मुल्क-भर में खलबली मच गयी। पुलिस अफ़सरों ने इत्मीनान की साँस ली। लेकिन एक दिन बाद ही शाम के समय कुछ ही मिनटों के अन्तराल में अदृश्य संत्रासवादियों की गोली से जॉनस्टन और नये पुलिस सुपर मारे गये। इस ओर जब यह हालत थी, कलकत्ते के एक बैरिस्टर ने हाइकोर्ट में दुलालदा के फ़ैसले के खिलाफ़ अपील की। हाइकोर्ट ने फ़ैसले पर विचार करने के लिए अपील मंजूर कर ली, कई दिन बाद सुनवाई भी शुरू हुई। जीवन-मरण के क्रीड़ागार की इस रंगशाला में अनेक विस्मयकारी घटनाएँ घटती हैं, हाइकोर्ट के कठघरे में अकस्मात् बुआ की उपस्थिति उसी की एक नज़ीर है।

बुआ ने कहा था, "मेरे ही आदेश और पैसे पर यह सब किया गया है।....दुलाल, शीतल, पंकज, वरुण, चित्तरंजन और प्रियतोष निर-
पराध हैं। अगर किसी को सजा मिलनी है तो मुझे ही मिलनी
चाहिए।"

सरकारी पक्ष के कुशल वकील के जिरह के उत्तर में पचहत्तर सा
की विधवा बुआ ने माननीय न्यायाधीश को संत्रासवादियों के का
कलाप का सही-सही विवरण दिया था। बुआ की बात पर किसी
विश्वास नहीं हो रहा था मगर उसकी सच्चाई पर सन्देह करने की
कोई गुंजाइश न थी।

जस्टिस रॉबटसन ने अन्ततः सेशन के फ़ैसले को अमान्य कर फ
का आदेश रद्द कर दिया था। बुआ की तकरीर को स्वीकार
किया था मगर उनकी गवाही के बहुत सारे विषयों में सन्देहाव

है—इस तरह की राय जाहिर की थी। अन्त में दुलालदा और गोतल बसाक को आजीवन कारावास की सजा दी थी और बाकी लोगों को रिहा कर दिया था।

इतना कहकर हरिसाधन दा चुप हो गये और एक-एक कर दो प्याली चाय पी। उसके बाद फिर कहना शुरू किया, पाँचवें साल के दौरान ही दुलालदा के पिता और बुआ चल बसे। इनकी मृत्यु और कारागार में संत्रासवादियों की संगति में रहने के कारण दुलालदा ने अपने जीवन से खिलवाड़ करना शुरू कर दिया। जेल में रहते-रहते ही तरह-तरह के कला-कौशल से पंजाब और महाराष्ट्र के क्रान्तिकारियों से संपर्क स्थापित कर लिया।… उसके बाद एक दिन आधी रात की चुप्पी को तोड़कर प्रेसिडेन्सी सेंट्रल जेल की पगली घण्टी बज उठी। एक ही साथ सात-सात टेररिस्टों के भाग जाने से जेलर सिर पर हाथ रखकर बैठ गये।

इसके बाद दुलालदा और उनके सहकर्मियों ने कई महीने तक तमाम हिन्दुस्तान में सनसनी फैला दी। काफी कोशिश करने पर भी पुलिस कुछ कर नहीं सकी। अन्ततः स्कॉटलैण्ड से भेजे हुए जासूसों का एक जत्था मंगाया गया। ढाका के फुटबॉल मैदान में मैजिस्ट्रेट पर गोली चलाने के कारण ग्यारह वर्ष का बालक हरिदास स्कॉटलैण्ड यार्ड के एक जासूस की गोली से मारा गया। उसी रात रमना के पास संत्रासवादियों के द्वारा वह जासूस मारा गया। दूसरे ही जहाज से स्कॉटलैण्ड यार्ड के बाक़ी जासूस हिन्दुस्तान की धरती त्यागकर विलायत रवाना हो गये। कई दिन बाद नागपुर में दुलालदा और महाराष्ट्र के कुछ क्रान्तिकारियों ने स्वेच्छा से अपने आपको पुलिस के हाथों सौंप दिया।

हरिसाधनदा बोले, "इस बार फंसने में दुलाल सज़ा दी गयी मगर फाँसी पड़ने के पहले ही वे जेल आये। इसी तरह बीस साल तक पुलिस, जेलख़ाना अ

खिलवाड़ करते रहने के बाद देश आजाद हो गया। गले में माला पहना कर हम लोग दुलालदा को जेल से ले आये।

"यह तो दुलालदा के जीवन का मात्र एक अध्याय है। राय बहादुर के प्रोविडेन्ट फण्ड, बैंक बैलेन्स, बुआ के गहने आदि मिलाकर दुलालदा कई लाख रुपये के मालिक बन बैठे, मगर अपने लिए एक भी पैसा खर्च नहीं किया।"····मुझे चौंकाते हुए हरिसाधनदा बोले, "कल्याणी दुलाल-दा की नतिनी नहीं, शशधर दरोगा की नतिनी है। शशधर दरोगा की औरत और इकलौती बेटी को शशधरदा ने ही जिलाये रखा। शशधर दरोगा की बेटी का ब्याह दुलालदा ने ही कराया था और आज उन लोगों की तमाम ज़िम्मेदारी इसी व्यक्ति पर है। एक नहीं, ऐसे बहुत सारे टेररिस्ट और पुलिस अफ़सरों के परिवार की दुलालदा आज भी परवरिश चला रहे हैं। दुलालदा को अपने जीवन में शादी करने का समय या सुयोग प्राप्त नहीं हुआ। उनके कोई लड़का या लड़की नहीं है मगर नाती-नतिनी की उन्हें कोई कमी नहीं है।"

हरिदा ने जरा तेज़ ही आवाज़ में कहा, "कलकत्ते में भी दुलालदा एक डॉक्टर नाती के पास रहते हैं।" इसके बाद प्रधान संपादक ने मुझे उपदेश दिया, "रिपोर्टर बनकर सिर्फ़ रिपोर्ट लिखने में ही ज़िन्दगी बर्बाद नहीं करो। जो तुम्हारे निकट हैं, उन्हें पहचानना सीखो।"

कंचन बेयरा ने कमरे के अन्दर प्रवेश कर हरिदा से पूछा, "प्रेस ने बताया कि आपको एक और छोटा-सा एडिटोरियल देना है। दीजिएगा ?"

"जाओ, जाकर कह दो, आज कुछ नहीं देना है।"

दफ़्तर से बाहर आ पार्क सर्कस के मोड़ पर हरिदा और मैं एक घोड़ेगाड़ी पर सवार हो रात के आखिरी पहर घर लौटे और मैंने मन ही मन क्रान्तिकारी दुलालदा को प्रणाम किया।

कलम ले चण्डीपाठक से जूते को सिलाई तक का काम करते-करते हाँफने लगता था, मगर कोई उपाय नहीं था। तमाम विषयों पर लिखने के अलावा रिपोर्टरों के लिए कोई दूसरा चारा नहीं है। मैं भी लिखता था। माली पांचघरा या घुघड़ी की लेबर-मीटिंग में जाने की ख्वाहिश नहीं होती तो कहता, "तारादा, पी० डब्लू० डी० की चोरी की खबर के लिए कुछेक एपॉयन्टमेन्ट तय हैं, आज उसे 'मिस' करने से कठिनाई का सामना करना होगा। तारादा आपत्ति नही करते। हो सकता हो, सोचते हों कि सही है, या फिर सोचते हों कि झूठ है, मगर पता लगाने का कोई उपाय न था। इसके अलावा इन चलाकियों के उस्ताद स्वयं तारादा थे। इसलिए गंगाजल से गंगा की पूजा करने में किसी दिन कोई रुकावट नहीं आयी। बाद में कभी वे पूछते तो कहता, "कुछ मत कहिये, ग़लत खबर के चलते कई दिन बर्बाद हो गये।"

चाहे जो हो, लेकिन हमें राजनीतिक विवाद, उद्योग-धंधे में कच्चे माल का अभाव, साहित्य में यौन-भावना, भारतीय कला में पश्चिमी प्रभाव, डॉक्टरों में अनैतिकता, शिक्षा-व्यवस्था की क्रमिक अवनति, शासन-व्यवस्था में राजनीतिज्ञों के हस्तक्षेप, समाज तांत्रिक अर्थनीति के संकट, विशुद्ध जल की आपूर्ति में निगम की उदासीनता, पुल-निर्माण में इंजीनियरों की बेपरवाही, नये ट्रैफिक क़ानून के कारण राहगीरों की मुसीबत, लैंसडाउन मार्केट में मछली का अभाव, बेनापोल में पाकिस्तानी की गिरफ्तारी, पुलिस के द्वारा सांड़ मारने से बड़ा बाज़ार में हड़ताल, स्वाधीनता-संग्राम के ग़लत इतिहास का प्रकाशन, वाइसचांसलर का दीक्षान्त भाषण इत्यादि-इत्यादि विषयों पर लिखना पड़ता है।

सीधे शब्दों में कहा जाये तो रिपोर्टरों की क़लम बहुत-कुछ दर्जो की कैंची जैसी हुआ करती है, ऑर्डर और डिज़ाइन के अनुसार ही चलेगी।

जो लोग स्कूप न्यूज का इन्तजाम करने में उस्ताद होते हैं, वे कुलीन रिपोर्टर हैं। जो पच्चीस वैशाख, बाईस श्रावण, नववर्ष या विजया-दशमी की रिपोर्ट लिखते हैं वे पतित कुलीन हैं। बंगाल का दो भागों

खिलवाड़ करते रहने के बाद देश आजाद हो गया। गले में माला पहना कर हम लोग दुलालदा को जेल से ले आये।

"यह तो दुलालदा के जीवन का मात्र एक अध्याय है। राय बहादुर के प्रोविडेन्ट फण्ड, बैंक बैलेन्स, बुआ के गहने आदि मिलाकर दुलालदा कई लाख रुपये के मालिक बन बैठे, मगर अपने लिए एक भी पैसा खर्च नहीं किया।"""मुझे चौंकाते हुए हरिसाधनदा बोले, "कल्याणी दुलाल-दा की नतिनी नहीं, शशधर दरोगा की नतिनी है। शशधर दरोगा की औरत और इकलौती बेटी को शशधरदा ने ही जिलाये रखा। शशधर दरोगा की बेटी का व्याह दुलालदा ने ही कराया था और आज उन लोगों की तमाम ज़िम्मेदारी इसी व्यक्ति पर है। एक नहीं, ऐसे बहुत सारे टेररिस्ट और पुलिस अफ़सरों के परिवार की दुलालदा आज भी परवरिश चला रहे हैं। दुलालदा को अपने जीवन में शादी करने का समय या सुयोग प्राप्त नहीं हुआ। उनके कोई लड़का या लड़की नहीं है मगर नाती-नतिनी की उन्हें कोई कमी नहीं है।"

हरिदा ने ज़रा तेज़ ही आवाज़ में कहा, "कलकत्ते में भी दुलालदा एक डॉक्टर नाती के पास रहते हैं।" इसके बाद प्रधान संपादक ने मुझे उपदेश दिया, "रिपोर्टर बनकर सिर्फ़ रिपोर्ट लिखने में ही ज़िन्दगी बर्बाद नहीं करो। जो तुम्हारे निकट हैं, उन्हें पहचानना सीखो।"

कंचन बेयरा ने कमरे के अन्दर प्रवेश कर हरिदा से पूछा, "प्रेस ने बताया कि आपको एक और छोटा-सा एडिटोरियल देना है। दीजिएगा ?"

"जाओ, जाकर कह दो, आज कुछ नहीं देना है।"

दफ़्तर से बाहर आ पार्क सर्कस के मोड़ पर हरिदा और मैं एक घोड़ेगाड़ी पर सवार हो रात के आखिरी पहर घर लौटे और मैंने मन ही मन क्रान्तिकारी दुलालदा को प्रणाम किया।

कलम ले चण्डीपाठक से जूते की सिलाई तक का काम करते-करते हाँफने लगता था, मगर कोई उपाय नहीं था। तमाम विषयों पर लिखने के अलावा रिपोर्टरों के लिए कोई दूसरा चारा नहीं है। मैं भी लिखता था। माली पांचघरा या घुघड़ी की लेवर-मीटिंग में जाने की ख्वाहिश नहीं होती तो कहता, "तारादा, पी० डब्लू० डी० की चोरी की खबर के लिए कुछेक एपॉयन्टमेन्ट तय हैं, आज उसे 'मिस' करने से कठिनाई का सामना करना होगा। तारादा आपत्ति नहीं करते। हो सकता हो, सोचते हों कि सही है, या फिर सोचते हों कि झूठ है, मगर पता लगाने का कोई उपाय न था। इसके अलावा इन चलाकियों के उस्ताद स्वयं तारादा थे। इसलिए गंगाजल से गंगा की पूजा करने में किसी दिन कोई रुकावट नहीं आयी। बाद में कभी वे पूछते तो कहता, "कुछ मत कहिये, ग़लत खबर के चलते कई दिन बर्बाद हो गये।"

चाहे जो हो, लेकिन हमें राजनीतिक विवाद, उद्योग-धंधे में कच्चे माल का अभाव, साहित्य में यौन-भावना, भारतीय कला में पश्चिमी प्रभाव, डॉक्टरों में अनैतिकता, शिक्षा-व्यवस्था की क्रमिक अवनति, शासन-व्यवस्था में राजनीतिज्ञों के हस्तक्षेप, समाज तांत्रिक अर्थनीति के संकट, विशुद्ध जल की आपूर्ति में निगम की उदासीनता, पुल-निर्माण में इंजीनियरों की बेपरवाही, नये ट्रैफिक कानून के कारण राहगीरों की मुसीबत, लैंसडाउन मार्केट में मछली का अभाव, बेनापोल में पाकिस्तानी की गिरफ्तारी, पुलिस के द्वारा साँड़ मारने से बड़ा बाज़ार में हड़ताल, स्वाधीनता-संग्राम के गलत इतिहास का प्रकाशन, वाइसचांसलर का दीक्षान्त भाषण इत्यादि-इत्यादि विषयों पर लिखना पड़ता है।

सीधे शब्दों में कहा जाये तो रिपोर्टरों की क़लम बहुत-कुछ दर्जी की कैंची जैसी हुआ करती है, ऑर्डर और डिज़ाइन के अनुसार ही चलेगी।

जो लोग स्कूप न्यूज का इन्तज़ाम करने में उस्ताद होते हैं, वे कुलीन रिपोर्टर हैं। जो पच्चीस बैशाख, बाईस श्रावण, नववर्ष या विजयादशमी की रिपोर्ट लिखते हैं वे पतित कुलीन हैं। बंगाल का दो भागों

में विभाजन होने के बाद लाखों आदमी के दुख-कष्ट को मुद्दा बनाकर अखबार के पन्नों में काफ़ी-कुछ छापा जाता है। ढाका, विक्रमपुर या बारिसाल के वज्रयोगिनी के लब्धप्रतिष्ठ जमींदार या नामी व्यवसायी का पुत्र कॉलेज स्ट्रीट के हॉकर्स कॉर्नर में छींट बेचते हैं, फरीदपुर के सतीश वकील की विधवा औरत डलहौजी स्क्वायर के दफ़्तरों में पेंसिल की फेरी करती है, मैमन सिंह का भूपेश अधिकारी एम० ए० पासकर २ ए बस में कन्डक्टर नियुक्त हुआ है, राजसाही के सान्याल निवास के लोग पच्चीस लाख रुपये की संपत्ति खोकर अन्ततः संबलहीन हालत में धुबिलिया कैंप में रह रहे हैं—इस तरह के संख्यातीत विषयों को मुद्दा बनाकर अखबारों में अक़सर लेख प्रकाशित होते रहते हैं। पतित रिपोर्टर ही इन मानवीय अधिकारों पर रिपोर्ट लिखते हैं। कोई विषय हाथ में नहीं है लेकिन विस्थापितों पर एक लेख लिखे बिना काम नहीं चल सकता तो ऐसी हालत में दफ्तर में ही बैठकर मानवीय अधिकार पर एक रिपोर्ट तैयार करना पड़ता है, पुरानी स्मृतियों को दुहराते ए।

""सवेरे शंखध्वनि से पक्षियों के गीत को गौण बनाकर गाँव-भर में शुभ संवाद की घोषणा की गयी कि जमींदार नगेन मुखर्जी के घर में सन्तान पैदा हुई है। गाँव-भर के लो. कचहरी के सामने पहुँचे कि इसके पूर्व ही पुरोहित ने चण्डी मंडप में गीता पढ़ना शुरू कर दिया। ब्राह्मण, कायस्थ, चण्डाल, शूद्र ने चुपचाप हाथ जोड़कर पुरोहित की कण्ठध्वनि सुनी—रसोहहमप्सु कौन्तेह प्रभास्मि शशि सूर्य्ययोः प्रणवः, सर्ववेदषु शब्दः जे पौरुषं नृषु। पूण्ये गंधः पृथिव्यन्च तेजश्चामि विभावसौ, जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चामि तपस्विषु।"""विवाह के अठारह वर्ष बाद नगेन मुखर्जी के घर में सन्तान पैदा होने से गाँव-भर के लोग आनन्द-मग्न हो गये। शालग्राम शिला को साक्षी बनाकर पुरोहित ने सबको सूचित किया, घर में लक्ष्मी का आगमन हुआ है। उन्होंने नामकरण

हित ने कहा, शास्त्र के अनुसार शतरूपा ही सृष्टि की प्रथम नारी है, जमीदार के घर में भी प्रथम कन्या का आगमन हुआ है।

स्यालदह स्टेशन के मुमूर्ष मनुष्य की भीड़ में शतरूपा आज अपना अतीत खो चुकी है, जमीदार नगेन मुखर्जी की एकमात्र संतान आज कृपा की भीख मांगती चलती है। रिफ्यूजी शतरूपा आज स्यालदह प्लेटफ़ार्म पर जीवन-मृत्यु के झूले पर झूल रही है।...विधाता के इस परिहास पर विश्वास करने का जी नहीं करता, लेकिन स्यालदह स्टेशन के रंगमंच पर आज कुछ भी अविश्वसनीय नहीं है। "

रिपोर्टर की हैसियत से मैं दोहरा लाभ उठाता था। बीच-बीच में कुलीन सहकर्मियों का अभाव हो जाता तो पेटी में पड़ा एकमात्र गेरुआ कुरता धारण कर महाजाति सदन चला जाता था। इन दो विपरीत धर्मी जगत के विवरणों के कारण दुर्लभ मनुष्यों को मैंने अपने निकट पाया, उन्हें जाना-पहचाना। बहुत सारे रहस्यों की जानकारी प्राप्त हुई, असंभव को संभव होते देखा।

अखबारों के दफ्तर में एक प्रकार के आदमी हर रोज आते हैं, जो अखबर के दफ्तरों के लोगों से हेल-मेल बढ़ाकर अपनी या अपने प्रतिष्ठान की खबर छपवा जाते हैं। दो-चार डॉक्टर, सरकारी कर्म-चारी, टेलीफ़ोन के इंस्पेक्टर, स्कूल-मास्टर या जूनियर लेक्चरर, नाच-दल के मैनेजर, संगीत विद्यालय के प्रिंसिपल, रेलवे के टिकट-कलक्टर इत्यादि विचित्र पेशे के दो-चार आदमी नियमित तौर पर अखबारों के दफ्तर में आते हैं। नियमित तौर पर आने के कारण रिपोर्टर, सब एडिटरों से उनकी मित्रता हो जाती है। [illegible] करते हुए रिपोर्टर, सब एडिटर उनकी जेब से सिगरेट निकाल कर पीते हैं और [illegible] मुग्ध होकर उनके अनुरोध पर अनावश्यक समाचार भी [illegible] देते हैं। [illegible] अपवाद नहीं था।

बहुत सारे लोगों की तरह अमियदा भी हमारे दफ्तर में आते थे। अड्डेबाजी करते, चाय पीते-पिलाते, पान-सिगरेट ऑफ़र करते थे। किसकी पूंछ पकड़कर 'दैनिक संवाद' कार्यालय में अमियदा का पहले-पहल आगमन हुआ था, यह मैं नहीं जानता। जानने की ज़रूरत या वक्त भी नहीं था। सिर्फ़ इतना ही जानता था कि अमियदा मुझसे पहले से ही 'दैनिक संवाद' कार्यालय में आते-जाते हैं। शुरू में मैं उन्हें डेपुटी चीफ़ रिपोर्टर समझता था। काफ़ी दिनों के बाद पता चला था कि वे रिपोर्टर नहीं, बल्कि नियमित तौर पर आनेवाले व्यक्ति हैं। लेकिन ऐसा होने से क्या आता-जाता है। चाहे कुछ करें या न करें, मगर अमियदा बड़प्पन ज़रूर दिखाते थे। बाहर का आदमी फालतू खबर छपवाने आता तो अमियदा कहते : अजी साहब, इस तरह की खबर छापने से तो अखबार में असली खबर छापने की जगह ही न रहेगी। टेलीफ़ोन आता तो अक़सर रिसीवर उठाकर अमियदा कहते : हेलो! रिपोर्टर हियर····

अक़सर हर शाम अमियदा को अपने बीच पाता, उनके साथ अड्डेबाजी करता, गपशप करता मगर कुछ वर्षों तक उनका वास्तविक परिचय जान नहीं सका। कुछ वर्षों की जान-पहचान के बाद पता चला कि अमियदा फेयरली प्लेस के रेलवे ऑफ़िस में काम करते हैं। चूंकि मेरी और अमियदा की उम्र के दरमियान बहुत बड़ा फ़ासला था इसलिए मैंने ज्यादा खबर जानने की कोशिश भी नहीं की। लेकिन मेरी नियति ऐसी है कि थाने के दरोगा की तरह मेरे सामने भी बहुत सारे लोग अपनी ज़िन्दगी की कहानी बता जाते हैं अपने हृदय का सिंहद्वार खोल देते हैं।

पूरबोदी के सामने खड़ा होकर मैं सोचता, अनगिन लोगों की जीवन-रागिनी की झंकार इनकी सुन्दर देह का बेल की तरह अपने

आप में लपेट कर बज उठती है। लेकिन यह क्या संभव है ? प्रति श्वास-निःश्वास पर मेरी छाती में अमियदा और पूरबीदी का जीवन-संगीत बज उठता था, रुलाई से मेरा मन भर जाता था। लेकिन क्यों? ये तो मेरे कोई नहीं हैं, फिर भी मेरे सीने में इनके प्राणों की आग क्यों जल रही है ? क्यों मुझे पीड़ा का अनुभव होता है ? अकेला होता हूँ तो क्यों मेरा मन दुख से भीग जाता है ? उत्तर नहीं मिला। तब हाँ, जानता हूँ, यही मेरी नियति है। जो मेरे निकट के आदमी हैं, उन्हें मैं पहचान नहीं सका। लेकिन जो दूर, बहुत दूर के थे, वे केवल निकट नहीं आये बल्कि मेरे प्राणों के आँगन में आसन बिछाकर बैठ गये। निःस्व होने के बावजूद मैं परिपूर्ण हो गया हूँ, रिक्त होने के बावजूद ऐश्वर्यवान हो गया हूँ। सोचता हूँ, जिनके कण्ठ का गीत सुन नहीं सका, उनके जीवन में मुझे गीत की लय की प्राप्ति हुई है। जिन्हें हँसते हुए देखा है, उनके क्रन्दन के शब्दहीन आघात से मेरी छाती की पसलियाँ काँप उठी हैं। मावस की रात में दीवाली के दीप-माला की जगमगाहट की तरह किसी-किसी आदमी के अन्तर-प्रदीप के प्रकाश से मेरा अँधेरा हृदय भी प्रकाश से परिपूर्ण होकर जगमगा उठा है। प्रकाशदा, लावण्य, अलका, मातृस्वरूपा पारुलबाला, हरिदास, डॉक्टर सामन्त तथा और भी बहुत से लोगों की तरह अमियदा और पूरबीदी ने मेरे अन्तर में प्राणों के प्रदीप जला दिये हैं।

विद्यार्थी-जीवन के मित्र अग्रजतुल्य षष्ठीदा का कार्यक्षेत्र देखने छिन्दवाड़ा जिले का चान्दमेटा गया था। षष्ठीदा और वीणादी के आदर-यत्न के भुलावे में आकर सात दिन की जगह तेरह दिन बिता दिये। जब होश आया कि मैं पाँचू हलवाई के लड़के का प्राइवेट ट्यूटर हूँ तथा दैनिक संवाद का पच्चीस रुपया माहवार पानेवाला एक सीनियर रिपोर्टर, तो फिर देर नहीं की। दूसरे ही दिन बस पर चढ़कर परासिया आया, उसके बाद ट्रेन में बैठकर पहले छिन्दवाड़ा और उसके बाद नागपुर। भारत में एक सौ साल से अधिक समय से ट्रेन चल रही,

है; आदमी की तरह ही ट्रेन का भी जब बुढ़ापा आ जाता है तो उसे चलने-फिरने में तकलीफ़ होती है, इस लाइन में आने पर इस तथ्य की जानकारी प्राप्त हुई। बुढ़िया रेलगाड़ी छिन्दवाड़ा से खुलकर जब हाँफते-हाँफते नागपुर पहुँची तो एक तरह से मेरी हालत दमे के मरीज़ जैसी हो गयी। लगभग दो घण्टा पहले बंबई एक्सप्रेस हावड़ा जाने के क्रम में नागपुर से रवाना हो चुकी थी। इन्टरनेशनल एयरलाइन्स की तरह रेलवे कंपनी के ट्रानजिट पैसेंजर सम्मान के पात्र नहीं होते। बिना खर्चा किये बड़े होटल में टिकना, बढ़िया भोजन प्राप्त होना, जाम पर जाम शराब ढालना और शाम से रात के आखिरी पहर तक अर्धनग्न मेमसाहबों का कैबरे नृत्य देखना तो दूर की बात, रेलवे कंपनी वेटिंग-रूम के फ़र्श पर होल्डऑल बिछाकर रात बिताने की भी कोई गारन्टी नहीं देती। बासी पूरी, सड़े आलू की सब्जी, कम-से-कम एक हफ्ते का पुराना लड्डू, अशुद्ध जल, विशुद्ध पॉकेटमार वग़ैरह ही स्टेशन-वास के प्रमुख आकर्षण हैं। अतः एकमात्र सस्ते संतरे के अलावा नागपुर के स्टेशन में टिकने का मेरे लिए कोई आकर्षण नहीं था। एक के बाद दूसरी प्याली चाय पीकर मैंने अपना दिमाग़ हल्का कर लिया, उसके बाद क्लॉकरूम में सूटकेस रखकर बाहर निकल पड़ा।

स्टेशन के निकट ही एक सिन्धी की दुकान में जाकर ऑर्डर दिया—चार फुलका और क्वार्टर प्लेट मीट। लंगोटा पहने एक छोकरा एक गिलास पानी, प्लेट में प्याज और पुदीने की चटनी रखकर गाहकों की भीड़ में खो गया। बंगाली या मद्रासी होटल की तरह पंजाबी-सिंधी होटलों में भी ठण्डा खाना नहीं दिया जाता। गरम मांस और ताजा रोटी लाने में कम से कम पन्द्रह मिनट लगेगा, यह सोचकर मैं विचारों में खो गया। कलकत्ता, दिल्ली, बंबई की तरह नागपुर में नया या पुराना कुछ देखने लायक नहीं है, इसके अलावा सैलानियों की तरह बेवकूफ़ बनकर हाथ में बॉक्स कैमरा थामे, चहल-क़दमी करूँ, इसके प्रति मुझमें कभी कोई आकर्षण नहीं रहा है। १८१७ ई० में अंग्रेजों से अप्पा साहब

भलेमानस ने कहा, "दो क़दम चलकर देख लें कि पहचान पाते हैं नहीं।"

यह कहकर उन्होंने आँख के इशारे मुझे अपने पीछे-पीछे चलने को [कह]ा और खुद आगे बढ़ने लगे। जाऊँ या नहीं, यह सोचते-सोचते मैं [उ]नके पीछे-पीछे जाने लगा। दो-तीन मिनट चलने के बाद अट्टहास की [ध्व]नि सुनकर समझ गया कि बंगालियों की जमात में पहुँच गया हूँ। इधर-उधर नज़र दौड़ाऊँ कि इसके पहले ही पूरबीदी सामने आकर खड़ी हो गयीं। मेरे दाहिने हाथ को थाम सड़क के किनारे सरक आयीं और बोलीं, "बच्चू, तू, यहाँ कैसे आ गया?"

पूरबीदी को देखकर मैं अवाक् हो गया था। अपना हाथ छुड़ाक[र] पूरबीदी के हाथ में चिकोटी काटते हुए पूछा, "आपको दर्द महसूस [हो] रहा है?"

"हाँ।"

"तो फिर आप भूत-प्रेत नहीं, सचमुच ही पूरबीदी हैं।"

पूरबीदी हँस पड़ीं। हँसी रुकने के बाद बोलीं, "शरारत मत कर बच्चू, चपत जड़ दूँगी।"

कुर्निश करते हुए मैंने कहा, "आपकी जैसी आज्ञा मेम साहब!"

अबकी पूरबीदी ने सचमुच ही मेरा कान मल दिया।

अन्ततः पूरबीदी को मैंने अपने दुर्भाग्य की कहानी सुनायी। पता चला कि पूरबीदी की पार्टी घूमने-फिरने के ख़याल से निकली है औ[र] पटना, बनारस, इलाहाबाद, जबलपुर, बंबई, नासिक की सैर करने [के] बाद नागपुर आयी है। आज रात उन लोगों का अन्तिम अभिनय है[—] शरतचन्द्र की परिणीता।

तांगे पर बैठ कर स्टेशन जाने की योजना मैंने स्वेच्छा से रद्[द कर] दी और पूरबीदी के साथ चल दिया। विख्यात नाट्य मंडली 'चलन्ति[का'] का सदस्य बनकर उस रात मिसेज दीपाली चौधरी का आतिथ्य स्वी[कार] किया। उसके बाद मंच के एक किनारे बैठकर 'परिणीता' देखी।

अभिनय के आरंभ में नागपुर विश्वविद्यालय के एक बंगाली प्राध्या-
...ने शरत्चन्द्र और उनकी परिणीता के सन्दर्भ में एक छोटा-सा
...। बैरिस्टर खाडिलकर ने शरत्चन्द्र की तसवीर पर माल्या-
...किया, श्रीमती ललिता देवी ने गीत गाया।
गिरा हुआ परदा उठा। दस वर्ष की अन्नाकाली बोली, "बाबू जी,
...न, देखिएगा।"
...ने लड़की के चेहरे की ओर देखते हुए कहा, "एक गिलास
...ले आ तो बिटिया। पिऊँगा।"
बगल में फुसफुसाहट होने पर मैंने आँखें दौड़ायीं। देखा, पूरबीदी
ललिता के वेश में प्रस्तुत हैं और एक व्यक्ति उनकी कमर पर के कपड़े
...खींच-खींच कर ठीक कर रहा है। एक बार ऐसा लगा कि शेखर
...बाबू और गिरीश बाबू—दोनों आकर चले गये और कुछ फुसफुसाकर
...भी गये। बाद के कई दृश्यों में इन लोगों ने अभिनय किया, मैं
देखता रहा। उसके बाद वह दृश्य आया····
निपुण गृहिणी की तरह काली अपनी लड़की की शादी के सिलसिले
में बहुत व्यस्त है, शेखरदा को एक अदद माला ले जाकर पहुँचाने का
भी वक़्त उसके पास नहीं है। लग्न टलता जा रहा है, काली को मरने
की भी फ़ुर्सत नहीं है। आखिर में ललिता ही बड़ी माला लेकर शेखर-
दा की कोठरी में जाती है, उसे चौंकाकर उसके गले में माला डाल देती
है। शेखरदा ने सोचा था, काली है। दूसरे ही क्षण ललिता पर दृष्टि
जाते ही कहा, तुमने यह क्या किया ललिता? तुम्हें मालूम नहीं कि
आज की रात माला पहनाने से क्या होता है?
पूरबीदी ने ललिता की भूमिका में बड़ा ही अच्छा अभिनय किया।
शेखरदा के शब्द सुनकर उन्हें होश आया, माला पहनाने का महत्त्व
उसकी समझ में आया। यही नहीं, सचमुच ही पूरबीदी के सुन्दर मुखड़े
पर शर्म से लाली दौड़ गयी। शर्म से पिंड छुड़ाने के लिए दौड़ी हुई भागी
जा रही थीं, लेकिन शेखरदा ने पीछे से पुकारा।

मैं ड्राप के पास फोल्डिंग चेयर पर बैठा-बैठा अभिनय देख रहा था। यह भी देख रहा था कि छत की रेलिंग के किनारे शेखर और ललिता खड़े हैं। दोनों ने एक-दूसरे की ओर मुग्ध नयनों से देखा। शेखर के द्वारा दी गयी माला को गले में डालकर ललिता ने व्याकुलता के साथ कहा, "तुमने ऐसा क्यों किया ?"

इस तरह मुग्ध होकर मैं अभिनय देख रहा था कि स्वयं को शेखर समझकर संभवतः दो-चार शब्द भी बोल गया। देखा, ललिता ने शेखर-दा को प्रणाम किया। निकट आकर बोली, "अब मैं क्या करूँ, बताओ।"

इसके बाद शरतचन्द्र द्वारा वर्णन किये गये तथ्यों के अनुसार शेखर बाबू ने बड़ा ही सुन्दर अभिनय किया। पहले हँस दिया, उसके बाद दोनों हाथों को बढ़ाकर ललिता को छाती से लगा लिया। ललिता के मुखड़े पर अपना मुखड़ा रख दिया, होंठों के पास होंठ ले गये लेकिन शरतचन्द्र के वर्णन के अनुसार स्पर्श नहीं कर सके। मेरी आँखें टेली-स्कोप की तरह इन दो मुखड़ों पर फोकश डाल रही थीं, कान भी सतर्क थे। मैंने गौर से दोनों को देखा। शेखर बाबू ने बहुत आहिस्ता से कहा, "सब के सामने……" डाइरेक्टर एक क्षण मंच की ओर आँखें दौड़ाता है और दूसरे ही क्षण श्रोताओं की ओर। उनके शरीर में उत्तेजना दौड़ रही है। प्रॉम्पटर प्रामप्ट करने में व्यस्त है। ऊपर से लाइटिंग करने में लाइट-मैन भी व्यस्त है। चाहे इनके कान में नहीं पहुँचा हो लेकिन मुझे लगा कि पूरबीदी ने कहा, "शरारत मत करो।" श्रोताओं में से किसी ने न देखा, न उसकी समझ में आया। एक अभिनय के अन्तराल में एक दूसरा अभिनय हो गया। लेकिन बात मुझसे छिपी नहीं रही।

शुरू में लुक-छिपकर और बाद में खुले आम शरतचन्द्र की 'परिणीता' कितनी बार पढ़ चुका हूँ, इसका कोई आदि-अन्त नहीं। स्कूल-जीवन में संस्कृत शब्दरूप और कॉलेज में अर्थशास्त्र का सिद्धान्त मुखस्थ करने बजाय शरतचन्द्र की अधिकांश पुस्तकें जबानी याद कर लेता था

और इसमें कोई तकलीफ नहीं होती थी। यही वजह है कि पूरबीदी और शेखरबाबू की शरारत मेरी आँखों को धोखा नहीं दे सकी।

और एकाध घण्टे तक मंच पर बैठा रहा था। भुवनेश्वरी ने जब सन्दूक से सोने का गहना निकालकर ललिता की देह पर लाद दिया और खुशखबरी सुनाने को बड़े लड़के अविनाश के कमरे में गयीं, उस समय कलाई की घड़ी की ओर देखा। रात के डेढ़ बज चुके थे। अभिनय के अन्त में जब सभी कलाकार मंच पर आ सिर झुका कर दर्शकों के उदार आशीर्वाद ग्रहण कर रहे थे, उस समय भी पूरबीदी को शेखर बाबू के पास देखा। सभी श्रोताओं की ओर ताक रहे हैं। सभी मुग्ध हैं। मैंने देखा, पीछे की ओर शेखर बाबू और पूरबीदी के हाथ आपस में मिल रहे हैं।

अधिकांश दर्शकों के चले जाने के बाद दीपाली चक्रवर्ती, लतिका गुह, गंगा मजुमदार, यूथिका बैनर्जी, तरुलता भट्टाचार्य, प्रतिमा ब्रह्मचारी वगैरह प्रमुख महिलाओं ने आकर पूरबीदी का अभिनन्दन किया। दूसरे दिन सवेरे महिलाओं की एक स्वागत-सभा में आने को आमंत्रित किया। पूरबीदी की आपत्ति की परवाह न कर डाइरेक्टर से कहकर कार्यक्रम निश्चित कर लिया और महिलाओं का दल वापस चला गया।

स्टेशन रवाना होने की अनुमति पूरबीदी से लेने गया मगर अनुमति मिली नहीं। बोली, "बच्चू, तेरा दिमाग क्या खराब हो गया है कि रात दो बजे स्टेशन जायेगा? आज हम लोगों के साथ स्कूल में सो जा, सुबह उठकर चले जाना।"

पूरबीदी ने स्कूल में गिरीन बाबू के कमरे में मेरे सोने का इन्तजाम कर दिया। मैं लेट गया। पलकें बोझिल हो गयी हैं, ऐसे में दरवाजे पर खट्-खट् आवाज सुनकर मेरी तन्द्रा दूर हो जाती है। पूरबीदी की आवाज सुनकर उठ बैठा, दरवाजा खोल दिया। मुझे पुकार कर कहा, "बच्चू, जरा मेरे कमरे में चला आ।"

गिरीन वावू नींद में खो गये थे, दरवाजे के पल्लों को भेड़कर मैं
रवीदी के कमरे में चला गया ।

मैंने ज्यों ही कमरे के अन्दर क़दम रखा, पूरवीदी ने दरवाज़े के पल्ले भेड़ दिये । स्नेह के साथ मुझे अपनी वग़ल में विठाया । पेशानी पर से मेरे वाल की लटें हटाते हुए वोलीं, "वहुत दिनों के वाद तुझसे मुलाकात हुई, है न यह वात ?"

तथाकथित एमेच्योर थियेटर पार्टी की एक्ट्रेसों के संवंध में ढेर सारी कहानियाँ सुन चुका था, लेकिन पूरवीदी को मैंने उस तरह का नहीं सोचा था । फिर भी इस गहरी रात में दरवाज़े के पल्ले भेड़कर पूरवी-दी का मुझे अपने विलकुल निकट विठाना सन्देह का कारण हो गया । पूरवीदी को मैं वचपन से ही देखता आ रहा हूँ, इनके परिवार के लोगों से मेरा घनिष्ठ संवंध रहा है । कॉलेज में दाखिल होते न होते देश के वर्धमान के मकान में पूरवीदी की शादी मुफस्सिल के एक प्रोफेसर से हुई थी । फिर भी गृहस्थी छोड़कर शौक़ से थियेटर में शामिल हो घूमती-फिरती हैं, यह वात मेरी समझ में नहीं आती थी और न समझने की मैंने कभी कोशिश ही की। पूरवीदी का अभिनय इसके पूर्व न देखने पर भी उनके अभिनय की प्रशंसा सुन चुका था । वीच-वीच में छोटी मोटी सिनेमा पत्रिका में उनकी तसवीर भी देख चुका हूँ । शुरू में पूरवी दी के रूप-गुण की कहानी सवको मालूम थी । हम भी इस तथ्य परिचित थे । इधर कई वर्षों के दरमियान पूरवीदी के चाल-चलन वदलाव आया है या नहीं, यह मैं नहीं जानता था । लेकिन आज तरह के सन्देह ने मुझे धर दवाया ।

अपने मन का सन्देह ज़ाहिर न कर मैंने पूरवीदी के सवाल जवाव दिया । "हाँ, कई साल वाद आपसे मुलाक़ात हुई ।"

पूरवी दी ने मुहल्ले और दसियों व्यक्तियों के साथ-साथ भा भी हाल-चाल पूछा । शैंपू किये वालों पर कंघी की, ड्रेसिंगगा वेल्ट ठीक किया । मैंने पूरवीदी की ओर ग़ौर से देखा । उ

मुझसे कई वर्ष बड़ी हैं, परन्तु ऐसा लग नहीं रहा है। जिस्म आज भी कसा हुआ है, आँखों की दृष्टि में अब भी आकर्षण है। हल्के बँधे ड्रेसिंग-गाउन के अन्तराल से पूरबीदी के यौवन के उष्ण प्रस्रवण के छींटे मेरी देह के सभी अंगों को छू रहे थे। लेकिन जो इन अंगारों को फेंक रही थीं, उनका ध्यान इस ओर नहीं था। मुझे फिर नये सिरे से डर लगने लगा।

खाट पर हम दोनों अगल-बगल बैठे थे। मेरे हाथ को खींचकर पूरबीदी बोलीं, "मुझे पता चल गया था कि तू जर्नलिस्ट हो गया है। बहुत ही अच्छे प्रोफ़ेशन में चले गये।"

मैंने कुछ जवाब नहीं दिया, चुप्पी ओढ़े बैठा रहा। अभिनेत्री की बग़ल में बैठे रहने के कारण मेरी नींद भाग गयी थी, यह सच है; लेकिन दिन-भर की थकावट भागे तो कहाँ भागे? दीवार पर पीठ टेक चारपाई पर पाँव समेट कर बैठ गया। कहा, "आपकी एक्टिंग की तारीफ़ पहले ही सुन चुका था, आज देखने का मौक़ा मिला। आप इतनी अच्छी एक्टिंग करती हैं, मैंने सपने में भी नहीं सोचा था।"

"लगता है, तुझे बहुत ही अच्छी लगी।"

"मुझे ही क्यों, सबको बहुत अच्छी लगी," मैंने कहा। ज़रा शरारत के साथ कहा, "शेखर बाबू ने भी बहुत अच्छा अभिनय किया था, खासकर छत वाले दृश्य में।"

पूरबीदी बोलीं, "अभिनय वे अच्छा ही करते हैं, लेकिन····"

"लेकिन क्या?"

"अवसर से अधिक लाभ उठाते हैं।" लहमे-भर चुप रहने के बाद बोलीं, "चूँकि वे अच्छी एक्टिंग करते हैं इसलिए मैं भी कुछ कह नहीं पाती। आफ़्टर ऑल, अच्छा पार्टनर तो चाहिए ही।"

मैंने सन्तुष्ट होने का भाव दिखाया। उसके बाद कहा, "आपने क्यों बुलाया था, यह तो बताया ही नहीं।"

पूरबीदी और निकट खिसक आयीं और अपने दाहिने हाथ को मेरे

कंधे पर रख दिया। कोमल स्पर्श के कारण मेरे शरीर में एक लह
दौड़ गयी, फिर भी मैं सिकुड़ा-सिमटा बैठा रहा। पूरबीदी ने कहा, "क
लाख रुपये का इन्तज़ाम करना मेरे लिए बहुत ज़रूरी है। बाबू जी
मेरी शादी के मौक़े पर तिलक के अलावा पच्चीस हज़ार रुपया नक़
देने का वादा किया था, लेकिन पाँच हज़ार से ज़्यादा दे नहीं सके। वाद
किया कि बाद में दे देंगे लेकिन बाक़ी पैसे के लिए मेरे ससुर पाग
हो गये। जानते हो भैया, विवाह के दिन ससुर जी ने मेरे बाबू जी व
गन्दी-गन्दी गालियाँ दी थीं। प्रीतिभोज के दिन पिता जी को अपमानि
होकर मेरे ससुराल से लौट जाना पड़ा था।"

पूरबीदी लहमे-भर के लिए चुप हो गयीं, विचारों के सागर में डुबक
लगाकर किसी वस्तु का मंथन करने लगीं। आँखों के कोने में आँसू
कुछ कतरे झलमलाने लगे। पूरबीदी बोलीं, "जानते हो बच्चू, प्रतिहिंसा
वश सास ने मुझे एक दिन भी पति के कमरे में जाने नहीं दिया। यह
नहीं, अष्टमंगला में मायके आने के बाद मुझे कोई लिवाने नहीं आया
माँ और बाबू जी जब ज़िन्दा थे तो कई बार उनके पैरों पर पड़क
गिड़गिड़ाये लेकिन उन्हें अपमान और तिरस्कार के अलावा कुछ भी नह
मिला।"

मेरे मुँह से एक भी शब्द नहीं निकला। आश्चर्य में आकर मैं पूरबी
के चेहरे की ओर देखने लगा।

लंबी साँस लेने के बाद पूरबीदी बोलीं, "पति के रहते विधवा-जीव
जीने के मेरे दुख को देखकर माँ-बाप इस दुनिया से विदा हो गये।"

अपने हाथ से मेरा चेहरा अपनी ओर घुमाकर पूरबीदी ने उत्तेजन
के साथ कहा, "तुझे एक काम कर देना है। मुझे फ़िल्म का एक कॉन्ट्रैक
मिला है लेकिन अच्छी पब्लिसिटी न मिलने पर नया कॉन्ट्रैक्ट मिलन
मुश्किल है। सिनेमा की पत्र-पत्रिकाओं में ग्लैमर गर्ल की तरह मेर
बहुत सारी तसवीरें तरह-तरह के पोजों में प्रकाशित करवा देनी हैं।
थूक निगलकर बोलीं, "अपने ससुर की अनन्त तृष्णा को शान्त करने

लिए मुझे ढेर सारा पैसा चाहिए....."

मैंने कहा, "आप यह क्या कह रही हैं ?"

"ठीक ही कह रही हूँ ।"

आँखों में रक्तिम आभा लिए पूरबोदी चिल्ला उठीं, "फालतू बात मत कर बच्चू ।" उसके बाद कोमल स्वर में बोलीं, "तेरी क्या यह धारणा है कि मैं असूर्यम् पश्या और चरित्रवती हूँ ?" बीभत्स हँसी हँसते हुए बोलीं, "किसके लिए इस जवानी को बाँधे रखूं ? जरूरत पड़ेगी तो आज इस रात में मैं....."

मैं चिल्ला उठा, "पूरबोदी !"

तेज़ क़दमों से चलकर बरामदे पर आकर ठिठक कर खड़ी हो गयी । पूरबोदी की अविराम रुलाई और दुख-शोक से मैं कैसा-कैसा तो हो गया ! पत्थर की मूरत की तरह सिर झुकाये चुपचाप खड़ा रहा । काफी देर तक इस तरह खड़े रहने पर भी अपने कमरे में नहीं जा सका । पूरबोदी के कमरे के अन्दर चला गया । तकिये में मुँह छिपाकर वे तब भी रो रही थीं ।

मैंने हौले से पूरबोदी का मुखड़ा ऊपर उठाया । उनमें मेरी ओर ताकने की शक्ति न थी । बगैर कुछ कहे पूरबोदी ने मुझे अपने सीने में भर लिया । बोलीं, "बच्चू, मुझे क्षमा कर देना । हो सके तो मुझे ग़लत नहीं समझना, मुझसे नफ़रत नहीं करना ।"

मैंने झिड़की-भरे स्वर में कहा, "आप अनाप-शनाप क्या बक रही हैं ? आपको ग़लत क्यों समझूंगा या आपसे नफ़रत ही क्यों करूंगा ?"

पूरबोदी को मैंने उनके बिस्तर पर लिटा दिया । कहा, "सो रहिये ।"

"अब नींद नहीं आयेगी । लेकिन मुझे छोड़कर चले नहीं जाना । मुझे डर लग रहा है, बेचैनी महसूस हो रही है ।"

वह रात पूरबोदी की बगल में ही बैठकर गुजार दी । भोर के समय तन्द्रा ने मुझे दबोच लिया । कब पूरबोदी उठकर मुझे अपने बिस्तर पर सुलाकर चली गयी थीं, इसका पता नहीं चला ।

रख दिया । कोमल स्पर्श के कारण मेरे शरीर में एक लहर
ी, फिर भी मैं सिकुड़ा-सिमटा वैठा रहा। पूरवीदी ने कहा, "कई
रुपये का इन्तज़ाम करना मेरे लिए वहुत ज़रूरी है। वावू जी ने
शादी के मौक़े पर तिलक के अलावा पच्चीस हज़ार रुपया नक़द
ा वादा किया था, लेकिन पाँच हज़ार से ज़्यादा दे नहीं सके। वादा
ा कि वाद में दे देंगे लेकिन वाक़ी पैसे के लिए मेरे ससुर पागल
ाये। जानते हो भैया, विवाह के दिन ससुर जी ने मेरे वावू जी को
ी-गन्दी गालियाँ दी थीं। प्रीतिभोज के दिन पिता जी को अपमानित
कर मेरे ससुराल से लौट जाना पड़ा था।"

पूरवीदी लहमे-भर के लिए चुप हो गयीं, विचारों के सागर में डुवकी
गाकर किसी वस्तु का मंथन करने लगीं। आँखों के कोने में आँसू के
कुछ कतरे झलमलाने लगे। पूरवीदी वोलीं, "जानते हो वच्चू, प्रतिहिंसा-
वश सास ने मुझे एक दिन भी पति के कमरे में जाने नहीं दिया। यही
नहीं, अष्टमंगला में मायके आने के वाद मुझे कोई लिवाने नहीं आया।
माँ और वावू जी जव ज़िन्दा थे तो कई वार उनके पैरों पर पड़कर
गिड़गिड़ाये लेकिन उन्हें अपमान और तिरस्कार के अलावा कुछ भी नहीं
मिला।"

मेरे मुँह से एक भी शब्द नहीं निकला। आश्चर्य में आकर मैं पूरवीदी
के चेहरे की ओर देखने लगा।

लंवी साँस लेने के वाद पूरवीदी वोलीं, "पति के रहते विधवा-जीवन
जीने के मेरे दुख को देखकर माँ-वाप इस दुनिया से विदा हो गये।"

अपने हाथ से मेरा चेहरा अपनी ओर घुमाकर पूरवीदी ने उत्तेजना
के साथ कहा, "तुझे एक काम कर देना है। मुझे फ़िल्म का एक कॉन्ट्रैक्ट
मिला है लेकिन अच्छी पब्लिसिटी न मिलने पर नया कॉन्ट्रैक्ट मिलन
मुश्किल है। सिनेमा की पत्र-पत्रिकाओं में ग्लैमर गर्ल की तरह मे
वहुत सारी तसवीरें तरह-तरह के पोजों में प्रकाशित करवा देनी हैं।
थूक निगलकर वोलीं, "अपने ससुर की अनन्त तृष्णा को शान्त करने

लिए मुझे ढेर सारा पैसा चाहिए····"

मैंने कहा, "आप यह क्या कह रही हैं ?"

"ठीक ही कह रही हूँ।"

आँखों में रक्तिम आभा लिए पूरबीदी चिल्ला उठीं, "फ़ालतू बात मत कर बच्चू।" उसके बाद कोमल स्वर में बोलीं, "तेरी क्या यह धारणा है कि मैं अमूर्यम् पश्या और चरित्रवती हूँ ?" बीभत्स हँसी हँसते हुए बोलीं, "किसके लिए इस जवानी को बाँधे रखूं ? जरूरत पड़ेगी तो आज इस रात में मैं····"

मैं चिल्ला उठा, "पूरबीदी !"

तेज क़दमों से चलकर बरामदे पर आकर ठिठक कर खड़ी हो गयी। पूरबीदी की अविराम रुलाई और दुख-शोक से मैं कैसा-कैसा तो हो गया! पत्थर की मूरत की तरह सिर झुकाये चुपचाप खड़ा रहा। काफ़ी देर तक इस तरह खड़े रहने पर भी अपने कमरे में नहीं जा सका। पूरबीदी के कमरे के अन्दर चला गया। तकिये में मुँह छिपाकर वे तब भी रो रही थीं।

मैंने होले से पूरबीदी का मुखड़ा ऊपर उठाया। उनमें मेरी ओर ताकने की शक्ति न थी। बगैर कुछ कहे पूरबीदी ने मुझे अपने सीने में भर लिया। बोलीं, "बच्चू, मुझे क्षमा कर देना। हो सके तो मुझे ग़लत नहीं समझना, मुझसे नफरत नहीं करना।"

मैंने झिड़की-भरे स्वर में कहा, "आप अनाप-शनाप क्या बक रही हैं ? आपको ग़लत क्यों समझूंगा या आपसे नफरत ही क्यों करूंगा ?"

पूरबीदी को मैंने उनके बिस्तर पर लिटा दिया। कहा, "सो रहिये।"

"अब नींद नहीं आयेगी। लेकिन मुझे छोड़कर चले नहीं जाना। मुझे डर लग रहा है, बेचैनी महसूस हो रही है।"

वह रात पूरबीदी की बगल में ही बैठकर गुज़ार दी। भोर के समय तन्द्रा ने मुझे दबोच लिया। कब पूरबीदी उठकर मुझे अपने बिस्तर पर सुलाकर चली गयी थीं, इसका पता नहीं चला।

पूरबीदी की पुकार पर जब मेरी आँखें खुलीं तो आठ ज़रूर बज चुके थे। वे तैयार हो चुकी थीं, मुझे भी जल्द से जल्द तैयार होने को कहा। अन्ततः वे मेरे साथ स्टेशन आयीं और कलकत्ते की टिकट खरीदी।

पूरबीदी के साथ कलकत्ता वापस आने के कुछ महीने बाद दफ्तर में अचानक बातचीत के सिलसिले में 'चलन्तिका' और पूरबीदी की चर्चा छिड़ गयी। अमियदा ने उत्तेजित होकर मुझे पुकारा, "बच्चू, ज़रा ज़ल्दी आकर सुन जाओ।"

बरामदे के एक किनारे ले जाकर अमियदा ने बहुत ही आहिस्ता से पूछा, "अच्छा, यह तो बताओ कि उसका नाम क्या पूरबी चौधरी है? घर बर्धमान?"

मैंने कहा, "हाँ; मगर आप यह सब क्यों जानना चाहते हैं?"

अमियदा ने मेरे मुँह पर अपना हाथ रखते हुए कहा। "भाई, उसके बारे में किसी से और कुछ नहीं कहना......"

फिर भी मैंने कहा, "मगर......"

"अगर-मगर नहीं भाई। किसी से उसके बारे में कुछ नहीं कहना। पूरबी मेरी पत्नी है।"

प्रवीण होकर नवीन का स्वागत करें, हममें से अधिसंख्यक लोगों में यह उदारता नहीं मिलेगी। कॉलेज के फ़ोर्थ इयर के छात्र-छात्राएँ फ़र्स्ट इयर के छात्र-छात्राओं को बच्चा समझकर उनके प्रति अनुकंपा का भाव रखते हैं। पत्रकारिता की ज़िन्दगी में भी मुझे इस अनुभव के दौर से गुज़रना पड़ा था। चीफ़ रिपोर्टर तारादा की टिप्पणी, आज के टिकट-कलक्टर और गये दिनों के रिपोर्टर बाबू का अपमानजनक मंतव्य मुझे भूला नहीं है और न भूलेगा ही।

तारादा या काठी बाबू को मैं इसके लिए जिम्मेदार नहीं ठहराता। क्योंकि यह हमारा जातीय स्वभाव है। सरकारी या व्यावसायिक कार्यालय के कर्मचारी को भी इस अनुभव से गुज़रना पड़ता है।

तारादा या काठो बाबू की तरह मैं अपने पत्रकार-जीवन के अनुजों के प्रति अनुकंपा का भाव प्रदर्शित नहीं करता था। और ऐसा इसलिए नहीं कि मैं उदार हृदय का हूँ, बल्कि इसलिए कि बीते दिनों की स्मृति मेरे मन में मौजूद थी। बातचीत में जरा भी त्रुटि होती तो मुझे "दैनिक संवाद" कार्यालय के प्रथम दिन की याद आ जाती। यही वजह है कि अनिल बैनर्जी का जिस दिन पहले-पहल हमारे दफ्तर में आगमन हुआ, चेहरे पर हँसी ले उसे चाय पिलाये बगैर रह नहीं सका। अनिल यद्यपि बहुत दिनों तक हमारा सहकर्मी नहीं रहा लेकिन आज भी विद्या-बुद्धि और रसबोध की याद किये बगैर रह नहीं पाता।

'दैनिक संवाद' का संवाददाता बनने की खातिर नियमित तौर से बहुतेरे गुणी, ज्ञानी और मूर्ख आते थे और हरिदा उनमें से एक को हम लोगों में से किसी के हाथ सुपुर्द कर देता था। अनिल इन नवागन्तुकों से कहता, "राशन का चावल खाने में हालांकि तकलीफ पहुँचाता है, मगर लेने के अलावा दूसरा कोई उपाय नहीं।"

कुछ दिनों के बाद हमें पता चला कि अनिल हम लोगों के ट्रेनिंग-डिपार्टमेन्ट का इंचार्ज हो गया है। संवाददाता बनने के खयाल से कोई आता तो हरिदा अनिल को फ़ोन से कहता, "अनिल, वैद्यनाथ गोस्वामी को भेज रहा हूँ। जरा देख लो कि इनसे काम हो सकेगा या नहीं।" हम लोग अनिल को मजाक में 'प्रोफ़ेसर' कहते।

और-और छात्रों की नाईं साहित्यिक संवाददाता होने का सपना ले देवतोष चक्रवर्ती प्रोफ़ेसर के पास आया।

एक हाथ में जीवनानन्द की 'वनलता सेन' और दूसरे से धोती की चुन्नट सँभाले देवतोष नीलांजना पंछी की तरह वीतराग हो इंटरव्यू देने आया।

"लिखाई-पढ़ाई कहाँ तक हुई है?" प्रोफेसर ने पूछा।

"स्पेशल बँगाली लेकर बी० ए० पास किया है।"

"बेशी एम।"

वाददाता बनना चाहते हैं ?"
ाहित्यिक संवाददाता।"
निल ने आश्चर्य के साथ देवतोष की ओर देखा। बोला, "यह
ही सकता है ? आप अकेले एक ही साथ वहू बाज़ार और सेंट्रल
यू का चक्कर कैसे काटिएगा ?"
प्रोफेसर का सवाल छात्र को ठीक-ठीक समझ में नहीं आया।
"ठीक से समझ नहीं सका।"
आँख फैलाकर अनिल ने गुरु गंभीर स्वर में कहा, "पत्रकारिता वहू
ाज़ार स्ट्रीट है और सेंट्रल एवन्यू है साहित्यकारों का स्थान। इसीलिए
मैंने कहा था कि आप अकेले इन दो रास्तों पर कैसे चहल-क़दमी
कीजिएगा ? आप अगर दो आदमी होते तो फिर कोई कठिनाई नहीं
होती।"

देवतोष ने सूचित किया कि वह रविवार के मैगजिन सेक्शन में
काम करना चाहता है, जहाँ साहित्य-साधना के साथ-साथ पत्रकारिता
का काम भी चलेगा।

मेज़ थपथपाकर अनिल ने कहा, "आइ सी।"

इसके बाद देवतोष का प्रशिक्षण शुरू हो गया। पहले दिन प्रोफेसर
ने कहा, "किले का मैदान पहचानते हैं न ? ठीक है, वहाँ चले जाइये।
देखिएगा, खाली मैदान में पावर लीग का मैच चल रहा है, उसी मैच
के बारे में रिपोर्ट पेश कीजिये।" दूसरे दिन प्रोफेसर ने कहा, "बेल-
घरिया चले जाइये। वहाँ के गोपाष्टमी मेले पर कल एक फ़ीचर लिख
कर ले आइएगा।"

देवतोष दूसरे दिन नहीं आया। प्रोफेसर ने सोचा, शायद उम्मी
पर पानी फिर गया। लेकिन बाद वाले दिन फिर आया। देव
पर नज़र जाते ही अनिल चिल्ला उठा, "कल आप कहाँ थे ? भव
वांड़ज्या आपसे बातचीत करने आये थे और आप आये ही नहीं !
करते हैं आप !"

देवतोप ने स्वयं को अपराधी समझा। होंठ काटते हुए बोला, "क्या करूं! बेलघरिया के बारे में लेख खत्म न होने के कारण......"

प्रोफेसर ने इसके बाद बोलने नहीं दिया। "ठीक है, परवाह नहीं। हाथ बढ़ाकर बेलघरिया की रिपोर्ट लेते हुए बोला," आज आपको छुट्टी दी जाती है लेकिन कल और परसों दिन-भर काम है। ...

कल शनिवार होने से क्या होगा, सवेरे से ही लोग जा रहे हैं और परसों का तो कुछ कहना ही नहीं। आप दोनों दिन सुबह ही उठकर चले जाइएगा, क्योंकि कोई साधारण बात नहीं, क्वीन्स कप का खेल है।" प्रोफेसर ने हंसते हुए कहा, "इसके अलावा कोलम्बो से जैक रूपी आ रहा है। जानते हैं न यह बात ?"

संजय भट्टाचार्य की कविता की पुस्तक हाथ में थामे देवतोप बेव-कूफ़ की तरह ताकता रहा। बस इतना ही पूछा, "क्या कहा ?"

"हम लोगों के रेस की बाबत कह रहा था। खूब अच्छी तरह रिपोर्ट कीजिएगा। क्वीन्स कप का खेल है। बहुत ही सीरियस मामला है।"

जाने के पहले अनिल ने देवतोप को रेस का कार्ड दिया।

एकाध महीने तक इसी तरह ट्रेनिंग चलने के बाद प्रोफेसर ने देव-तोप से स्पोर्ट्स रिपोर्टर बनने को कहा।

देवतोप चौंक पड़ा। कहा, "यह आप क्या कह रहे हैं ? मैं लिट-रेचर का छात्र हूं, स्पोर्ट्स में जाकर क्या करूंगा ?"

"देवतोष बाबू, इसमें चौंकने की कोई बात नहीं। लिटरेचर के छात्र होने के नाते आप बखूबी स्पोर्ट्स रिपोर्टर बन जाइएगा। सक्सेस-फुल जर्नलिस्ट होना मामूली बात नहीं। एकोनोमिक्स का बढ़िया छात्र हुए बग़ैर कोई सिनेमा-एडिटर नहीं हो सकता, अच्छे स्पोर्ट्समैन ही आमतौर से असिस्टेन्ट एडिटर होते हैं। इसके अलावा पालिटिक्स का बढ़िया नॉलेज रहने पर भी कामयाब स्पोर्ट्स रिपोर्टर बना जा सकता है। इसके अलावा आपको क्या मालूम है कि किसी तरह का मेन्टल

क्वालिफ़िकेशन न रहने पर ही अच्छा रिपोर्टर बना जा सकता है ?"

देवतोष ने घर के लोगों से सलाह-परामर्श लेने के खयाल से कोई वचन नहीं दिया। बताया कि बाद में सूचित करेगा। लेकिन देवतोष ने फिर कभी दैनिक संवाद कार्यालय में पाँव नहीं रखे। एक-दो वर्ष बाद एक पोस्टकार्ड लिखकर उसने अनिल के प्रति कृतज्ञता प्रकट की थी और पुरुलिया मॉडर्न स्कूल में शिक्षक का काम करने की सूचना दी थी।

अनिल के प्रशिक्षण के तौर-तरीके का हम मजाक उड़ाते थे लेकिन मन ही मन विश्वास भी करते थे कि उसी की बात सच है। क्योंकि ऐसा न होता तो मुझ जैसे नास्तिक को तारादा कभी सनातन महा-समिति के सर्वभारतीय सर्वधर्मसम्मेलन में नहीं भेजते। एक सप्ताह तक साधु-संन्यासियों के सत्संग में रहने की संभावना से मेरा माथा चकराने लगा। तारादा के सामने हाथ जोड़ने और अनुनय-विनय करने पर भी कोई फ़ायदा नहीं हुआ। तारादा बोले, "तुम्हारे जैसा विशुद्ध नास्तिक ब्राह्मण कहाँ मिलेगा ? तुम्हारे अतिरिक्त कोई दूसरा यह काम नहीं कर सकेगा।"

"क्यों ?" मैंने पूछा।

तारादा ने कहा, "धार्मिक व्यक्ति को भेजूंगा तो सब कुछ बर्बाद हो जायेगा। इस संप्रदाय के किसी आदमी को भेजूंगा तो आनन्द से गद्गद होकर बहुत ज्यादा लिख देगा। किसी दूसरे संप्रदाय का भक्त भेजूंगा तो क्रोध और विद्वेष से, हो सकता है, सनातन सम्मेलन के विरुद्ध लिख दे। इसलिए ठीक-ठीक रिपोर्ट लिखने के लिए तुम्हारे सिवा कोई दूसरा आदमी नहीं है।"

इस महासम्मेलन में मुझे भेजने का एक और कारण था। स्वयं संपादक हरिसाधन मित्तिर इस सम्मेलन की स्वागत-समिति के प्रमुख थे और उन्होंने ही कार्ड पर लिख दिया था—तारा, बच्चू को भेजना।

अन्ततः एक लंबी और जोरदार उसाँस ले मैं सर्वधर्म सम्मेलन का

कार्ड थामे घर चला आया। दरवाजा खोलते ही भाभी ने देखा, मैं गा रहा हूँ—सब कुछ यहाँ तुम्हारी इच्छा, तुम इच्छामयी तारा। अपना कर्म आप तुम करती, सब कहता मैं करता। इसके बाद फिर मैं 'सब कुछ यहाँ' कहकर जोरों से आलाप ले ही रहा था कि भाभी मेरा कान पकड़ कर बोली, "सच-सच बताओ बच्चू, आज तुम किसको बर्बादी करके आये हो कि·····"

मैं उछल पड़ा। बोला, "छुओ नहीं, छुओ नहीं बंधु·····"

"नखरे करने में तो बहादुर हो!" भाभी ने होंठ टेढ़ा कर कहा और चली गयी।

सर्वभारतीय जैसे विशाल धर्म महासम्मेलन की रिपोर्ट के लिए मुझे भेजने की बात सुनकर भाभी को आश्चर्य हुआ।

निरामिष नहीं, आमिष खाना खाकर ही मैं सात दिन धर्म सम्मेलन गया था। सम्मेलन के दूसरे दिन लाउंज में बैठे-बैठे कुछ पढ़ रहा था, तभी एक महाराज मेरे सामने आकर बैठ गये। कुछ देर के बाद जान-पहचान हुई। महाराज के नाम और परिचय से अवगत हुआ। अन्त में महाराज बोले, "बदरीनाथ, शृंगेरी, द्वारका और पुरी के शंकर मठ की बात छोड़ दी जाये तो हम लोगों के मठ से पुराना कोई दूसरा मठ भारत में नहीं है। इसके अलावा चार वेदों में से तीन की मूल टीका हमीं लोगों के मठ में है। कहीं दूसरी जगह यह चीज नहीं मिलेगी।"

मैं जरा दूर बैठा था, महाराज ने स्नेह के साथ मुझे अपने निकट बिठा लिया। बोले, "दूर क्यों, निकट चले आओ।"

घबराकर मैंने संयत स्वर में निवेदन किया, "एक तो मैं मूर्ख, अखबार का रिपोर्टर, उस पर अज्ञानता से परिपूर्ण। आपके पास किस अधिकार से बैठूं?"

महाराज के चेहरे पर मधुर हँसी खेल गयी। मेरे सिर पर हाथ रखकर बोले, "अपने अधिकार-अनधिकार की विवेचना करने का अधिकार तुम्हें किसने दिया? तुम अपना काम कर रहे हो, मैं अपना।"

तुम्हें तुच्छ समझूँ, इसका कोई कारण मेरे पास नहीं है। भगवान् श्रीकृष्ण, बुद्धदेव, ईसा, शंकराचार्य, रामकृष्ण, चैतन्य, विवेकानन्द—ये लोग हम तुम जैसे रक्त-मांस के ही मनुष्य थे लेकिन अपनी साधना के कारण वे ईश्वर के रूप में सारी दुनिया में पूजे जाते हैं। इसके अलावा गुरु महाराज! थे तो वे मात्र एक साधारण दुकान-कर्मचारी, लेकिन अन्तर की प्रेरणा के बल पर उन्होंने भी अँधेरे में रास्ता खोज निकाला था और उस चिरानन्दमय परमपुरुष भगवान के दर्शन किये थे।"

मुंड़े माथे और गेरुआ वस्त्र में स्वामीजी महाराज बहुत ही अच्छे दीख रहे थे। गुरु महाराज की बात शुरू करते ही उनके चेहरे पर सौ गुना दमक आ गयी। देखकर मुझे बहुत ही अच्छा लगा। महामारा मुड़ कर बैठ गये। बोले, "देखो, प्रत्येक आदमी के मन में एक लालसा होनी चाहिए कि जो कुछ देख चुका हूँ, जो कुछ प्राप्त हो रहा है, उससे परे कुछ देखना और पाना है। साधारणतः मनुष्य में यह लालसा सहज ही नहीं आती, लेकिन जब आती है तो बाढ़ के पानी की तरह सब कुछ बहा देती है।"

महाराज मुसकराये। स्नेह के साथ मेरे माथे के हाथ से सहलाते हुए बोले, "कौन कह सकता है कि तुममें चिनगारी है या नहीं ?" ज़रा चुप हो गये; फिर बोले, "किसी दिन हमारे आश्रम में आओ।"

मैं 'ना' नहीं कह सका। कहा, "ज़रूर आऊँगा।"

मैं आस्तिक हूँ या नास्तिक, यह नहीं जानता। देवी-देवताओं के बारे में कभी सोचता नहीं था। लेकिन मुसीबत आती तो हाथ जोड़कर ईश्वर से दया की भीख माँगने में दुविधा का अनुभव नहीं होता था। साधु-संन्यासियों को देखते ही मेरे मन में भक्ति-भाव का उफान नहीं आता था। लेकिन आज ब्रह्मचारी संन्यासी मुझे बहुत अच्छे लगे। हो सकता है, मेरे मन में तनिक भक्ति-भाव भी आ गया हो, लेकिन ठीक-ठीक याद नहीं।

सर्वधर्म महासम्मेलन के समाप्ति-अधिवेशन में स्वामी जी महाराज

ने एक सारगर्भित भाषण दिया। न मालूम क्यों स्वामीजी महाराज के भाषण की खासी बड़ी रिपोर्ट मेरी क़लम से लिख गयी जो दूसरे दिन के दैनिक संवाद के प्रथम पृष्ठ पर प्रकाशित हुई। छपे हुए हरूफों में अपनी रिपोर्ट देखने के बाद ध्यान में आया कि बहुत बड़ी रिपोर्ट लिख गया हूँ।

लगातार सात दिनों तक दोनों वक्त इस महासम्मेलन की कार्यवाही का संवाद लेते-लेते बिलकुल थक गया था। तारादा को बिना जताये दो दिन ऑफिस से गायब रहा। तीसरे दिन जरा शर्मिन्दगी के साथ दफ़्तर के अन्दर प्रवेश करने जा रहा था, लेकिन कमरे के दरवाजे के पास पहुँचते ही तारादा बोले, "आओ-आओ बच्चू। कांग्रेचुलेशन फॉर योर ग्रैण्ड कवरेज।"

इतना ही काफी था परन्तु तारादा और दो कदम आगे बढ़ आये। पुकारा, "लावण्य! बच्चू के लिए डब्ल अंडे का एक मामलेट और दो चाय।"

हम लोगों के दफ्तर में डब्ल मामलेट खाने लायक़ कोई रोज़गार नहीं करता था, यह बात वनमाली को अच्छी तरह मालूम थी। कभी-कदा बाहर से कोई आ जाता तो इस प्रकार की दुष्प्राप्य वस्तु का आदेश दिया जाता था। यही वजह है कि लावण्य की बात पर वनमाली को यक़ीन नहीं हुआ। वनमाली कैन्टिन से भागा-भागा आया और बोला, "तारा बाबू, सचमुच क्या डब्ल अंडे का मामलेट भेज दूँ?"

तारादा की डाँट सुनते ही वनमाली ने चाय-मामलेट भेज दिया। हम सभी ने शोर-शराबे के साथ मामलेट खाया। मामलेट खाने के बाद अनिल चम्मच चाटते हुए बोला, "कितने दिनों के बाद मामलेट खाने को मिला।"

प्लेट हाथ में लिए बारीन बोला, "फिर कब खाने को मिलेगा, कौन जाने!"

सिगरेट का कश लेते हुए जब अनिल, बारीन और बाक़ी लोग बाहर

ल गये तो मैंने तारादा से पूछा, "बात क्या है ?" "बात और क्या
ा! साधु-संन्यासियों की जमात अखबार में कार्यवाही का संवाद
कर प्रसन्न है, सभी ने तुम्हारे लेखन की तारीफ़ की है। कइयों ने
हारी खोज में हमें परेशान कर मारा। खैर, तुम एक बार हरिदा
जाकर मिल आओ।"

हरिदा के पास जाने पर सुनने को मिला कि 'अनादि अनन्त आश्रम'
क स्वामी जी महाराज ने मुझे बुलावा भेजा है। यह समाचार देकर
हरिदा बोले, "अनादि अनन्त आश्रम से पुराना कोई प्रतिष्ठान भारत
में है या नहीं, इसमें सन्देह है और स्वामी जी महाराज कम से कम
दस-पन्द्रह लाख लोगों के हृदय-सम्राट हैं।"

हरिदा के कहने का मक़सद यही था कि ऐसे महाजन की मैं अवहेलना
नहीं करूँ। मैं चुपचाप रहा। लेकिन अन्ततः ऐसी परिस्थिति आ गयी
कि टालीगंज के इस आश्रम में गये बिना नहीं रह सका।

महाराज ने स्वयं मेरा स्वागत किया। धर्म महासम्मेलन के अपने
भाषण के विस्तृत प्रकाशन के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद दिया। बोले,
"तुम जैसे रिपोर्टरों के हाथ में बेहद क्षमता है। इस क्षमता का सदुपयोग
किया जाये तो बहुतों की भलाई हो सकती है।

"हम लोगों के हाथ में कौन-सी क्षमता है ?"

"क्या कह रहे हो तुम! दस-बीस अच्छी-बुरी चीज़ें लिखकर अखबार
में छपवा तो सकते ही हो।"

मैंने कहा, "जी हाँ, इतना ही कर सकते हैं, इससे अधिक कुछ नहीं।"

महाराज ने सन्तुष्ट होकर कहा, "यही तो सबसे बड़ा हथियार है।"

समवेत शिष्य-शिष्याओं से महाराज ने मेरा परिचय इस त
कराया जैसे मैं 'न्यू यार्क टाइम्स' या 'लण्डन टाइम' का संपादक हो

क़ीमती फल-मिठाई खाकर उस दिन मैं वहाँ से विदा हुआ।

कुछ दिन बाद एक युवक स्वामी जी महाराज के एक भाषण
रिपोर्ट मेरे डेरे पर आकर दे गया। कई दिन बाद महाराज का टेलो

आने पर समझ गया कि रिपोर्ट का प्रकाशन हो गया है। इसके बाद मेरे आश्रम आने-जाने के सिलसिले और दैनिक संवाद में महाराज के भाषण के प्रकाशन की मात्रा में वृद्धि आ गयी। साल पूरा होते न होते महाराज का शिष्य न होने के बावजूद मैं उनके इनर कैबिनेट का सदस्य हो गया। धीरे-धीरे शिष्यों का भी अपना आदमी हो गया।

युवावस्था में इतने बड़े आश्रम का एक प्रमुख व्यक्ति हो जाने पर मेरा मन आत्म-सन्तोष से परिपूर्ण हो उठा था। लाखों गुणी-ज्ञानी शिष्यों के रहने के बावजूद महाराज मुझपर अतुल स्नेह उड़ेलते हैं, यह जानकर मुझे गर्व का अनुभव होता था। शिष्य मंडली के बीच जज-बैरिस्टर, वकील-मुख्तार, सरकारी कर्मचारी, मास्टर-प्रोफेसर, डाक्टर-इंजीनियर इत्यादि की अपार संख्या रहने के बावजूद एक भी पत्रकार न था। यही वजह है कि शिष्य न रहने के बावजूद अनादि अनन्त आश्रम में मेरी इतनी पूछ होती थी। इस बात से उन दिनों खुशी होती थी लेकिन आज दुख होता है। लगता है, महाराज से जान-पहचान न हुई होती तो अच्छा रहता। शिष्यों के साथ घनिष्ठता न हुई होती तो मन में शान्ति का अनुभव होता।

गृहस्थ-जीवन में हर स्तर के आदमी में शान्ति का अभाव रहता है। भगवान की विचित्र लीला से सतानहीन करोड़पति मात्र एक संतान के लिए कंगाल की तरह मारा-मारा फिरता रहता है, और दूसरी ओर दरिद्र आदमी सन्तान-सन्तति के साथ मुट्ठी-भर अनाज की उम्मीद में उसी सन्तानहीन कोटिपति के दरवाजे पर भिक्षा पात्र लिए इन्तज़ार करता रहता है। बेरोजगार आदमी नौकरी के उम्मीद में मन्दिर जाता है और उसी मूर्ति के सामने नौकरीजीवी तनख्वाह बढ़ाने की उम्मीद में हाथ जोड़े खड़ा रहता है। यही नहीं, लखपति-करोड़पति बनने की उम्मीद में लोग उसी मूर्ति से आशीर्वाद माँगते हैं। दुनिया में कहीं किसी चीज में शान्ति का वास नहीं है। परीक्षा में फेल करने में घोर अशान्ति का अनुभव होता है, पास करने पर नौकरी न मिलने पर भी अशान्ति। शादी

...से अच्छा नहीं लगता लेकिन शादी करने से भी शान्ति नहीं
...। गाहक सोचते हैं, दुकानदार ठग रहा है; दुकानदार सोचता है,
...न ठग रहा है और महाजन सोचता है इतना रुपया लगाकर कौन-
...ाभ हो रहा है। म्युजिकल चेयर की तरह सभी चक्कर काट रहे
...किन आखिर में सबको यही करना पड़ता है—

सरिता का यह तट कहता है लेकर दीर्घ उसाँस
सारा सुख उस तट पर बसता मेरा यह विश्वास।
सरिता का वह तट बैठे-बैठे लंबी साँसें भरता
कहता, जितना कुछ सुख जग में इस तट पर ही रहता।

नदी के इस पार से उस पार पहुँच कर भी आदमी को जब शान्ति नहीं मिलती, उसकी आत्मा को तृप्ति नहीं मिलती तो भागकर संन्यासी के चरणों के तले जाकर आश्रय लेता है। आदमी अशान्त मन लेकर मठ जाता है, आश्रम के संन्यासियों के पास जाता है—इस उम्मीद में ...क शंकराचार्य, चैतन्य, रामकृष्ण, विवेकानन्द के उत्तर साधकों के पास उसे पदचिह्न प्राप्त होगा। ऐसा उम्मीद करना क्या अन्याय है ? नहीं। मात्र बत्तीस वर्ष की उम्र में शंकराचार्य ने हिमालय की गोद में देह-त्याग किया था, लेकिन दो हजार वर्षों के भारत के इतिहास को नये मोड़ पर लाकर खड़ा कर दिया था—पथभ्रष्ट भारतीयों का पथ-प्रद-र्शन किया था। और विवेकानन्द ? उन्होंने भी यौवन और प्रौढ़त्व के सीमित परिसर में रुग्ण, मलिन, रोगाक्रान्त, विकारग्रस्त जाति के व... में प्राणों का संचार किया था। आज के साधु-संन्यासियों में उन साध... का कण-मात्र अंश है ? सबके बारे में तो नहीं कह सकता लेकिन अ... संख्यकों में नहीं है—यह मैं दावे के साथ कह सकता हूँ।

मठ के शिष्यों में से किसी को पहचानता नहीं था लेकिन म... प्रमुख गुरुचरण बाबू को देखता तो वे पहचाने-पहचाने जैसे लगते। ... राज के साथ दक्षिण भारत जाने के समय मैंने ट्रेन में गुरुचरण ब...

कहा था, "लगता है आपको कहीं देखा है मगर ठीक-ठीक याद नहीं आ रहा है।"

गुरुचरण बाबू ने इस बात को कोई तूल नहीं दिया था। बोले, "मुझे तो ऐसा नहीं लगता कि आपको कहीं देखा होऊँ।"

गुरुचरण बाबू ने भले ही मेरे सन्देह को कोई महत्त्व नहीं दिया लेकिन एक दिन ऐसा भी आया जब गुरुचरण बाबू का वास्तविक परिचय दिन के प्रकाश की तरह मेरे सामने स्पष्ट हो गया। चुनाव के समय दैनिक संवाद की एक रिपोर्ट को मुद्दा बनाकर दो राजनीतिक दलों के बीच वाद-विवाद छिड़ गया। समाचार की सत्यता प्रमाणित करने के लिए हम तरह-तरह के सूत्रों से समाचार एकत्र करने में जी-जान से लग गये। तारादा राइटर्स बिल्डिंग्स की पुरानी दस्तावेज देखने लगे, अनिल दिन-भर नेशनल लाइब्रेरी में रहने लगा, बारीन पुराने नेताओं के गिर्द चक्कर काटने लगा और मैं दफ्तर में बैठ कर पुराने अखबार की फ़ाइल लेकर खोज-पड़ताल करने लगा।

लगभग एक महीने बाद, पुराने अखबार की फ़ाइल उलटने-पुलटने के क्रम में एक तसवीर पर मेरी नज़र गयी। ग़ौर से देखने पर कपाल की दाहिनी ओर चोट की निशानी दीख पड़ी। अब मेरे मन में कोई सन्देह न रहा। फिर भी समय और अवसर देखकर बहुत से पुराने लोगों से पूछताछ की। पता चला कि यह उन्हीं की तसवीर है।

""गुरुचरण हालदार मूलतः बाँकुड़ा के निवासी थे। सातवें या आठवें दर्जे तक पढ़े थे, लेकिन अपने को मैट्रिकुलेट कहते थे। कुछ दिनों तक अठारह रुपये की स्कूल-मास्टरी और बाद में अवला डॉक्टर के पास कंपाउन्डर का काम करने के बाद गुरुचरण भाग्य की खोज में सपरिवार कलकत्ता चले आये। जब गुरुचरण कलकत्ते की सड़कों पर भाग्य की लड़ाई लड़ रहे थे, उस समय दुनिया के अधिकांश हिस्से में भी धरती के भाग्य के लिए लड़ाई छिड़ गयी थी। जापान के आकस्मिक आक्रमण से पार्ल हार्बर हाथ से निकल गया, दक्षिण-पूर्व एशिया की अमरीकी नौसेना

चौकी पर तारांकित अमरीकी पताका के बदले सूर्य के देश की पताका फहराने लगी। असंख्य युद्ध पोतों से घिरे रहने के बावजूद अंग्रेज़ सिंगापुर के भविष्य के संबंध में सन्दिग्ध हो उठे। जापान के विजय-अभियान के साथ-साथ भारत में भी युद्ध का दवाव बढ़ने लगा। लाल चेहरा और सफेद देहवाले खाकी वर्दीधारी लोगों से पूरा मुल्क भर गया। बंगाल के गाँव और शहर 'मित्र वाहिनी' की सेना से भर गये। रात-दिन सिर के ऊपर रोंगटे खड़े करने वाले विमान उड़ने लगे, जब-तब साइरन की आवाज़ होने से लोग-बाग परेशान हो उठे।

साम्राज्यवादी सैन्य-वाहिनी की उदर-पूर्त्ति के लिए अँग्रेज़ सरकार ने ठेकेदारों से कहा, "हाट-बाजार-दुकान जहाँ भी धान-चावल मिले, इकट्ठा करो। भाग्यवश गुरुचरण को एक ठेकेदार के फ़र्म में नौकरी मिल गयी। धीरे-धीरे अपनी ईमानदारी का परिचय देकर वे ठेकेदार और सामरिक अधिकारी के प्रियपात्र बन बैठे। गुरुचरण प्रधान ठेकेदार के उपठेकेदार बन गये। डेढ़-दो रुपये का केड्स और रेडीमेड ट्विल की क़मीज उतार, गुड़चड़न हैलडार पैकर्ड कार पर सवार हो बंगाल के हाट-बाजार से चावल खरीदने लगे।

बंगाल और बंगालियों की जिन्दगी के चरम-बिन्दु पर पहुँचे अंधकार पूर्ण दिनों का लंबा इतिहास लिखा नहीं गया है हालाँकि पाँचवें दशक के मन्वन्तर की कहानी बंगाली भूले नहीं होंगे। लेकिन बंगाली गुरुचरण हालदार को भूल चुके हैं, उनका कीर्ति-कलाप बिसरा चुके हैं। गुरुचरण की कृपा से ज्याद नहीं, सिर्फ़ पच्चीस लाख निष्पाप बंगालियों को मृत्यु का वरण करना पड़ा था।

गुरुचरण के एक निकट आत्मीय से बहुत सारी रोमांचकारी कहानियाँ सुनने को मिलीं कि शुरू में पन्द्रह लाख रुपये का चेक पाकर जब गुरुचरण चहकते हुए घर आये तो पता चला उनकी पत्नी तीसरी मंज़िल से एकाएक गिरकर मौत के मुँह में समा चुकी है। पच्चीस लाख रुपये के रिजर्व बैंक के चेक की प्राप्ति का नतीजा और अधिक सुखकर

साबित हुआ। दोपहर की डाक से चैक आया था और रात में एक ही खाट पर सुलाकर गुरुचरण को अपनी दो सन्तानों को केवड़ातल्ला मसान में विसर्जित करना पड़ा था। सुना है, धर्म का नगाड़ा अपने आप बजता है, लेकिन इतने जोर से, इतनी जल्दी बजता है, इसका मुझे पता नहीं था।

गुरुचरण जैसे महापापी की जीवन-कथा लिखने को मैं जरा भी आग्रहशील नहीं था। सब हाँ, इतना आप जान लें कि पच्चीस लाख बंगालियों की हत्या करने के एवज में गुरुचरण का बैंक-बैलेन्स एक करोड़ से डेढ़ करोड़ हो गया था। और! और उन्हें मात्र एक पत्नी और पाँच सन्तानों से हाथ धोना पड़ा था। गुरुचरण जैसे सिद्धहस्त व्यवसायी के 'प्रोफिट एण्ड लॉस एकाउन्ट' में डेढ़ करोड़ रुपया लाभ ही दिखाया गया है।

गुरुचरण की कहानी का अन्त यहीं नहीं होता। बुढ़ौती में भी सींग निकल आया। लड़के की शादी के लिए लड़की देखने गये तो खुद ही उस लड़की से शादी कर ली। कुछ दिनों के बाद पुत्र वधू और दूसरी पत्नी के एक साथ लड़के पैदा हुए।

गुरुचरण का दूसरा लड़का बड़ा ही गुणी निकला। कहा जाता है, उनके पास एक हरम था और सूरज के अस्त होते ही वे किसी मर्द की संगति बरदाश्त नहीं कर पाते थे।

आश्रम में ऐसे गुरुचरण को देखकर मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही। सोचा, कलकत्ते के दंगे के बाद जनाब सुहारवर्दी के मन में जिस तरह विकार पैदा हुआ था, हमारे भक्त गुरुचरण में भी शायद उसी तरह के श्मशान-वैराग्य ने जन्म लिया है।

बाद में मालूम हुआ, नहीं; बात ऐसी नहीं है। मामला-मुकद्दमा बीमारी तथा सबसे बढ़कर लड़कों की उच्छृंखलता के कारण दस वर्ष के अन्तराल में गुरुचरण सारी संपत्ति हाथ से जाने की स्थिति में आ गये। बैंक का हिसाब-किताब बहुत दिनों से देखने की जरूरत न पड़ने

पर भी एकाएक ध्यान में आया कि बैंक में अब लाख रुपया भी नहीं है। और इसी समय कलकत्ते के सात मकान भी हाथ से निकल गये। शेर को लोहू का स्वाद मिल जाये तो निश्चिन्तता के साथ बैठ नहीं सकता। उसी तरह प्रचुरता के आनन्द में गुरुचरण भविष्य के बारे में सोच नहीं सके। 'ज़िन्दगी उनके लिए असहनीय जैसी हो गयी। लेकिन ठीक उसी समय बचपन के मित्र अमूल्य कुण्डु से मुलाकात हो गयी।

लेकिन यह अमूल्य कौन है?

····यह आज से बहुत दिन पहले की बात है। उन दिनों कलकत्ता भारत की राजधानी था। अविनाश कुण्डु अचानक गार्हस्थ्य जीवन, व्यवसाय वगैरह छोड़कर संन्यासी हो गये और 'अनादि अनन्त आश्रम' की स्थापना की। संन्यास-ग्रहण करने के बाद अविनाश कुण्डु गुरु जी महाराज के नाम से विख्यात हो गये। पच्चीस-तीस वर्षों तक आश्रम का संचालन करने के बाद गुरु जी महाराज परलोकवासी हुए लेकिन मरने के पहले ही अपने पुत्र अमूल्य को तख्त-ताऊस पर बिठा गये थे। अमूल्य भी गृहस्थ था और आज भी उसकी गृहस्थी है। अमूल्य कुण्डु की मृत्यु के बाद हमारे वर्त्तमान स्वामीजी ने जन्म लिया। अमूल्य कुण्डु के पुत्र जगदीश महाराज को दक्षिणा में खासी अच्छी रक़म प्राप्त होती है और उनके पार्टनर के रूप में हैं गुरुचरण हालदार। यह देखकर मुझे हँसने का मन करता था कि पूजा, धूप-धूना के अन्तराल में गुरुचरण और अमूल्य बड़े ही सलीके से अपने बीते दिनों को छुपाये हुए हैं।

बीच-बीच में मेरे मन में अजीब तरह का विचार आता था। सोचता, जब आम लोगों को उपदेश देने के लिए इतने नेता और साधु-संन्यासी नहीं थे, इतने मठ-आश्रम नहीं थे तो उस समय आम लोग आज की तुलना में अधिक ईमानदार, नेक औद विश्वासी क्यों थे? बीते दिनों में रामकृष्ण जो कुछ कर गये, आज एक लाख संन्यासी भी उसका सौवाँ हिस्सा कर पाते हैं? नहीं। पहले एक ही विद्यासागर ने अकेले संघर्ष कर समाज का जिस रूप में संस्कार किया था, आज लाखों समाजसेवी

सरकारी पैसा और संरक्षण पाने के बावजूद, समाज-संस्कार के मामले में उनकी तुलना में शतांश भी सफल क्यों नहीं हो पाते ? विपिन पाल, देशबंधु चित्तरंजन या नेताजी सुभाषचन्द्र के एक भाषण से अंग्रेज सरकार का दिमाग चकराने लगता था लेकिन दर्जनों पार्टियों के सैकड़ों नेताओं की रात-दिन के चौबीसों घण्टे की चिल्लाहट से सरकार तनिक मात्र विचलित क्यों नहीं होती ? बहुत दिनों के बाद स्वामीजी महाराज और गुरुचरण ने इन प्रश्नों का उत्तर स्पष्ट कर दिया था । मैं उन लोगों का कृतज्ञ हूँ ।

बौना होकर चांद छूने का प्रयास मैं नहीं करता था । दैनिक संवाद के पच्चीस रुपये के स्टाफ़ रिपोर्टर की सीमा क्या हो सकती है, इसका मुझे अहसास था । इसलिए अपनी सरहद के बाहर पैर रखने के पहले दसियों बार सोच लेता था, दो डग आगे बढ़ता तो भय-संकोच से तीन पग पीछे हट जाता था । लेकिन बीच-बीच में परिस्थिति मुझे बैशाख की आँधी की तरह उड़ाकर ले जाती थी और अपनी सरहद के बाहर लाकर पटक देती थी । एकाएक इस तथ्य का पता चलता कि अपरिचितों से परिचित हो गया हूँ, अजनबियों को पहचान लिया है । ऐसा न होता तो लॉर्ड गजानन को मैं पहचानता ही कैसे ? कैसे उनसे जान-पहचान और घनिष्ठता हुई होती ? बैशाख की प्रबल आँधी न आयी होती तो मैं मिसेज डैफोडिल चौधरी को पहचानता ? मिसेज मैमना मिटार को पहचानता ? लॉर्ड से उनकी और उनकी जैसी एक दर्जन सोसाइटी गर्ल की दोस्ती और मुहब्बत की कहानी से वाक़िफ़ होता ? दैनिक संवाद के प्रेस कार्ड को मैं प्रणाम करता हूँ, क्योंकि मेरे पास यह पारपत्र न होता तो कलकत्ते के इन महात्माओं के संपर्क में कभी नहीं आता । नहीं जान पाता कि जलदा पाड़ा गेम्स सैंचुरी के फ़ॉरेस्ट रेस्ट हाउस और कार्निगपांग के चायबगान के मैनेजर की कोठी में कितना

मज़ेदार खेल होता है। इसके अलावा पार्क स्ट्रीट और फ्री स्ट्रीट के दो फ़्लैटों की रास-लीला से परिचित हो पाता? नहीं, यह सब कुछ भी नहीं जान पाता। जो प्रेस कार्ड दूर के व्यक्ति को निकट ले आया है, अनजानों से जिसने जान-पहचान करायी है, रहस्य का जिसने उद्‌घाटन किया है, उसे मेरा प्रणाम।

राइटर्स विल्डिंग के चीफ़ मिनिस्टर के कमरे के सामने प्रेस-लाउंज में आमतौर से तीसरे पहर मजलिस जमती है। जो लोग सिर्फ़ स्टेनो-ग्राफ़री सीखकर रिपोर्टर बने हैं, उनकी अपराह्नकालीन खानदानी मजलिस से मुझे कोई दिलचस्पी नहीं थी, इसलिए सवेरे आकर मैं दोपहर में वापस चला जाता था। इसके अलावा 'जाग्रत', 'जययात्रा पत्रिका', 'डेली न्यूज' इत्यादि अखबारों की तरह हमारे यहाँ अधिक रिपोर्टर नहीं थे। हम तीन व्यक्ति ही सब कुछ करते थे। हर रोज़ तीसरे पहर ही मुझे मीटिंग, प्रेस-कांफ्रेन्स वग़ैरह के लिए भाग-दौड़ करनी पड़ती थी। उस दिन और-और दिनों की तरह दस बजे आकर ग्यारह बजे वापस जाने के समय प्रेस-लाउंज में भीड़-भाड़ देखकर खड़ा हो गया। भीड़ हटाकर देखा, एक लंबे-चौड़े आदमी के साथ हमारे एक बंगाली साहब रिपोर्टर की बहस चल रही है। दो-चार मिनटों के बाद समझ में आया कि यह बहस नहीं, दोनों में अंग्रेजियत की प्रतियोगिता चल रही है। मैं जब वहाँ पहुँचा तो सब कुछ समाप्त हो चुका था। अपरिचित सज्जन को बोलते हुए देखा, "फालतू बात है, आइ मिन डॉन्ट टेक नॉनसेन्स अंशु। दूसरे के पैसे से शराब पीकर, ऐंग्लो इंडियनों से फ्रेण्डशिपकर और माणिकतल्ला के दर्जी का सिला सूट पहनकर साहबीपना नहीं दिखा।"

अंशुदा कुछ कहने जा रहे थे लेकिन बाधा पाकर रुक गये।

हाथ-पैर नचाकर, तरह-तरह की मुख-मुद्रा बनाते हुए आखिर में सज्जन ने अपनी राय जाहिर की, "तुम लोगों के पुरखों की तक़दीर अच्छी है कि आज़ाद मुल्क में वास कर रहे हो। लॉर्ड लिनलिथगो या

वावेल का राज्य होता तो तुम लोगों के साहबीपन पर या तो ये खुद-कुशी कर लिये होते या फिर धरती फट गयी होती।"

मैं अब चुप नहीं रह सका; कहा, "यह भी तो हो सकता था कि ये लोग कोट-पैन्ट छोड़कर धोती-कुरता पहनना शुरू कर देते।"

सज्जन ने क्रोधभरी दृष्टि से मेरी ओर देखा। उसके बाद नजर हटाकर अंशुदा से पूछा, "हू इज दिस न्यू फ़ेस?"

भीड़ में से किसी एक व्यक्ति ने कहा, "यह बच्चू है, दैनिक संवाद का रिपोर्टर।"

सज्जन ने हाथ बढ़ाकर मुझसे हैण्डशेक किया। बोले, "तुम्हारा यह आइडिया शुरू में मेरे दिमाग में नहीं आया था। कंग्रेचुलेशन्स फ़ॉर योर नॉवेल आइडिया।"

मैंने बस इतना ही कहा, "थैंक्स।"

इसके बाद सबको संबोधित करते हुए उन्होंने कहा, "गुडबाइ ब्वॉयज। आइ हैव लंच एप्वाइन्टमेन्ट विथ ए स्वीट लेडी""अब देरी करने से काम नहीं चलेगा। गुड-बाइ।"

साहब की विदा-वाणी का किसी ने उत्तर नहीं दिया; अंशुदा ने बस इतना ही कहा, "गुड-बाइ लॉर्ड।"

मिस्टर अंशुदत्त कलकत्ते के 'डेली न्यूज' जैसे प्रख्यात अंग्रेज़ी अख़बार के चीफ़ रिपोर्टर थे। उनके साहबीपन पर कलकत्ते का संवाददाता-समाज मुग्ध था। मगर साहबीपन के खेल में आज अंशुदा को 'बोल्ड आउट' होते देखकर मैं आश्चर्य में खो गया। मन ही मन सोचा, यह महापुरुष कौन हैं जो 'डेलीन्यूज' के चीफ़ रिपोर्टर पर उनके साहबीपन के कारण आवाज कसकर चले गये?

बाद में सुनने को मिला, सज्जन का नाम है श्रीयुत बाबू गजानन चक्रवर्ती। अंग्रेज़ों के जमाने में बार के अगाध पैसे और उच्छृंखलता-व्यभिचार के बल पर उन्होंने यथेष्ट ख्याति अर्जित की थी। बड़े-बड़े अंग्रेज अधिकारियों के साथ गन्दगियों में लिप्त होकर उम्मीद की थी

ॉर्ड का खिताब मिलेगा, पर ऐसा नहीं हुआ। इसीलिए लोगों ने
क में नाम रख दिया है लॉर्ड गजानन। लॉर्ड गजानन ने मुझसे कहा
"मुझे लॉर्ड का खिताब देने के लिए वाइसराय ने अपनी अनुशंसा
टरी ऑफ़ स्टेट फ़ॉर इंडिया के पास भेज दी थी। सेक्रेटरी ऑफ़
ट ने फ़ाइल में एक लंबा-चौड़ा नोट लिखा था। आखिर में अपनी
ाय ज़ाहिर की थी कि मैं समझ नहीं पाता कि इनका मामला पहले ही
क्यों नहीं भेजा गया। फ़ाइल बैकिंघम पैलेस भेज दी गयी थी लेकिन
अचानक एम्परोर बीमार हो गये और उस बीच भारत भी आज़ाद हो
गया।"

कुछ दिनों बाद राइटर्स बिल्डिग के गलियारे में लॉर्ड गजानन से
आमने-सामने भेंट हो गयी। मैंने लॉर्ड को 'विश' करते हुए कहा, "गुड
मॉर्निंग लॉर्ड।"

लॉर्ड ने मुसकराहट बिखेरते हुए कहा, "गुड मॉर्निंग माइ ब्वॉय।"
लॉर्ड चले गये, मैं पीछे से उनकी ओर देखता रहा। लेकिन इसके
बाद जब लॉर्ड गजानन से मेरी मुलाकात हुई तो उन्होंने सिर्फ 'विश'
करके ही नहीं जाने दिया, मुझे पकड़कर अपने साथ ले गये। "कम
एलॉग माइ ब्वाय, बि माइ गेस्ट एट लंच टुडे।"

मैंने आपत्ति की परन्तु इसका कोई नतीजा नहीं निकला। लॉर्ड
साथ मुझे ब्यूक गाड़ी में बैठना पड़ा। डलहौजी स्क्वायर से चल
राजभवन के पूरब से होती हुई एसप्लेनेड पारकर लार्ड की गाड़ी
सड़क पर आयी उसे पार्क स्ट्रीट कहा जाता है। गाड़ी कैमक मो
पास आकर रुकी। लॉर्ड नीचे उतरे, मैं भी उतरा। लॉर्ड घर के
की ओर रवाना हुए, मैं भी उनके पीछे-पीछे चलने गया। लॉर्ड
के अन्दर गये, मैं भी गया। हम दोनों तीसरी माला में उतर गये
ने कॉलिंग बेल दबाकर अपने आगमन की सूचना दी। मैं चुपच
रहा।

छुटपन से ही पार्क स्ट्रीट का नाम सुनता आया हूँ। इ

भारत-सम्राट इंगलैण्ड-प्रभु और ईसामसीह के जन्म-दिन पर लाट साहब का भवन, मनुमेन्ट और इस इलाके की आलोक-सज्जा देखने आ चुका हूँ। विद्यार्थी-जीवन में मेम साहबों को देखने के लिए बीच-बीच में इस इलाके में आता था। याद है, मैंने अनिल, बारीन, श्यामल, वगैरह बचपन के दोस्तों के साथ चोरी-छिपके इसी पार्क स्ट्रीट में पहले-पहल सिगरेट का कश लिया था। अतीत के भारत-भाग्य विधाता अंग्रेज लोग ही इस अंचल में वास करते थे। मेम साहब से शादी कर कुछेक बंगाली भी सोलहो आना साहब बनने की उम्मीद में यहाँ वास करते थे। लार्ड माउन्टबेटन के शासन-काल में यद्यपि साड़ी-ब्लाउज पहने मेम साहबों का आविर्भाव हुआ लेकिन मेम साहबों के प्रति मेरे मन में अनन्त जिज्ञासा उमड़ती-घुमड़ती रहती थी। आये दिन मैं अक्सर यहाँ आता रहता था, कभी-कदा रेस्तरां के अन्दर भी क़दम रखता था, लेकिन फिर भी पार्क स्ट्रीट मुझे छलनामयी नारी की तरह रहस्यों से भरी लगती थी। लॉर्ड गजानन के साथ इस तीन मंजिले फ्लैट में खड़े होने पर मेरे मन में बीते दिनों की यह सब बात मँडराने लगी।

इस बीच लॉर्ड दो-तीन बार घण्टी बजा चुके थे।

मुझे विस्मय में डालते हुए एक महिला ने दरवाजा खोला, जो अपने शरीर पर एक बाथ-टावेल लपेटे थी। मेरी ओर से कटाक्षपूर्ण आँखों को हटाकर लॉर्ड की ओर देखा और मुसकराने लगी। कुछ समझ नहीं सका, तब हाँ, कहते सुना, "नॉटी ब्वाय! नहाने के बाद कपड़ा पहनने तक का वक़्त नहीं दिया, सिर्फ़ बेल पर बेल बजा रहे हो।" इसके बाद जरा अभिमान भरे स्वर में बोलीं, "देखो न, टावेल लपेटकर आना पड़ा।"

लॉर्ड बोले, "इंडिया जैसे ट्रॉपिकल कन्ट्री में दिस इज मोर दैन सफ़िसियेन्ट।"

खजराहो की प्रस्तर-मूर्ति की तरह लॉर्ड लेडी को बाहुओं में भरकर ड्राइंगरूम के अन्दर पहुँचे, लेकिन अभ्यर्थना के अभाव में मैं खड़ा ही

कि लॉर्ड का खिताब मिलेगा, पर ऐसा नहीं हुआ। इसीलिए लोगों ने मज़ाक में नाम रख दिया है लॉर्ड गजानन। लॉर्ड गजानन ने मुझसे कहा था, "मुझे लॉर्ड का खिताब देने के लिए वाइसराय ने अपनी अनुशंसा सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट फ़ॉर इंडिया के पास भेज दी थी। सेक्रेटरी ऑफ़ स्टेट ने फ़ाइल में एक लंबा-चौड़ा नोट लिखा था। आखिर में अपनी राय ज़ाहिर की थी कि मैं समझ नहीं पाता कि इनका मामला पहले ही क्यों नहीं भेजा गया। फ़ाइल बैंकिघम पैलेस भेज दी गयी थी लेकिन अचानक एम्परोर बीमार हो गये और उस बीच भारत भी आज़ाद हो गया।"

कुछ दिनों बाद राइटर्स बिल्डिंग के गलियारे में लॉर्ड गजानन से आमने-सामने भेंट हो गयी। मैंने लॉर्ड को 'विश' करते हुए कहा, "गुड मॉर्निंग लॉर्ड।"

लॉर्ड ने मुसकराहट बिखेरते हुए कहा, "गुड मॉर्निंग माइ ब्वॉय।"

लॉर्ड चले गये, मैं पीछे से उनकी ओर देखता रहा। लेकिन इसके बाद जब लॉर्ड गजानन से मेरी मुलाकात हुई तो उन्होंने सिर्फ 'विश' करके ही नहीं जाने दिया, मुझे पकड़कर अपने साथ ले गये। "कम एलॉंग माइ ब्वाय, बि माइ गेस्ट एट लंच टुडे।"

मैंने आपत्ति की परन्तु इसका कोई नतीजा नहीं निकला। लॉर्ड के साथ मुझे ब्यूक गाड़ी में बैठना पड़ा। डलहौजी स्ववायर से चलकर राजभवन के पूरब से होती हुई एसप्लेनेड पारकर लार्ड की गाड़ी जिस सड़क पर आयी उसे पार्क स्ट्रीट कहा जाता है। गाड़ी कैमक मोड़ के पास आकर रुकी। लॉर्ड नीचे उतरे, मैं भी उतरा। लॉर्ड घर के अन्दर की ओर रवाना हुए, मैं भी उनके पीछे-पीछे चलने गया। लॉर्ड लिफ़्ट के अन्दर गये, मैं भी गया। हम दोनों तीसरी माला में उतर गये। लॉर्ड ने कॉलिंग बेल दबाकर अपने आगमन की सूचना दी। मैं चुपचाप खड़ा रहा।

छुटपन से ही पार्क स्ट्रीट का नाम सुनता आया हूँ। इसके पहले

भारत-सम्राट इंगलैण्ड-प्रभु और ईसामसीह के जन्म-दिन पर लाट साहब का भवन, मनुमेन्ट और इस इलाके की आलोक-सज्जा देखने आ चुका हूँ। विद्यार्थी-जीवन में मेम साहबों को देखने के लिए बीच-बीच में इस इलाके में आता था। याद है, मैंने अनिल, बारीन, श्यामल, वगैरह बचपन के दोस्तों के साथ चोरी-छिपके इसी पार्क स्ट्रीट में पहले-पहल सिगरेट का कश लिया था। अतीत के भारत-भाग्य विधाता अँग्रेज लोग ही इस अंचल में वास करते थे। मेम साहब से शादी कर कुछेक बंगाली भी सोलहों आना साहब बनने की उम्मीद में यहाँ वास करते थे। लार्ड माउन्टबेटन के शासन-काल में यद्यपि साड़ी-ब्लाउज पहने मेम साहबों का आविर्भाव हुआ लेकिन मेम साहबों के प्रति मेरे मन में अनन्त जिज्ञासा उमड़ती-घुमड़ती रहती थी। आये दिन मैं अक्सर यहाँ आता रहता था, कभी-कदा रेस्तराँ के अन्दर भी क़दम रखता था, लेकिन फिर भी पार्क स्ट्रीट मुझे छलनामयी नारी की तरह रहस्यों से भरी लगती थी। लॉर्ड गजानन के साथ इस तीन मंजिले फ्लैट में खड़े होने पर मेरे मन में बीते दिनों की यह सब बात मँडराने लगी।

इस बीच लॉर्ड दो-तीन बार घण्टी बजा चुके थे।

मुझे विस्मय में डालते हुए एक महिला ने दरवाजा खोला, जो [illegible] शरीर पर एक बाथ-टावेल लपेटे थी। मेरी ओर से कटाक्षपूर्ण आँखों को हटाकर लॉर्ड की ओर देखा और मुसकराने लगीं। कुछ [illegible] नहीं सका, तब हाँ, कहते सुना, "नॉटी ब्वाय! नहाने के बाद कपड़ा पहनने तक का वक़्त नहीं दिया, सिर्फ़ बेल पर बेल बजा रहे हो।" [illegible] जरा अभिमान भरे स्वर में बोलीं, "देखो न, [illegible] पड़ा।"

लॉर्ड बोले, "इंडिया जैसे ट्रॉपिकल [illegible] सफ़िसियेन्ट।"

खजराहो की प्रस्तर-मूर्ति की [illegible] ड्राइंगरूम के अन्दर पहुँचे, लेकिन [illegible]

रहा। कमरे के बीचोबीच पहुँचने पर लॉर्ड के ध्यान में आया कि मैं उनकी बग़ल में नहीं हूँ। पीछे मुड़कर पुकारा, "कम एलांग बच्चू।" लेडी को भी चेतना आयी, दरवाज़े पर आकर मेरा स्वागत किया, "प्लीज डु कम इन।"

मैं भीतर गया। लॉर्ड ने परिचय कराया, "स्वीट लेडी, हियर इज ए यंग प्रेस-फ्रेन्ड ऑफ़ माइन।"

मेरी ओर मुखातिब होकर बोले, "बच्चू, मीट माइ स्वीट लेडी डियर डार्लिंग पैमेला मिटार।"

पैमेला मिटार ने बायें हाथ से तौलिया सँभालकर मुझसे दाहिना हाथ मिलाया। "वेरी ग्लैड टु सी यू।"

'एक्सक्यूज मी,' कहकर पैमेला मिटार साड़ी पहनने अन्दर चली गयीं और मैं लॉर्ड की बग़ल में बैठ गया। लार्ड ने मेरे कान के सामने फुसफुसाते हुए पूछा, "हाउ डु यू लाइक माइ च्वायस्?

मैंने कहा, "सिर्फ़ पोशाक़ ही नहीं, बांधवी के चुनाव के मामले में भी आप में रुचि-बोध है और मैं इसे सानन्द स्वीकार करता हूँ।"

गर्व की हँसी हँसते हुए लॉर्ड ने अपने टाई को ज़रा हिला-डुला दिया। अपने आप कहने लगा, "सिर्फ़ पैमेला ही क्यों, मेरी कोई भी च्वायस् बुरी नहीं है।

आधुनिक युग के रोमान्टिक युगल मुझे अच्छे ही लगे लेकिन मन में एक सवाल बार-बार पैदा होने लगा। लॉर्ड की उम्र पचास के खाने में होगी और पैमेला तो युवती है। औरतों की उम्र जानने की कला मुझे मालूम नहीं, फिर भी अच्छी तरह देखने के बाद लगा कि इनकी उम्र पच्चीस-तीस से ज़्यादा नहीं है। सोचने लगा, "इन दोनों के मन को फागुनी बयार कैसे छू गयी?

कुछ देर बाद पैमेला मिटार आयीं। देह पर हल्के रंग का एक प्रिण्टेड वाउइल, शैम्पू किये हुए छोटे-छोटे बाल, भौंह और आँखों में शायद हल्की कालिमा की छाप। साज-सज्जा में कोई ख़ासियत नहीं

थी मगर कुल मिलाकर बड़ी ही खूबसूरत दीख रही थी। लॉर्ड की क्यों, मेरी आँखों को भी मोह लिया। लगा, रूप की हाट सजानेवाली मेरे सामने आयी हैं। लार्ड उठकर खड़े हो गये और दाहिना हाथ आगे बढ़ा दिया, पैमेला मिटार ने भी अपना दाहिना हाथ आगे बढ़ा दिया। दोनों हाथ परस्पर मिले और उन्होंने बॉल डांस का एक चक्कर लगाया। आखिर में पैमेला के थामे हाथ से उसके जिस्म को अपनी ओर खींच लिया और अपना जिस्म और मुखड़ा आगे बढ़ा दिया। लार्ड ने मेरी ओर मुखातिब होकर कहा, "प्लीज फॉर के मोमेन्ट हम लोगों की ओर नहीं ताको।"

मैंने अपना चेहरा घुमा लिया। दो-तीन मिनट बाद लार्ड ने घोषणा की, "नो मोर वैन नाउ। अब तुम हम लोगों की ओर देख सकते हो।"

प्रमथ चौधरी ने लिखा है, "पाश्चात्यवासी बुढ़ापे में बचपना करते हैं और हम लोग बचपन में बुजुर्ग जैसा भाव प्रदर्शित करते हैं। आज बुढ़ापे में लॉर्ड की हरकत देखकर मुझे सन्देह न रहा कि वे सचमुच साहब नहीं हैं।

बहरहाल चेहरा घुमाने पर लॉर्ड को मैंने एकाकी ही पाया। जरा ध्यान से देखा तो पाया कि पैमेला मिटार कमरे में कोने में पेट जैसे मोटे जग में बियर ढाल रही है। दोनों हाथों में बियर के दो जग थामे पैमेला मिटार आयीं और हमें ऑफ़र किया। धन्यवाद देते हुए मैंने ना कहा। लॉर्ड ने सहर्ष स्वीकार लिया। मेरी अस्वीकृति पर दोनों को आश्चर्य हुआ, एक-दूसरे के चेहरे की ओर देखने लगे। लॉर्ड बोले, "बियर क्यों नहीं पीना चाहते? टिस इज नॉट ड्रिंक एटऑल, सिम्पल एपिटाइजर।"

मैंने कहा, "मुझे मालूम है, मगर एक्सक्यूज मी, आइ डॉन्ट इवन टेक बियर।"

अब उन्होंने दबाव नहीं डाला मगर आतियेया के अनुरोध पर मैं एक गिलास लेमन स्क्वैश सानन्द स्वीकार कर उन लोगों का साथ देने

पर मैंने भी सिगरेट
। वाद में लंच लिया, उन लोगों के अनुरोध
आखिर में लार्ड और पैमेला मिटार को एकान्त में छोड़कर वहाँ
विदा हो गया।

बाद में लॉर्ड ने मुझसे कहा था, "पैमेला को देखकर तुम पर
शी छा गयी। लेकिन उसे तो खूबसूरती की राख ही कहा जायेगा।
सी दिन तुम्हें डैफोडिल के पास ले चलूँगा. चन्दना के पास ले चलूँगा।
बना खूबसूरती किसे कहते हैं। पुरुष क्यों नारी के मोह में फँस जाता
, उन्हें देखने पर यह बात तुम्हारी समझ में आयेगी।"

पुरुष क्यों नारी के मोह में फँस जाता है, यह जानने का कौतूहल
रहने पर भी मैं इसके लिए उत्साही नहीं था। लेकिन लॉर्ड को देखने
और उनसे घुलने-मिलने पर उन्हें जानने का मुझमें असीम कौतूहल
और उत्साह पैदा हुए थे। उनकी समृद्धि की नुमाइश, नारी-प्रेम की
नग्न अभिव्यक्ति, शराब की तीव्र आसक्ति, समाज के ऊँचे तबके में
बेरोक-टोक पैठ और सरकारी विभाग में रौब-दबदबा मुझे आश्चर्य में
डाल देते, सोचने को विवश करते। लॉर्ड गजानन को मैं अपने बीच
और आसपास पाता लेकिन अपने आदमी के तौर पर नहीं। उन्हें
पकड़ना चाहता तो वे हाथ से फिसलकर निकल जाते। बहुत दिनों के
बाद ही सही लेकिन ऐसा सुयोग आया था; उस दिन को मुझे चाह नहीं
करनी पड़ी थी, लॉर्ड गजानन ने स्वयं की आत्मकथा बतायी थी....

....लॉर्ड आकंठ शराब पीकर धुत्त हो गये। मैंने अखरोट, सैण्डविच
और टमाटर जूस से अपना पेट भर लिया। रात भी काफ़ी गहरा चुकी
थी, लॉर्ड हिले-डुले लेकिन उठकर खड़े होने का कोई भाव नहीं दिखाया।
दूर की मेज पर दो-चार फिरंगी महिलाएँ गाहक की उम्मीद में बैठी
थीं, आखिर में वे भी बार छोड़कर चली गयीं। एक बत्ती के अलावा
बाक़ी सारी बत्तियों को बुझाकर वेटर और बेयरा होटल के अन्दरूनी
हिस्से में चल गये।

"उठिएगा नहीं?" मैंने आहिस्ता से पूछा।

लॉर्ड ने जवाब नहीं दिया। मैंने दुबारा कहा, "रात काफी हो चुकी है, घर नहीं जाइएगा ?"

उन्होंने कोई जवाब नहीं दिया। पूछा, "आज सात अगस्त है न ?"

प्रश्न सुनकर समझ गया कि लार्ड ने यद्यपि शराब पी है मगर धुत्त नहीं हैं वरना सही तारीख कैसे बताते ? मैंने छोटा-सा उत्तर दिया, "हाँ, आज सात अगस्त ही है।"

लार्ड अपने खयाल में डूबे ह्विस्की के खाली गिलास को नचा रहे थे। लॉर्ड के चेहरे की ओर देखने पर लगा, वे किसी सुदूर अतीत के गलियारे में चहल-कदमी कर रहे हैं। सोचा, पूछूँ कि क्या सोच रहे हैं मगर मैंने ऐसा नहीं किया। इसी तरह काफ़ी वक़्त गुज़र गया। एकाएक देखा, काँच की मेज पर दो बूँद पानी ढुलक कर गिर पड़ा। शुरू में सोचा, गिलास से ह्विस्की की आखिरी दो बूँदें गिरी हैं, लेकिन गौर से देखने पर पता चला कि यह ह्विस्की नहीं, लॉर्ड की आँख के आँसू हैं। मैं अवाक् हो गया। लार्ड गजानन की आँखों में आँसू देखूंगा, यह मैंने पिछले दिनों सोचा तक न था और आज इस पर यक़ीन करने में मुझे कष्ट का अनुभव हो रहा है। मेरे मन में प्रश्न-उत्तर का खेल चलने लगा कि तभी लार्ड के आँसू फिर मेज़ पर टपक पड़े।

"आप रो रहे हैं ?"

लार्ड हँस दिये; बोले, "रो रहा था, यही न ? आज एकाएक चालीस साल पहले की कहानी याद आ गयी कि ठीक चालीस साल पहले सात अगस्त को ही मेरे निर्दोष पिताजी को आठ साल की सश्रम कारावास की सजा मिली थी। झूठा इल्ज़ाम लगाकर कुछेक बदमाशों ने उनकी लाख रुपये से अधिक की जायदाद लूट ली थी और उन्हे समाज के सामने घोर अपमानित होना पड़ा था।"

लार्ड ने मेरी नज़र बचाकर एक लंबी साँस ली; बोले, "बच्चू, मुझे देखकर मेरे पिता की तसवीर का तुम अन्दाज नहीं लगा सकते।

मेरी तरह लंपट, बदमाश, दुश्चरित्र, शराबी और धोखेबाज़ नहीं थे। सही अर्थों में एक मानव थे।"

सिर उठाकर मेरी ओर देखा, शायद मेरी आँखों में उन्हें अपने ीवन की प्रतिकृति दिखायी पड़ी। बोले, "जानते हो भाई, मेरे उस रह के पिताजी जेल गये मगर उन्हें जेल में रहना नहीं पड़ा। छुपाकर अपने जूते में पोटासियम साइनाइड ले गये थे। जेल के अन्दर हुँचते ही ग़ुसलखाने के अन्दर चले गये और वहीं पोटासियम साइनाइड ाकर अपमान के हाथ से हमेशा के लिए छुटकारा पा लिया। चालीस ाल पहले इसी तरह की एक सात अगस्त की शाम दमदम जेल में मेरे ीवन नाटक के एक चरम अध्याय की समाप्ति हुई थी।"

""गजानन के पिता श्रीधर चक्रवर्त्ती विलायत से पढ़कर लौटे हुए इंजीनियर थे। विलायत में ही कलकत्ते के एक विख्यात साहबी कंपनी के लिए उनकी नियुक्ति हो गयी। पाँचेक साल काम करने के बाद श्रीधर बाबू ने महसूस किया कि अँग्रेज़ों के अधीन आत्म-सम्मान को बरक़रार रखते हुए नौकरी करना असंभव है। तत्कालीन साढ़े आठ सौ रुपये की नौकरी छोड़कर उन्होंने अपने कुछ मित्रों के साथ एक कारख़ाना खोला। दस-बारह साल के दरमियान तीन पार्टनरों को पैंतीस लाख रुपये की बचत हुई। श्रीधर चक्रवर्त्ती ने अमहर्स्ट स्ट्रीट में विशाल मक़ान ख़रीदा, बेहला में बग़ीचे से संलग्न मकान और वर्धमान कटोया में जगह-ज़मीन। इसके अलावा इंपीरियल बैंक में बेहिसाब रुपया-पैसा जमा किया। पुत्र गजानन के जन्म-दिन पर हज़ारों सगे-संबंधी, दोस्त-मित्रों की दावत के अलावा अमहर्स्ट के फ़ुटपाथ पर दिन-भर भोज चलता रहा।

श्रीधर चक्रवर्त्ती के दो पार्टनर उनकी तरह जीवन जीनेवाले व्यक्ति नहीं थे। 'खाओ, पियो, मौज करो' सिद्धान्त का पालन करते हुए ज़िन्दगी जीते थे, जितना कमाते थे उससे अधिक खर्च करते थे। इसलिए श्रीधर चक्रवर्त्ती की संपन्नता और प्रचुरता उनसे बरदाश्त नहीं हुई।

पार्टनरों के अनुरोध पर श्रीधर बाबू भी एक महिला के घर पर बीच-बीच में अड्डेबाजी करने जाते थे। श्रीधर बाबू इस महिला को एक पार्टनर की आत्मीयता के रूप में ही जानते थे। इसलिए पार्टनरों के साथ उनके घर पर जाना निन्दा का कारण हो सकता है, श्रीधर चक्रवर्ती के दिमाग़ में यह बात एक क्षण के लिए भी नहीं आयी थी।

एक दिन दफ़्तर में बैठकर श्रीधर चक्रवर्ती जब काम कर रहे थे एकाएक उन्हें कोर्ट का सम्मन मिला और वे अचकचा उठे। पार्टनर दौलतराम की आत्मीय महिला उनकी स्त्री है? भरण-पोषण का दावा करते हुए मुकद्दमा दायर कर दिया है? जायदाद के आधे हिस्से पर दावा किया है? हाथ की कलम फर्श पर गिर पड़ी, दिमाग चकराने लगा मगर किसी तरह दीवार थाम कर अपने को सँभाल लिया। थोड़ी देर बाद दौलतराम के घर पर गये, भेंट नहीं हुई। दूसरा पार्टनर भी लापता था।

धर्म के नाम पर शपथ खाकर दौलतराम की आत्मीया कोर्ट के कठघरे में खड़ी होकर बोली, "श्रीधर चक्रवर्ती ने मुझसे शादी की है और अब छोड़ दिया है।" उसके बाद महिला ने अपनी लांछना का इतिहास सुनाया।

दौलतराम, दूसरे पार्टनर, कारखाने के कुछ कर्मचारी के अलावा एक पुरोहित ने भी कहा कि श्रीधर चक्रवर्ती इस महिला के पति हैं। पुरोहित ने कहा कि शालिग्राम शिला को साक्षी बनाकर हिन्दू मत के अनुसार उन्होंने ही इस शादी में पुरोहित का काम किया था।

शर्म और नफरत से श्रीधर बाबू ने अपने किसी सगे-संबंधी या मित्र को अपनी ओर से गवाही देने नहीं बुलाया था लेकिन फिर भी काफी लोग आये थे।

न्यायाधीश ने श्रीधर चक्रवर्ती को धोखाधड़ी और विवाहिता पत्नी के साथ अमर्यादित व्यवहार करने के कारण आठ साल की सश्रम कारावास की सजा दी। अमहर्स्ट स्ट्रीट के मक़ान और इंपीरियल बैंक

के श्रीधर वावू के एकाउन्ट का तीन लाख रुपया भी कोर्ट के आदेश पर इस सिंधी महिला को मिला।

वेहला का वग़ीचावाला मकान और वर्धमान-कटोया की जमीन-जगह के मालिक श्रीधर वावू नहीं, उनकी पत्नी थीं। वैंक में दो लाख रुपया नावालिग गजानन और उनकी माँ के नाम जमा था।

लॉर्ड वोले, "पिताजी की मृत्यु के वाद माँ लगभग डेढ़ साल तक जिन्दा रहीं। उसके वाद मेरी एक मौसी मेरी देखभाल करने वेहला आयीं। उस समय मेरी उम्र तेरह या चौदह साल थी। इस कम उम्र में ही मेरे दिमाग़ में वुद्धि आयी। स्कूल नागा कर वुरे लड़कों के साथ तरह-तरह की जगहों में चक्कर लगाना शुरू कर दिया।"

आँखों को सिकोड़कर लॉर्ड ने मुझसे कहा, "जानते हो वच्चू, उतनी कम उम्र ही में मैंने तय किया कि मैं वुरा से वुरा वनूँगा, अव्वल दर्जे का शैतान वनूँगा लेकिन समाज के ऊँचे तवके के वीच सीना तानकर चलूँगा।"

मात्र सोलह वर्ष की उम्र में गजानन ने कालीघाट के वदनाम मुहल्ले में चक्कर लगाना शुरू कर दिया। एकाध साल वाद शराव भी पीना शुरू कर दिया। शुरू में शाम के वाद एक-दो घण्टा गुज़ार कर लौट जाते थे लेकिन कुछ दिन वाद अधिक आनन्द के लोभ में अधिक पैसा चुकाकर वीच-वीच में रात वहीं गुज़ारने लगे। अठारह वर्ष के हो जाने पर गजानन चक्रवर्त्ती ने विधवा मौसी को तीर्थाटन करने भेज दिया और वैंक का चेक काटने लगे। वेहला के मकान को अपने कब्जे में ही रखा लेकिन कटोया की सारी जगह-ज़मीन वेच दी। जव गजानन वीस-वाईस साल के हुए उसी समय उनकी ख्याति कलकत्ते के सर्वोच्च तवके के लोगों के वीच फैल चुकी थी। होटल-वार और नृत्य की महफिल में गजानन के अलावा सवको अँधेरा ही अँधेरा दीखता था। सर स्टिफ़न और सर जेम्स स्विफ़्ली की दोनों लड़कियाँ गजानन के नाम पर मरती थीं। गवर्नमेन्ट हाउस के 'न्यू इयर्स इव' पर आयोजित

नृत्य-समारोह में मिस लॉरेन्स लॉर्ड के साथ रात-भर नाचती रही। वाइसराय स्वयं उस रात आये थे, उन्होंने आगे बढ़कर लॉर्ड को बधाई दी थी।

लॉर्ड ने मुझसे कहा, "इन महारथियों से हेल-मेल रहने के कारण मेरा व्यवसाय दिन-दिन तरक्की करता गया। सर स्टिफ़ेन लॉरेन्स ने मुझे बुलवाकर डेढ़ करोड़ रुपये का एक ठेका दिया। मैंने स्वयं कुछ भी नहीं किया, ऑल इंडिया लोटा-कंबल कंपनी को ठेका दे दिया। घर बैठे-बैठे मुझे पच्चीस लाख रुपया मिल गया। हैमिल्टन दुकान से एक डायमण्ड नेकलेस खरीद कर मिस डरोथी लॉरेन्स के गले में पहना दिया, उसका पैतृक ऋण चुका देने के खयाल से। जानते हो बच्चू, डरोथी ने चिल्ला-चिल्लाकर तमाम अजोपुर मुहल्ले में इस बात की घोषणा की थी।"

वाक्य-प्रवाह में बाधा पहुँचाते हुए मैंने कहा, "आपने क्या किया ?"

लॉर्ड हँसकर बोले, "डरोथी जानती थी कि मैं उससे शादी करूँगा और मेरे इस वादे पर वह अपने आपको नि:स्व कर सब कुछ सौंप देती थी।"

"शादी आपने की थी ?"

"पागल हुए हो", लॉर्ड चालाकी की हँसी हँसते हुए बोले। "मुझे यह मालूम था कि सर स्टिफ़ेन दो साल के दरमियान अपने मुल्क लौटकर चले जायेंगे। इसीलिए मैंने डरोथी से कहा था, हिन्दू मत का कहना है कम से कम पाँच वर्ष हिन्दू लड़का किसी दूसरे धर्म की लड़की के निकट संपर्क में रहने के बाद ही उससे शादी कर सकता है। डरोथी मेरी बात पर यक़ीन कर पाँच वर्ष तक मेरे निकटतम संपर्क में आने में आनाकानी नहीं करती और यह बंगाली की औलाद उसका पूरे तौर पर सदुपयोग करता।

"जानते हो बच्चू, कहने में शर्म लगती है लेकिन फिर भी स्वीकार करता हूँ कि सैकड़ों लड़कियों के साथ आँखमिचौनी खेल चुका हूँ, उन्हें

उपहार दिया है लेकिन मुझे दुश्चरित्र कहे, ऐसा साहस किसी को नहीं है।"

ज़रा चुप रहे उसके बाद फिर अपनी जीवन-गाथा सुनाना शुरू कर दिया।

"मेरे पिताजी को शराब का स्वाद मालूम नहीं था, अपनी स्त्री के अलावा किसी दूसरी औरत को उन्होंने छुआ तक नहीं, लेकिन उन्हें बदनाम होना पड़ा था। मैं सबके सामने शराब पीता हूँ, सबको मालूम है कि बार से लड़की उठाकर अपने महीने-भर के लिए रिजर्व पार्क-स्ट्रीट के कमरे में ले जाता हूँ। मैं दुनिया का हर तरह का काम करता हूँ लेकिन कोई कुछ कहने का साहस नहीं कर पाता। कहेगा ही कौन ? मैं बहुत से लोगों के साथ मौज-मस्ती मनाता हूँ, बहुतों की मौज-मस्ती की रसद का इन्तज़ाम करता हूँ। पार्क स्ट्रीट के मेरे फ्लैट में बहुत सारे प्रातः स्मरणीय महापुरुषों का आगमन होता है, इसलिए मुझे पकड़ेगा ही कौन ?"

बाद में पता चला, लॉर्ड का अपना कोई व्यावसायिक प्रतिष्ठान नहीं है, फिर भी व्यावसायिक जगत के वे एक आदरणीय व्यक्ति हैं। अपना शेयर नहीं है किन्तु दूसरे के नाम बेनामी शेयर धारणकर अनगिन कंपनी के 'बोर्ड ऑफ़ डायरेक्टर्स' के सदस्य बने हुए हैं। अपना कारखाना नहीं है लेकिन उद्योगपति हैं; अपने व्यवसाय-वाणिज्य की खोज-खबर नहीं रखते लेकिन ढेर सारे ठेके और परमिट मिल जाते हैं।

एक बार मैंने पूछा था, "यह तो बताइये लॉर्ड, यह सब कैसे संभव हो पाता है ?"

लॉर्ड ने मुसकराते हुए कहा था, "हिन्दुस्तान 'स्नेक चार्मर' और 'रोपट्रिक्स' का मुल्क है और उसी मुल्क की संतान होने के नाते आफ़िसरों को मैं 'चार्म' नहीं कर पाऊँगा ? तब क्या कहते हो ! अजी ओ नवजवान, सुन लो ! डैफेडिल के साथ चाय पीना होता है तो एक सौ रुपया देना पड़ता है, लंच में दो सौ और लंच खाने की फ़ीस तीन सौ।

उसके बाद वाले घण्टे के लिए नक़द एक हज़ार। और, इस तरह उर्वशी मेरी बाँदी है।"

आख़िर के कुछ शब्द कहते वक्त लॉर्ड के दाँत बज उठे।

पार्क स्ट्रीट के मोड़ पर अवस्थित डैफोडिल के फ्लैट के अन्दर जा चुका हूँ। उन्मत्त पद्मा नदी जैसे उसके यौवन में जलसाघर का उभार देखने को मिला था। यह सही है कि उसमें सौंदर्य है लेकिन सौंदर्य की अपेक्षा उसका जिस्म ही अधिक आकर्षक है; और उस जिस्म में है यौवन के उभार का आमंत्रण। जानता हूँ, उस आमंत्रण के बुलावे में शरीक होना मामूली बात नहीं है—खासकर वह आमंत्रण यदि लार्ड के आदेश और स्वार्थ के कारण अयाचित ही प्राप्त हो जाये।

बहुत दिनों तक कितनी ही जगह तरह-तरह के विचित्र माहौल में लॉर्ड को देख चुका हूँ—उन्मत्त प्रमत्त अवस्था में, डैफोडिल के बाहुपाश में, पैमेला के पास अपने आपको लुटाते। लेकिन चाहे किसी भी हालत में क्यों न हों, अपना व्यतीत भूल नहीं पाते हैं, अपने बाप की बात और माँ की याद बिसरा नहीं पाते हैं। दुनिया के तमाम स्थानों में अनाचार, अविचार, व्यभिचार करते हैं लेकिन बेहला के बग़ीचेवाले घर में नहीं। कहते हैं, यह मकान नहीं, मन्दिर है। इस मन्दिर में मेरे माँ-बाप की प्रतिमा स्थापित है। शराब पीकर होटल में अनाचार कर सकता हूँ, संभ्रांत अतिथियों को गाली-गलौज कर सकता हूँ, बेयरा लोगों के कपड़े पर कै कर सकता हूँ लेकिन बेहला के मकान के अन्दर पैर रखते ही मैं अपनी माँ का मुन्ना बन जाता हूँ। लगता है, बाबूजी चहल-क़दमी कर रहे हैं, माँ पूजा कर रही हैं; लहमे-भर में मैं अपने माँ-बाप के द्वारा दी गयी सत्ता में वापस आ जाता हूँ।"

अमहर्स्ट वाला मकान लॉर्ड ने बाद में काफ़ी रुपया लगाकर ख़रीद लिया था। उसमें खुद नहीं रहते हैं, दान कर दिया है।

लॉर्ड को देखकर ऐसा नहीं लगता कि उनमें कोई स्नेह-प्यार, माया-ममता या दुर्बलता है। औरत और शराब के प्रति आसक्ति है,

कन दुर्वलता नहीं। मैं जान गया था कि लॉर्ड में दो-चार वहुत ब्रड़ी
ड़ी कमज़ोरियाँ हैं। अनाथ वच्चे को देखते तो लॉर्ड स्वयं को संयत
हीं रख पाते थे, आवश्यकता से अधिक देकर उनकी सहायता करते
। और, अगर उन्हें मालूम हो जाता कि कोई वेकसूर मुक़द्दमे में फँसा
दिया गया है तो लॉर्ड सब कुछ विसरा कर उसकी मदद करने लगते
थे।

राइटर्स विल्डिग के प्रेस-लाउंज में अपने अधिकांश सहकर्मियों को लॉर्ड की खुलकर निन्दा करते देख चुका हूँ, लेकिन किसी को भी उनकी व्यतीत जीवन-कथा की भूमिका की समग्रता में उनके जीवन के विषय में सोचते नहीं देखा है। रेत से भरे फल्गु के टूटे किनारे को देखकर मैं वापस नहीं आ सका था, थोड़ी देर तक प्रतीक्षा की थी, कोशिश की थी और मुझे शरावी-दुश्चरित्र लॉर्ड की जीवन-नदी की प्रशान्त धारा का पता चल गया था।

अनगिनत रंगों के पैवन्द लगी फकीर के अल्खालुक़ की जैसी मेरी विचित्रताओं से भरी ज़िन्दगी मज़े में गुज़र रही थी। दूसरों के सुख-दुख की अनुभूतियों से स्वयं को परिपूर्णकर लिया था। लेकिन दूर की दृष्टि को जव सहेजकर घर ले आता, जव अपने लोगों को अच्छी तर देखता तो मेरा खुशियों से भरा मन उदास हो जाता। दैनिक संवा कार्यालय में जो लोग मेरे आसपास थे, सुख-दुख में जिनसे रात-दि मिलता-जुलता था, उनके अभिशापित जीवन की उष्ण उसाँस के स्प से मेरा कलेजा छलनी-छलनी हो जाता था, उनकी खाँसी की आव मेरे अन्दर वादलों की गड़गड़ाहट की तरह वजने लगती थी।

वाईस वर्ष से अखवार में काम करने के वाद भी रजतदा को ह दफ़्तर में पैंतीस रुपये तीन किस्तों में मिलते थे। सी० आर० दास भाषण सुनने के वाद वे दुवारा क्लास-रूम के अन्दर नहीं गये, स्व

पार्टी का झण्डा ले निकल पड़े थे। कुछ साल बाद एक स्वदेशी विद्यालय में शिक्षक का काम करने लगे। आखिर में बन गये पत्रकार। बाईस वर्ष पहले 'साप्ताहिक जययात्रा' के जिस यात्रा-पथ पर निकले थे, उसका आखिरी पड़ाव किसी दिन नहीं आयेगा। रजतदा तेरह समाचार-पत्रों के जन्म-मरण के साक्षी हैं। बच्चों की मृत्यु के बनिस्बत समाचार-पत्रों की मृत्यु की संख्या ही हमारे देश में अधिक है। समाचार-पत्रों की मृत्यु के साथ ही संवाददाताओं की मृत्यु हो जाती तो बहुत सारी समस्याओं का समाधान हो जाता, लेकिन ऐसा होता नहीं, दमा, पेचिश और यक्ष्मा की बीमारी से पीड़ित हो ये लोग जीवन-मृत्यु के झूले पर झूलते रहते हैं। शुरू-शुरू में जब दैनिक संवाद में आया था तो रजतदा की साँस की तकलीफ़ और जानलेवा खाँसी देखकर मैं डर जाता था, लेकिन बाद में मेरे लिए यह चीज सहनीय हो गयी। रजतदा को खाँसी का दौरा आता तो मैं उनका सिर थाम लेता था। बाद में कै करने पर जब उन्हें शान्ति मिलती तो एक गिलास पानी पिलाकर कुरसी पर चित लेटा देता था।

वे तक़रीबन अठारह बरसों से पीड़ित थे मगर इलाज कराने का कभी मौक़ा नहीं मिला। विश्वास तो था नहीं मगर जब पत्नी ने दबाव डाला तो गण्डा-ताबीज धारण कर लिया। हम लोगों के दफ्तर में काम कर पैंतीस रुपया पाने के अलावा दो-चार पत्र-पत्रिकाओं में छोटा-मोटा काम कर तीस-चालीस रुपया अलग से कमा लेते थे, लेकिन कलकत्ता जैसी जगह में इस आय से तीन-तीन प्राणियों की गृहस्थी चलाना मुश्किल है। यही वजह है कि बीच-बीच में घर पर कह आते, "अजी, सुनती हो, आज मुझे लौटने में देर होगी। तुम लोग खाना खा लेना, मैं कैन्टीन में खा लूंगा।" इसी तरह महीने में पन्द्रह दिन भूखे रहकर किसी तरह गृहस्थी चलाते थे और दफ्तर आकर बनमाली के केबिन में दो प्याली चाय पीते थे।

अभाव से पीड़ित आदमी यह भूल जाता है कि मेहनत करने के

वाद शरीर को आराम देना ज़रूरी है, भूख लगने पर भोजन आवश्यक है, रोगाक्रान्त होने पर दवा-दारू की ज़रूरत पड़ती है। प्रकृति के खिलाफ़ यह संघर्ष ज़्यादा दिनों तक टिक नहीं पाता। रजतदा भी इसमें सफल नहीं हो सके थे।

एक दिन दफ्तर आने पर चारों तरफ़ सन्नाटा दिखायी पड़ा, जैसे किसी को कोई मतलव न हो। व्यस्तता में डूबे अखबारों के दफ्तर में इस तरह की प्रशान्ति का भाव असह्य जैसा लगता है। क्षण-भर में ही ऐसा लगा, जैसे चारों तरफ़ विसर्जन के वाजे वज रहे हैं। दिमाग़ चकराने लगा, लेकिन अपने आपको संयत कर मैं जैसे ही दो डग आगे वढ़ा हूँगा कि वनमाली की आवाज़ सुनायी पड़ी। मैंने चिल्लाकर पुकारा, "वनमाली!"

वनमाली खड़ाऊँ खटखटाते हुए मेरे सामने आया और माथा झुका कर खड़ा हो गया।

"क्यों वनमाली, तुम खामोश क्यों हो? दफ्तर के सभी लोग कहाँ चले गये?"

वनमाली ने जवाव नहीं दिया, उसी तरह सिर झुकाये खड़ा रहा। एक वार जी में आया कि वनमाली को कसकर डाँटूँ, लेकिन ऐसा नहीं कर सका। चुपचाप खड़ा रहा। एकाएक देखा, वनमाली की आँखों से आँसू की दो वूँदें फर्श पर लुढ़क पड़ी हैं। मैंने ज्योंही उसके चेहरे की ओर देखा, उसने कहा, "वच्चू वावू, रजत वावू नहीं रहे।"

लगा, पैरों के नीचे की धरती हिल रही है। वनमाली ने कहा, "वच्चू वावू, अव आप खड़े नहीं रहिये। इतनी वेला हो चुकी, सव कुछ खत्म होने-होने पर होगा। जल्दी चले जाइये।"

किसी तरह अपने आपको घसीटते हुए, ट्राम वस पर छलांग लगाकर चढ़ते हुए जब मैं नीमतल्ला पहुँचा तो रजतदा की लाश रजत शुभ्र राख में परिणत हो चुकी थी। मिट्टी के घड़े में वारी-वारी से सभी लोग गंगा जल भर कर ले आये और रजतदा की चिता पर ढाल-ढाल कर

उनकी तमाम निशानी मिटाने लगे। वासन्ती भाभी ने घड़े से गंगाजल ढाला। नौ साल के मुन्ना ने भी।

उसके बाद !

उसके बाद वासन्ती भाभी में खासा अच्छा बदलाव आ गया। नये नाटक की नयी भूमिका में उतरने के लिए साड़ी के बदले बिना किनारे वाला सफ़ेद वस्त्र धारण किया। शंख की चूड़ी तोड़ दी, सिंदूर पोंछ लिया। हम लोगों ने निर्वाक् हो वासन्ती भाभी को अपने वसन्त को विदा करते देखा, चैत महीने की रुक्षता और समागत वैशाख की आँधी का पागलपन देखा।

उस रात एक हाथ से आँसू पोंछकर और दूसरे में क़लम थामे दूसरे दिन प्रातःकाल के लिए हमने अख़बार प्रकाशित किया। मनुष्य के जीवन में ईश्वर का सबसे बड़ा आशीर्वाद है स्नेह, प्यार, मोह-ममता, प्रेम। बीच-बीच में लगता, ईश्वर के इस दुर्लभ आशीर्वाद से संवाददाता वंचित हैं, क्योंकि ऐसा न होता तो उस रात रजतदा को चिरकाल के लिए विदा करने के बाद स्वाभाविक तौर से काम करते हुए हमने अख़बार का प्रकाशन कैसे किया ? दिमाग़ शान्त होने के बाद सोचकर देखा कि बात ऐसी नहीं है। संवाददाताओं के मन में भी स्नेह-प्यार, मोह-ममता और प्रेम वास करते हैं लेकिन हृदय के इस ऐश्वर्य को व्यक्त करने का उनके पास समय, सुयोग या सामर्थ्य कहाँ है ?

नन्दोदा और वीरेन माइती भी हम लोगों के साथ आँखमिचौनी खेलते-खेलते छिप गये थे। नौ साल तक यक्ष्मा से पीड़ित रहने के बाद नन्दोदा यादवपुर अस्पताल के प्लेटफार्म से विदा हो गये। नन्दोदा की बूढ़ी माँ के लिए घर के अन्दर आने में मौत को शायद शर्म लग रही थी। तभी तो नौ बरसों के दरमियान पहली बार अस्पताल जाने पर चौबीस घण्टा भी इन्तज़ार नहीं करना पड़ा। पाँच घण्टे तक जलते रहने के बाद उनकी देह केवड़ातल्ला महाश्मशान में पंचतत्व में विलीन हो गयी। तारादा ने कहा था, "देह इतनी सूख गयी है

जलना नहीं चाहती।"

इन स्मृतियों और चारों तरफ़ के मृत्यु के अग्रदूतों को अपने साथ ले काम करने में बीच-बीच में मुझे भय का अहसास होता था। लगता, शायद मैं भी खाँसते-खाँसते कै कर बैठूँगा, पेचिश के दर्द से छटपटाऊँगा, बेहोश हो जाऊँगा, गले से रक्त बाहर निकलेगा। हो सकता है कि आईने के सामने खड़ा न हो पाऊँ, कालिख से भरी आँखें और छाती की पसलियाँ देखकर कहीं चिहुँक न उठूँ। लगता, रजतदा की चिता पर मैं लेटा हुआ हूँ, वासन्ती भाभी की जगह मेरी स्त्री बैठी है और वासन्ती भाभी की तरह वह भी साड़ी उतार, सफ़ेद बिना किनारी का वस्त्र पहने खड़ी है, सिन्दूर पोंछ रही है, शंख की चूड़ियाँ तोड़ रही है। रात में नींद की बाँहों में खो जाता तो सपना देखता, भय और आतंक से चिल्ला उठता। पसीने से सारा शरीर लथपथ हो जाता और पसीने के स्पर्श से महसूस होता कि मृत्यु का शीतल स्पर्श आहिस्ता-आहिस्ता मुझे बेबस करता जा रहा है। नींद टूटने की थोड़ी देर बाद ही मुझे होश आता। अहसास होता कि मैं मरा नहीं हूँ, ज़िन्दा हूँ, मेरी शादी नहीं हुई है।

संवाददाता लाखों आदमी के जीवन-त्योहार के उत्साही दर्शक और समर्थक होते हैं। कोई दूसरा आदमी चुनाव जीतता है तो हम डबल कॉलम में हेडिंग देते हैं, डलहौजी स्क्वायर के लोग मँहगी भत्ते की बढ़ोत्तरी के लिए आन्दोलन करते हैं तो हम जोरदार शब्दों में उनका समर्थन कर उन्हें जीत हासिल करने में सहायता पहुँचाते हैं, नेताओं की सालगिरह पर उन्हें श्रद्धा ज्ञापित करते हैं और फूलों के जलसे की तसवीर छापते हैं। लेकिन प्रारब्ध के निष्ठुर परिहास के कारण संवाददाताओं को अपने जीवन त्योहार में आनन्द-विभोर होने का मौक़ा नहीं मिलता। फिर भी वैसा दुर्लभ अवसर अनिल और अंजलि के जीवन में आया था।

प्रेम मुग्ध आनन्द से भरे जीवन में उनका चेहरा खुशियों से दमक

उठा था। प्रभात के सूर्य के रक्तिम प्रकाश की तरह इन लोगों के प्रेम की छटा से मेरा मन भी रंगीन हो उठा था, हृदय की तंत्रियों में मीठे स्वर की झंकार बज उठी थी, नये जीवन का शुभ संकेत और दमा, पेचिश, यक्ष्मा से मुक्त निर्मल जीवन का आमंत्रण मिला था।

....मेडिकल कॉलेज के रियुनियन की कार्यवाही का संवाद लेकर लौटने के बाद रिपोर्ट लिखते वक्त अनिल को मैंने गुनगुनाते हुए पाया। चेहरे पर दबी हुई मुसकराहट, आँखों में जरा अधिक चमक। उसके मन का उद्‌गार भी मेरी दृष्टि की ओट न रह सका। दैनिक संवाद के हम लोगों के बेचलर-ब्रिगेड के तमाम सदस्य जीवन की सूखी नदी में भटक रहे थे, अकस्मात् हमें ऐसा लगा जैसे अनिल के प्राणों की गंगा में ज्वार आ गया है और पाल हवा में फड़फड़ा रहा है।

आज के डॉक्टर जिस तरह रक्त, पेशाब, खून, थूक वगैरह की जाँच किये बगैर ठीक-ठीक यह निर्णय नहीं कर पाते कि कौन-सी बीमारी है, उसी तरह बगैर इलाज किये मैं अनुभवी होमियोपैथ की तरह अनिल के 'सिम्पटम' पर ही ध्यान रखने लगा। बीमारी का ठीक-ठीक पता नहीं लगा सका, फिर भी बारीन के कान में फुसफुसाकर कहा, "शायद उसके दरवाजे पर वसन्त का आगमन हुआ है।" हमें मालूम न था कि मेडिकल कॉलेज की छात्रा अंजलि भी मृगनाभि हरिणी की तरह चंचल हो उठी। कॉलेज के डॉक्टर, प्रोफेसर और सहपाठियों के परिचित चेहरे बुझ गये थे, सगे-संबंधी और दोस्त-मित्र उसे खुशामदी दद्दू जैसे लग रहे थे। बाईस वर्ष की जीवन-परिक्रमा के बाद मिस नियोगी को एकाएक महसूस हुआ, उसने अब तक स्वयं का निरीक्षण नहीं किया है।

चंचलता बढ़ जाने के कारण अनिल के काम में थोड़ी-बहुत ढिलाई आ गयी। किसी तरह रिपोर्ट लिखकर भागने लगा। किसी-किसी

हम लोगों के जाने के वक़्त दफ्तर आकर रिपोर्ट लिखने के दौरान अंजलि का रेखाचित्र खींचने लगता और गुनगुनाकर गाने लगता—कल रात गीत मेरे मन आया, तुम न साथ थे उस क्षण मेरे""।

दो-तीन महीने के बाद लगा, अनिल की चंचलता दूर हो चुकी है और उसके जीवन में प्रशान्ति का आगमन हुआ है। वारीन ने कहा, "बादल छँट गये लेकिन पानी नहीं बरसा।" हम में से किसी ने यह नहीं सोचा था कि बारिश की तेज़ झड़ी अनिल के जीवन की सारी थकावट बहाकर ले गयी है और उसके जीवन के रूखे प्रान्तर में हरयाली का मेला लग गया है।

तीनेक साल बाद हम भूल ही चुके थे कि अनिल के जीवन में किसी दिन एकाएक ज्वार आया था, उसका मन रंगीन हो उठा था और कण्ठ से गीत के बोल मुखर हुए थे।

सिलीगुड़ी से जीप से दार्जलिंग जाने के दौरान एक दुर्घटना घटने के कारण मेरी जाँघ की हड्डी टूट गयी थी और मैं सिलीगुड़ी अस्पताल में पड़ा था। पलस्तर करने के बाद मुझे वन्दी बनाकर अस्पताल के केविन में रखा गया था। अस्पताल की क़ैद से छुटकारा पाने में तव कुछ विलंब था। हरिदा को पत्र लिखकर छुट्टी की अवधि और दो सप्ताह तक बढ़ाने का अनुरोध कर चुका था। भाभी की वहन का भी पत्र आठ-दस दिनों से नहीं मिला था। मैं वेकरारी के साथ खत का इन्तज़ार कर रहा था।

सिस्टर जैसे ही कमरे के अन्दर आयी, मैंने पूछा, "मेरी कोई चिट्ठी नहीं है?"

एक दिन मेरे विस्तर की चादर वदलने के वक़्त सिस्टर को मेरी भाभी के वहन का एक खत मिला था, तोशक के नीचे कुछ नीले लिफ़ाफ़े भी। उसे पता था कि मैं उसी तरह के नीले वज़नदार लिफ़ाफ़े की उम्मीद में दिन गिन रहा हूँ।

उस दिन सवेरे की डाक से एक भी खत न आने की वजह से मैं

एक खूबसूरत पेंटिंग रखने में मुझे कोई कठिनाई नहीं हो रही है। आप लोगों के हाथ से मैं अनिल को छीन लेना नहीं चाहती, बल्कि आप जैसे पाँच व्यक्तियों के बीच स्थान पाना चाहती हूँ। जीवन का सब कुछ होम करने पर भी जिन्हें कुछ नहीं मिला वैसे ही लोगों की पत्नी और बाल-बच्चों की सेवा करते हुए मैं आप लोगों के समक्ष एक बहन के रूप में खड़ी होना चाहती हूँ। उस अधिकार से मुझे वंचित होना पड़ेगा ?

दूसरे दिन मनमोहनदा के एक पत्र से पता चला कि अंजलि ने प्रैक्टिस करना शुरू कर दिया है। मनमोहनदा के छोटे लड़के का अंजलि ने इलाज किया है और तीन दिन के दौरान सेहत में कुछ सुधार आया है।

शाम के बाद जब डॉक्टर बोस राउण्ड पर आये तो उनका हाथ थाम कर मैंने कहा, "प्लीज, अब मुझे रिहाकर दीजिये। डॉक्टर बोस ने कहा, "एक्स-रे प्लेट में कोई खामी दिखायी नहीं पड़ी। लगता है, ठीक हो गया है।"

दो दिन बाद पलस्तर काटा गया तो बगैर विलंब किये मैं नार्थ बेंगाल एक्सप्रेस में जाकर बैठ गया।

ट्रेन के डिब्बे में बैठने पर इंजन की बेसुरी आवाज मेरे कानों में तैरती हुई नहीं आयी। लगा, नौबतखाने में शहनाई बज रही है, अनिल के माथे पर मोर है, अंजलि बनारसी साड़ी पहने है और हमलोग बरात में शरीक हो रहे हैं।"' बगल के पेड़-पौधे और पत्तों पर धुंधलका छा गया तो लगा, रजतदा, नन्दीदा भी दौड़े-दौड़े आ रहे हैं और तमाम बुराइयाँ आतंक में आकर हमारे आसपास से दूर भागी जा रही हैं। ऐसा महसूस हुआ जैसे अँधेरे से कोई हमें प्रकाश की ओर जाने का संकेत कर रहा है, नये जीवन के आनन्द-दिवस का निमंत्रण-पत्र हमारे बीच बाँट रहा है। मेरे कण्ठ से अपने आप छलक पड़ा—

गों के जाने के वक़्त दफ्तर आकर रिपोर्ट लिखने के दौरान अंजलि खाचित्र खींचने लगता और गुनगुनाकर गाने लगता—कल रात मेरे मन आया, तुम न साथ थे उस क्षण मेरे....।

दो-तीन महीने के वाद लगा, अनिल की चंचलता दूर हो चुकी है उसके जीवन में प्रशान्ति का आगमन हुआ है। वारीन ने कहा, दल छँट गये लेकिन पानी नहीं बरसा।" हम में से किसी ने यह हीं सोचा था कि वारिश की तेज़ झड़ी अनिल के जीवन की सारी कावट वहाकर ले गयी है और उसके जीवन के रूखे प्रान्तर में हरयाली ा मेला लग गया है।

तीनेक साल बाद हम भूल ही चुके थे कि अनिल के जीवन में किसी दिन एकाएक ज्वार आया था, उसका मन रंगीन हो उठा था और कण्ठ से गीत के वोल मुखर हुए थे।

सिलीगुड़ी से जीप से दार्जलिंग जाने के दौरान एक दुर्घटना घटने के कारण मेरी जाँघ की हड्डी टूट गयी थी और मैं सिलीगुड़ी अस्पताल में पड़ा था। पलस्तर करने के वाद मुझे वन्दी बनाकर अस्पताल के केविन में रखा गया था। अस्पताल की क़ैद से छुटकारा पाने में तव कुछ विलंव था। हरिदा को पत्र लिखकर छुट्टी की अवधि और दो सप्ताह तक वढ़ाने का अनुरोध कर चुका था। भाभी की वहन का भी पत्र आठ-दस दिनों से नहीं मिला था। मैं वेकरारी के साथ खत का इन्तज़ार कर रहा था।

सिस्टर जैसे ही कमरे के अन्दर आयी, मैंने पूछा, "मेरी कोई चिट्ठी नहीं है?"

एक दिन मेरे विस्तर की चादर वदलने के वक़्त सिस्टर को मेरी भाभी के वहन का एक खत मिला था, तोशक के नीचे कुछ नीले लिफ़ा भी। उसे पता था कि मैं उसी तरह के नीले वज़नदार लिफ़ाफ़े उम्मीद में दिन गिन रहा हूँ।

उस दिन सवेरे की डाक से एक भी खत न आने की वजह से

में खो गया था लेकिन वह फिर मिल गयी है।

बाद में वह कितनी ही बार अकेले में मिली, इसकी कोई गिनती नही। इतना अधिक मिलने-जुलने के बाद मेरे उच्छ्वास में जितनी ही वृद्धि आयी है। वह उतनी ही प्रशान्त होकर मुझमें समाहित होती गयी है। बेलुड़मठ से नाव से दक्षिणेश्वर जाने के समय मेरे हाथ को नचाती हुई बोली, "उच्छ्वास और आनन्द एक नहीं हैं। नील, तुम पुरुष हो, उच्छ्वास दिखा सकते हो मगर मुझे यह अधिकार नहीं। मैं मन ही मन आनन्द का अनुभव करती हूँ और अगले दिन का सपना देखती हूँ।"

गंगा के दोनों तीर से गोधूलि के शंख की ध्वनि हमारे कानों में तैरती हुई आयी। बेलुड़मठ और दक्षिणेश्वर मन्दिर में बत्तियाँ जल उठीं। गोधूलि वेला के अन्तिम प्रकाश में दूर के पंछी लौटकर अपने-अपने बसेरे में चले गये और उस रोशनी में मैंने एक बार अंजलि को अच्छी तरह देखा। उसके कपाल से बाल की लटें हटा दी, उसे अपने निकट खींच लिया।

"अंजु, तुम कौन-सा सपना देखती हो ?"

वह हँस दी, जवाब नहीं दिया। नाव बाली पुल के नीचे आयी, शाम का इकहरा अँधेरा दोहरा हो गया। अंजु बोली, "नील, आँख बन्द करो।"

"क्यों ?"

"करो न।"

क्या करूँ, आँख बन्द करना पड़ा। जानते हो बच्चू, अंजु ने क्या किया ? उसने मेरे पैर छूकर प्रणाम किया। मैं चिहुँक उठा। देखा, वह गले में आंचल लपेटे माथा झुकाये बैठी है। मैंने जैसे ही उसका मुखड़ा उठाया, उसने असहाय की तरह मेरी ओर देखा और मेरे सीने पर माथा टेक दिया। "नील, मुझे फटकारो नहीं, कैफ़ियत नहीं माँगो।"

"यह तो समझा, लेकिन एकाएक प्रणाम क्यों किया ?"

गंगा कल-कल ध्वनि करती हुई प्रवाहित हो रही थी, उसकी

की ध्वनि से तुक मिलाते हुए उसने कहा, "आमतौर से धार्मिक
ठान पर ही प्रणाम करने का रिवाज़ है। वह सुयोग मेरे जीवन में
ा नहीं, लेकिन उसकी प्रतीक्षा में बैठी रहूँ, ऐसा काम कर मैं अपने
को छलूँगी नहीं।"

अंजु का सपना दिन के प्रकाश की तरह मेरे समक्ष स्पष्ट हो गया।
के बाद एक ही क्षण में मेरा तमाम उच्छ्वास हवा हो गया। अगले
न के लिए मैं स्वयं को प्रस्तुत करने में लग गया।

तुम्हें तो मालूम ही है कि पिता जी की मृत्यु के बाद से माँ की सेहत
बिगड़ी हुई है। पोस्ट ऑफ़िस के पासबुक और कुछ गहनों को संबल
बनाकर यथासंभव माँ का इलाज कराता रहा। माँ की सेहत में सुधार
न आने के कारण मैं स्वयं को अपराधी महसूस कर रहा था। अंजु को
एक दिन अपने डेरे पर ले आया।

"माँ, आप डॉक्टर अंजलि नियो ी हैं, तुम्हें देखने आयी हैं।"

माँ के सामने अंजु ने मुझसे कहा; छि: छि: छि:, माँ से आप झूठ
बोलते हैं?" उसके बाद माँ को ओर मुखातिब होकर बोली, "नहीं माँ,
मैं डॉक्टर नहीं, मेडिकल की छात्रा हूँ। अबकी फ़ाइनल इम्तिहान दूँगी।"

अंजु की बात पर माँ चौंक उठी थी, मन ही मन खुश भी हुई थी।
अंजु को साथ ले माँ कमरे के अन्दर चली गयी, लेकिन कुछ देर बाद
दरवाज़ा बन्द कर दिया तो मुझे डर लगने लगा। बहुत देर बाद दोनों
कमरे के बाहर आयीं।

माँ को प्रणाम कर अंजु वहाँ से जाने लगी, माँ ने लाड़ से उसे हृदय
से लगाकर विदा किया।

अंजु को बस पर बिठाकर ज्यों ही मैं घर लौटा, माँ ने मुझे आश्च
में डाल दिया। इतने दिनों से घुलने-मिलने के बाद भी अंजु के इतिहा
से मैं परिचित नहीं हो सका था, लेकिन माँ को पहली मुलाकात में
इसका पता चल गया कि मातृहीन अंजु के लिए जब सौतेली माँ
जुल्म बरदाश्त के बाहर हो गया तो वह बुआ के पास चली आयी।

माँ से बातचीत करने के बाद अंजु और अधिक गंभीर हो गयी। कुछ दिन के बाद ही कहा, "देखो नील, जीवन से खिलवाड़ नहीं किया जा सकता है। न तो तुम अपने जीवन से खिलवाड़ करो और न ही मैं करूँगी। हर क्षण का सदुपयोग करते हुए भविष्य में सुन्दर जीवन का निर्माण करने की कोशिश करो। प्रतिज्ञा करो कि माँ को सुखी बनाओगे।"

एम० बी० का फ़ाइनल इम्तिहान देने के तीन महीने पहले से ही अंजु ने मुझसे मिलना-जुलना बन्द कर दिया। पहले पहल जब यह प्रस्ताव सुना तो मैंने कहा था, "तुम पागल हो गयी हो? ती—न महीने तक मिलना-जुलना बन्द रहेगा?"

"हाँ।" उसके बाद कहा था, तुम क्या यह चाहते कि तुम्हारे साथ चक्कर काटती रहूँ और फाइनल में फेल कर जाऊँ?

"नहीं, ऐसा नहीं चाहता, तब हाँ—"

"तब और कुछ नहीं।"

अंजु तीन महीने तक माँ से लुक छिप कर मिलती रही परन्तु मुझसे एक दिन भी नहीं मिली। परीक्षा के अन्तिम दिन जुरिसप्रुडेन्स देकर सिनेट हॉल से नीचे आते ही मुझसे कहा, "चलो, जरा चाय पी आयें। दिलकुशा केबिन के अन्दर जाते ही अंजु ने मुझे प्रणाम किया। कहा, "अशीर्वाद दो कि परीक्षाफल अच्छा रहे।"

फ़िश फ्राइ के आखिरी टुकड़े को मुँह में डालकर बोली, "बहुत दिनों के बाद तुम्हें अपने निकट पा रही हूँ। छुरी-काँटे को नीचे रख अपना सिर मेरे सीने पर आहिस्ता से रखती हुई बोली, "अब किसी दिन तुमसे अलग नहीं रहूँगी।"

मैं जवाब नहीं दे सका, खुशियों से मेरी जबान गूँगी हो गयी थी।

अनिल का खत पढ़ने के दौरान प्रसन्नता के कारण मैं अपनी कैदी जैसी हालत भुला बैठा। काँच की सलाख के अन्तराल से तराई का जंगल पारकर हिमालय पहुँच गया। लगा, अंजलि ने पार्वती का रूप धारण

... लिखा है और मुझसे मिलने में सकुचा रही है।

अनिल ने अपने लंबे पत्र के अन्त में सूचित किया है, "मैंने यह ...पा भी नहीं था कि माँ को सब कुछ मालूम हो गया है। लेकिन बाद पता चला कि जिस माँ के गर्भ से मैंने जन्म लिया है, उनसे कोई बात छिपाकर रखना असंभव है।...माँ हम दोनों को बगैर बताये अंजु के ...फा और बुआ के पास गयी और सब कुछ ठीक कर आयी। कब [illegible] की दुकान पर गयी और बिछुआ-हार बुलाकर अंजु के लिए गहने बनवा-कर ले आयी, इसका भी मुझे पता नहीं चला। यही नहीं, सुनील को भेजकर एक बोर्ड पर लिखा लायी है—डाक्टर (मिसेज) अंजलि बैनर्जी, एम० बी०। मुझे कोई जानकारी नहीं थी, तभी से सबकी नजर बचा-कर मुझे एक दिन सारी चीजें दिखायीं।

बातचीत के दौरान एक दिन मैंने अंजु को अपने दफ्तर के बारे में सब कुछ बताया था—अपनी और अपने सहकर्मियों के अभाव, दुख-दारि-द्र्य की कहानी सुनायी थी। सब कुछ सुनने के बाद अंजु अपने एक हाथ से आँख के आँसू पोंछती हुई बोली, "इन लोगों के लिए कुछ मत करो, ...तुम्हें चैन से सोने दो। मैं डॉक्टर बन जाऊँगी तो इन लोगों के दफ्तर ... तब किसी [illegible] को बिना [illegible] नहीं होने दूँगी।" [illegible] ... तुम्हें पच्चीस-तीस रुपया माहवार मिल रहा है, इसी के लिए कुछ न करो। जीवन आज के लिए नहीं, आनेवाले कल के लिए है। ... अलावा यह भूल नहीं जाना कि दुख-विपत्तियों के बीच [illegible] निर्माण होता है ... [illegible] तनकर खड़े होने से ही मनुष्य के [illegible] ...

भाई बच्चू, अंजु को घर लाने के पहले तुम्हारी [illegible] ... मैंने जिस जीवन को ... तुम्हारी [illegible] और सहयोग के बल पर मैंने ... एकान्त मन से [illegible] ... की थी, उसमें किसी के दुख-सुख की ... लिए तुम्हारी अनुभूति अत्यन्त आवश्यक है।

अनिल के पत्र के साथ अंजलि का भी एक छोटा-सा ...

"बाबूजी, आपके बारे में इतना कुछ [illegible] ... आप को मन [illegible] ...

एक खूबसूरत पेंटिंग रखने में मुझे कोई कठिनाई नहीं हो रही है। आप लोगों के हाथ से मैं अनिल को छीन लेना नहीं चाहती, बल्कि आप जैसे पाँच व्यक्तियों के बीच स्थान पाना चाहती हूँ। जीवन का सब कुछ होम करने पर भी जिन्हें कुछ नहीं मिला वैसे ही लोगों की पत्नी और बाल-बच्चों की सेवा करते हुए मैं आप लोगों के समक्ष एक बहन के रूप में खड़ी होना चाहती हूँ। उस अधिकार से मुझे वंचित होना पड़ेगा?

दूसरे दिन मनमोहनदा के एक पत्र से पता चला कि अंजलि ने प्रैक्टिस करना शुरू कर दिया है। मनमोहनदा के छोटे लड़के का अंजलि ने इलाज किया है और तीन दिन के दौरान सेहत में कुछ सुधार आया है।

शाम के बाद जब डॉक्टर बोस राउण्ड पर आये तो उनका हाथ थाम कर मैंने कहा, "प्लीज, अब मुझे रिहाकर दीजिये। डॉक्टर बोस ने कहा, "एक्स-रे प्लेट में कोई खामी दिखायी नहीं पड़ी। लगता है, ठीक हो गया है।"

दो दिन बाद पलस्तर काटा गया तो बगैर विलंब किये मैं नार्थ बँगाल एक्सप्रेस में जाकर बैठ गया।

ट्रेन के डिब्बे में बैठने पर इंजन की बेसुरी आवाज मेरे कानों में तैरती हुई नहीं आयी। लगा, नौबतखाने में शहनाई बज रही है, अनिल के माथे पर मोर है, अंजलि बनारसी साड़ी पहने है और हमलोग बरात में शरीक हो रहे हैं।... बगल के पेड़-पौधे और पत्तों पर धुंधलका छा गया तो लगा, रजतदा, नन्दीदा भी दौड़े-दौड़े आ रहे हैं और तमाम बुराइयाँ आतंक में आकर हमारे आसपास से दूर भागी जा रही हैं। ऐसा महसूस हुआ जैसे अँधेरे से कोई हमें प्रकाश की ओर जाने का संकेत कर रहा है, नये जीवन के आनन्द-दिवस का निमंत्रण-पत्र हमारे बीच बाँट रहा है। मेरे कण्ठ से अपने आप छलक पड़ा—

लिया है और मुझसे मिलने में सकुचा रही है।
अनिल ने अपने लंबे पत्र के अन्त में सूचित किया है, "मैंने यह
ा भी नहीं था कि माँ को सब कुछ मालूम हो गया है। लेकिन बाद
ता चला कि जिस माँ के गर्भ से मैंने जन्म लिया है, उनसे कोई बात
ाकर रखना असंभव है।...माँ हम दोनों को बगैर जताये अंजु के
ा और बुआ के पास गयी और सब कुछ ठीक कर आयी। कब नाटु
दुकान पर गयी और बिछुआ-हार तुड़ाकर अंजु के लिए गहने बनवा-
र ले आयी, इसका भी मुझे पता नहीं चला। यही नहीं, सुनील को
जकर एक बोर्ड पर लिखा लायी है—डाक्टर (मिसेज) अंजलि बैनर्जी,
म० बी०। मुझे कोई जानकारी नहीं थी, मुन्नी से सबकी नजर बचा-
र मुझे एक दिन सारी चीजें दिखायीं।

बातचीत के दौरान एक दिन मैंने अंजु को अपने दफ्तर के बारे में
सब कुछ बताया था—अपनी और अपने सहकर्मियों के अभाव, दुख-दारि-
द्रय की कहानी सुनायी थी। सब कुछ सुनने के बाद अंजु अपने एक हाथ
के आँसू पोंछती हुई बोली, "उन लोगों के लिए दुख मत करो,
चैन से सोने दो। मैं डॉक्टर बन जाऊँगी तो तुम लोगों के दफ्तर
किसी रजतदा को विदा नहीं होने दूँगी।" ज़रा रुककर कहा था,
"तुम्हें पच्चीस-तीस रुपया माहवार मिल रहा है, इसके लिए दुख नहीं
करो। जीवन आज के लिए नहीं, आनेवाले कल के लिए है। इसके
अलावा यह भूल नहीं जाना कि दुख-विपत्तियों के दिनों में संकट के
सामने तनकर खड़े होने से ही मनुष्य के भाग्य का निर्माण होता है।"

'भाई बच्चू, अंजु को घर लाने के पहले तुम्हारी अनुमति चाहता हूँ।
तुम्हारी शुभेच्छा और सहयोग के बल पर मैंने जिस जीवन की शुरुआत
की थी, उसमें किसी के सुख-दुख को एकान्त रूप से आत्मसात करने के
लिए तुम्हारी अनुमति अत्यन्त आवश्यक है।

अनिल के पत्र के साथ अंजलि का भी एक छोटा-सा पत्र था।
"बच्चूदा, आपके बारे में इतना कुछ सुन चुकी हूँ कि मन की गैलरी में